Clinical and Therapeutic Nutrition
Clinical and Therapeutic Nutrition
<table>
<thead>
<tr>
<th>पाठ्यक्रम संप्रदाय</th>
<th>पाठ्यक्रम समावेश</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सुश्री सृष्टि, पूर्व अकादमिक प्रामाण्यदाता, खास एवं पोषण विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हद्दानी</td>
<td>डॉ. के. गीता सहायक प्रायोगिक इंजीनियर प्रोफेसर डॉ. गुरू विजय विभाग, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. महिला गहलोत प्रोफेसर, वन्य एवं पोषण विभाग, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td>डॉ. छविबाई शाहक प्रायोगिक प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. अराधना विभाग प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td>डॉ. लोहितका अभिनव शाहक प्रायोगिक प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. गोविन्दा महावीर प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td>डॉ. प्रियाबाई अकादमिक प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>इकाई लेखन</th>
<th>इकाई संख्या</th>
<th>इकाई लेखन</th>
<th>इकाई संख्या</th>
<th>इकाई लेखन</th>
<th>इकाई संख्या</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सुश्री सृष्टि, पूर्व अकादमिक प्रामाण्यदाता, खास एवं पोषण विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हद्दानी</td>
<td>1, 2, 3</td>
<td>डॉ. के. गीता सहायक प्रायोगिक इंजीनियर प्रोफेसर डॉ. गुरू विजय विभाग, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. महिला गहलोत प्रोफेसर, वन्य एवं पोषण विभाग, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td>4, 6</td>
<td>डॉ. छविबाई शाहक प्रायोगिक प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. अराधना विभाग प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td>5, 9, 15</td>
<td>डॉ. गोविन्दा महावीर प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>डॉ. प्रियाबाई अकादमिक प्रोफेसर, गुरू विजय विभाग इंदुर्गा विद्यालय राजकीय महिला स्नातकोत्तर मानविक महाविद्यालय हद्दानी, उत्तराखण्ड</td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

**ISBN:** समस्त लेखों/पाठों से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद के लिए जुरिस्डिक्षन हद्दानी (नेनीताल) होगा।

**कॉपीराइट:** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय **प्रकाशन वर्ष:** 2020

**संस्थापक:** सीमित वित्तपंच हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति **प्रकाशक:** एम..पी.डी.10, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हद्दानी
**उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हद्दानी- 263139 (नेनीताल)**
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण
Clinical and Therapeutic Nutrition
MAHS-06

<table>
<thead>
<tr>
<th>खण्ड</th>
<th>इकाई</th>
<th>पृष्ठ संख्या</th>
</tr>
</thead>
</table>
| 1 | जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में आहार | इकाई 1: आहार नियोजन की मूल अवधारणा 2-19  
इकाई 2: गर्भावस्था व धातीवस्था में आहार 20- 46  
इकाई 3: शैवावस्था में आहार 47-67  
इकाई 4: शालापूर्व बालकों एवं बुद्धावस्थी बालकों में पोषण 68-92  
इकाई 5: किशोरवस्था एवं प्रौढ़वस्था में पोषण 93- 108  
इकाई 6: बुद्धावस्था में पोषण 109- 124 |
| 2 | उपचारात्मक पोषण एवं आहार चिकित्सा - I | इकाई 7: उपचारात्मक आहार 126- 146  
इकाई 8: जटिलात्मक रोगों में आहार 147- 173  
इकाई 9: हृदय रोगों में आहार 174-186  
इकाई 10: यकृत और अन्न्याशय के रोगों में आहार 187- 208 |
| 3 | उपचारात्मक पोषण एवं आहार चिकित्सा - II | इकाई 11: मधुमेह में आहार 210- 227  
इकाई 12: गुर्दे के विकारों में आहार 228- 245  
इकाई 13: शारीरिक भार प्रबंध हेतु पोषण एवं देखभाल 246- 269  
इकाई 14: ज्वर तथा कैंसर की स्थिति में आहार 270- 298  
इकाई 15: अन्य अवस्थाओं में आहार 299- 312 |
खण्ड 1:
जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में आहार नियोजन
इकाई 1: आहार नियोजन की मूल अवधारणा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 आहार नियोजन से अभिप्राय
1.4 आहार नियोजन की प्रक्रिया
1.5 आहार आयोजन के लाभ
1.6 आहार नियोजन को प्रभावित करने वाले कारक
1.7 आहार नियोजन के सिद्धांत
1.8 आहार नियोजन करते समय ध्यान देने योग्य बातें
1.9 सारांश
1.10 पारिभाषिक शब्दावली
1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.13 निर्देशात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

निरोगी रहने के लिए उत्तम पोषण आवश्यक है। उत्तम पोषण की प्राप्ति हेतु आहार में सभी पौष्टिक तत्वों का उचित मात्रा एवं अनुपात में रहना बेहद जरूरी है। कामोहाइड्रेट जहाँ ऊर्जा प्रदान करता है, वहीं प्रोटीन शरीर के निर्माणात्मक कार्यों को सम्पन्न करता है। विटामिन एवं खनिज लवण सुरक्षात्मक एवं निर्माणात्मक कार्य करते हैं। पौष्टिक तत्वों की अधिकता व कमी के होने पर उत्तम स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। इसलिए व्यक्ति का भोजन हर देरी में सत्तुलित एवं पौष्टिक होना चाहिए।

सत्तुलित आहार के निर्माण के लिए आहार नियोजन करना आवश्यक है। व्यक्ति को उचित स्वास्थ्य हेतु उम्र, वजन, क्रियाशीलता व शारीरिक अवस्था के अनुसार आहार दिया जाता है। परन्तु एक व्यक्ति के लिए एक आहार जो पूर्णतः पौष्टिक एवं सत्तुलित होगा, वही आहार दूसरे व्यक्ति के लिए असत्तुलित हो सकता है। इसका कारण यह है कि परिवार में सदस्यों की उम्र, लिंग, विकास अवस्था, क्रियाशीलता आदि एक समान नहीं होते। अतः एक अच्छे आहार नियोजन द्वारा समृद्ध
नैदाकिक एवं उपचारात्मक पोषण

परिवार को एक सत्तुलित भोजन प्रदान किया जा सकता है जो उन्हें स्वस्थ व निरोगी बनाए रखने में सहायक सिद्ध होता है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानेंगे:

• आहार नियोजन से अभिप्राय;
• आहार नियोजन की प्रक्रिया;
• आहार आयोजन के लाभ;
• आहार नियोजन को प्रभावित करने वाले कारक;
• आहार नियोजन के सिद्धांत; एवं
• आहार नियोजन करते समय ध्यान देने योग्य बातें।

1.3 आहार नियोजन से अभिप्राय

सभी भोज्य समूह के भोज्य पदार्थों की मात्रा को आहार में इस तरह से सम्मिलित करना जिससे कि परिवार के सभी सदस्यों को सभी पौष्टिक तत्त्व पर्याप्त मात्रा में मिल सकें तथा वे स्वस्थ एवं निरोगी रहकर अपने-अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वाह पूर्ण कुशलता से कर सकें, आहार नियोजन कहलाता है।

आहार नियोजन के द्वारा गुणित उपयुक्त भोजन की व्यवस्था सीमित साधनों (समय, धन, शक्ति) के अन्तर्गत ही कर सकती है। इससे परिवार के आय के अनुसार ही पौष्टिक भोजन व्यवस्था सुगम तरीके से समझ ले हो जाती है।

1.4 आहार नियोजन की प्रक्रिया

एक औसत परिवार के लिए आहार आयोजन की प्रक्रिया निम्न बिंदुओं पर आधारित होनी चाहिए:

• आहार आयोजन पूरे दिन (24 घंटे) को एक इकाई मानकर किया जाना चाहिए।
• एक दिन के 6 आहार (3 मुख्य आहार तथा 3 अतिरिक्त आहार) के लिए एक साथ आहार नियोजन किया जाना चाहिए।
• आहार नियोजन प्रातः 6-7 बजे से शुरू करके रात्रि के 8:30-9:30 बजे के मध्य होना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण  

• परिवार के सभी सदस्यों की आयु, लिंग, अवस्था, क्रियाशीलता आदि के आधार पर पोषित तत्वों की मांग के अनुसार भोज्य पदार्थों की आवश्यक मात्रा का ज्ञान होना चाहिए।

• भोजन के सभी भोज्य समूहों (अनाज, दाल, हरी पत्तेदार सब्जियाँ व अन्य सब्जियाँ, माँस-मछली, पी, तेल, गुड़, शाककर, फल, दूध आदि) के अनुसार आहार नियोजन होना चाहिए।

• एक वर्ष तक के शिशु को उपभोक्ता इकाई में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए।

• आर्थिक स्थिति के अनुरूप ही आहार नियोजन होना चाहिए ताकि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति में असन्तुलन न हो।

• आहार नियोजन करते समय सर्वप्रथम गृहिणी को भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (ICMR) द्वारा विभिन्न, आयु, लिंग एवं कार्यों के अनुसार पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा की तात्कालिका के द्वारा अपने परिवार के विभिन्न सदस्यों की प्रतिदिन की पोषण समावधी आवश्यकताएं ज्ञात करनी आवश्यक हैं।

• आहार में पीटिक्टा बढ़ाने के लिए प्रत्येक खाद्य समूह से कम से कम एक खाद्य पदार्थ शामिल करना आवश्यक है। इससे परिवार को सभी पोषक तत्व उचित अनुपात में सन्तुलित रूप से प्राप्त हो सकते हैं।

1.5 आहार आयोजन के लाभ  

आहार आयोजन एक मानसिक प्रक्रिया है जिसका मुख्य उद्देश्य परिवार के समस्त सदस्यों को उचित पोषण देना है। इसके लाभ निम्नलिखित हैं- 

• परिवार के प्रत्येक सदस्य को उसकी शरीर की मांग के अनुसार सन्तुलित आहार की पूर्ति करना जिससे वे शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ रहें।

• अन्य आहार नियोजन से समय की बचत होती है।

• कम समय में अधिक काम किया जा सकता है तथा पूर्ण योजना के कारण शक्ति की बचत होती है।

• आहार नियोजन से धन की भी बचत होती है। इसके द्वारा खाद्य बजट बहुत अच्छी तरह व्यवस्थित रखा जा सकता है।
• परिवार में प्रत्येक सदस्य की रुचि का ध्यान रखा जा सकता है। भोजन के स्वाद, रंग-रूप तथा पकाने की विधियों में विभिन्नता सदस्यों की भूमि बढ़ाती है तथा भोजन अधिक चाव से खाया जाता है।
• भोज्य पदार्थों का दोहारा नहीं होता इससे भोजन में उदासीनता नहीं होती।
• विशेष विकास अवस्था से गुजरने वाले परिवार के सदस्य जैसे गर्भवती, धात्रीवती, किशोरवती आदि की उचित देखभाल आसान हो जाती है।
• आहार नियोजन में सब्जी, फल आदि की खरीदारी सरल व जल्दी हो जाती है।
• भोज्य पदार्थ में पौष्टिक मूल्य मालूम रहने से भोजन के चुनाव में कठिनाई नहीं होती है, साथ ही भोजन में विविधता लाया जा सकता है।
• जिन परिवारों में घी, दूध, अण्डा, दही आदि भोज्य पदार्थ आधिक विपन्नता के कारण नहीं खाया जाता है, वहाँ आहार नियोजन के द्वारा विटामिन एवं खनिज तत्वों की पूर्ति सम्पन्न रूप से पूर्ति होती है। अतः आहार नियोजन में सुबह या दोपहर की रुचि का ध्यान रखकर भोजन तैयार कर सकती है।
• आहार नियोजन ने केवल घर में ही आवश्यक है बल्कि इसका उपयोग छात्रावास, होटल, कैन्टीन, अस्पताल, वायुयान भोजन सेवा, रेलवे कैन्टीन आदि स्थानों में भी किया जा सकता है।

1.6 आहार नियोजन को प्रभावित करने वाले कारक
आहार नियोजन द्वारा विभिन्न तरीकों से भोजन में बदलाव लाकर पौष्टिकता सुनिश्चित की जाती है जिससे परिवार के सदस्यों की आवश्यकता पूर्ति हो। प्रत्येक परिवार में अनेक ऐसे कारक होते हैं जो आहार नियोजन को प्रभावित करते हैं। अगर इन कारकों को ध्यान में न रखा जाये तो आहार
नैदािनक एवं उपचारान्वयन

नियोजन का उद्देश्य निर्देशक रह जाता है। अतः गृहणी को सावधानी पूर्वक सभी कारकों की जानकारी होनी आवश्यक है। आहार नियोजन को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक निम्न हैं:

1. आयु- प्रत्येक व्यक्ति की पोषणीय आवश्यकताएं उसकी आयु पर निर्भर करती हैं। परिवार में हर आयु वर्ग के सदस्य होते हैं। विभिन्न आयु के अनुसार पोषण आवश्यकताएं भिन्न पायी जाती हैं। जैसे बच्चों को व्यस्तों की अपेक्षा अधिक शरीर निर्माणक पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता होती है। बच्चे वृद्धि एवं विकास की अवस्था में होते हैं। व्यस्तों में वृद्धि एवं विकास पूर्ण हो चुका होता है। उन्हें शरीर में हो रही टूट-फुट को पूर्ण करने के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। आयु के कारण उन्हें अधिक सुपारी व साधारण भोजन की आवश्यकता होती है। 

2. लंबाई- आहार नियोजन में लंबाई भी आवश्यक कारक है। पुरुष तथा महिलाएं की पोषणीय आवश्यकताएं भिन्न होती हैं। पुरुष व महिलाओं की लम्बाई व भर से लगभग अलग होते हैं। पुरुषों में मांसपेशियों की मात्रा अधिक होती है। इसके अलावा साधारणतः पुरुष अधिक क्रियाशील होते हैं। इसके अलावा उनकी ऊंचाई और विकास परिस्थितियों जैसे गर्भवती, धातुबद्ध आदि से अलग पौष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है। बालक व महिलाओं को दैनिक आवश्यकताएं भी भिन्न होती हैं। पुरुष व महिलाओं की बढ़ती ऊंचाई शरीर में मांसपेशियों के कारण भी बढ़ाती है। इसी कारण उनके रख रखाव व टूट फुट हेतु पोषण भी अधिक भर में चाहिए होता है। इसी कारण उनके रख रखाव व टूट फुट हेतु वा अधिक व्याहार करने वाले व्यक्तियों के शरीर में मांसपेशियों की मात्रा भी बढ़ जाती है। इसी तरह क्षितिज या अधिक व्याहार करने वाले व्यक्तियों के शरीर में मांसपेशियों की मात्रा भी बढ़ जाती है।

3. वृक्षारोपण अकार- शरीर के आकार से अनुसार पोषण आवश्यकताएं भिन्न होती हैं। लम्बे चोटियों को दुबले-पतले व्यक्ति की अपेक्षा अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए एक 5 फुट 5 इंच के व्यक्ति की अपेक्षा 6 फुट के व्यक्ति की पोषक तत्वों की मांग अधिक होगी। लम्बाई चोटियों बढ़ने के साथ ही शरीर में कोशिकाओं की मात्रा भी बढ़ जाती है। इसी कारण उनके रख रखाव व टूट-फुट हेतु पोषण भी अधिक मात्रा में चाहिए होता है। इसी तरह क्षितिज या अधिक व्याहार करने वाले व्यक्तियों के शरीर में मांसपेशियों की मात्रा में विकसित हो जाती है। ऐसे व्यक्तियों को सामान्य व्यक्तियों की तुलना में अधिक मात्रा में प्रोटीन व विटामिन तथा खाने खिने लवणों से परिपूर्ण आहार की आवश्यकता होती है।

4. **व्यवसाय- प्रायोगिक व्यक्ति का व्यवसाय अलग-अलग होता है। कोई शारीरिक श्रम अधिक करता है तो कोई मानसिक श्रम अधिक करता है। क्रियाशीलता के अनुसार व्यक्ति अल्प क्रियाशील, मध्यम क्रियाशील और अत्यधिक क्रियाशील हो सकता है। जो व्यक्ति मुख्यतः ऑफिस में बैठकर काम करते हैं वह मानसिक श्रम में ही लिए होने के कारण अल्प क्रियाशील व्यक्ति की श्रेणी में आते हैं। ऐसे व्यक्तियों को ऊर्जा से अधिक प्रोटीन, विटामिन व खाना लवणों की अधिक आवश्यकता होती है। वहीं दूसरी ओर अत्यधिक क्रियाशीलता वाले व्यक्ति उन व्यवसायों के माने जाते हैं जहाँ शारीरिक परिश्रम अधिक होता है। ऐसे व्यक्तियों को अधिक ऊर्जा के साथ ही अधिक वसा व कार्बोहाइड्रेट की भी आवश्यकता होती है। इसको गरीब व भारी भोजन देना चाहिए जिससे अधिक देर तक तृप्ति की अनुभूति हो। क्रियाशीलता कम करने वाले व्यक्तियों को पोषक पर्यावरण सुधार सुनिश्चित करना चाहिए। क्रियाशीलता व्यक्ति के भोजन पर काफी प्रभाव डालती है। यह भोजन मूल गुण ही निर्धारित करने वाला है।

5. **परिवार की आय-** परिवार के आय अथवा अधिक दशा भी आहार नियोजन को प्रभावित करती है। सभी सदस्यों की पोषणीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सभी उपयुक्त खाद्य स्रोतों को परिवार की आय के अनुसार ही शामिल करना चाहिए। आय के अनुसार ही सस्ते व महँगे भोजन पदावरों को आहार में समयित करना सम्भव है। यह सोच गलत है कि महँगे भोजन पदावरों ही पौष्ठिक होते हैं। सस्ते भोजन पदावरों द्वारा भी उतम व पौष्ठिक भोजन तैयार किया जा सकता है। उदाहरण के लिए खाना लवणों व विटामिन की प्राप्ति हेतु टमाटर, गाजर, पालक, मूंली, पपीता, आम आदि सयाबीन, चना, मूंगफली आदि भी अधिक प्रोटीन के काफियार सयाबीज माने जाते हैं। संयरे, मौसमी महँगे होने के कारण नूनू, आहल, ठंडा, हरी मिथ्या आदि विटामिन ‘सी’ की प्राप्ति के साथ साथ साधन सिद्ध हो सकते हैं।

6. **विशेष अवसर-** विकास की गतिविधियों के अनुसार ही पोषण मांगों में वृद्धि अथवा कमी हो जाती है। बाल्यावस्था में अत्यधिक तेजी से बढ़ने के कारण शारीरिक आवश्यकताएं तीव्र होती हैं। यहीं वृद्धियावस्था में पोषणीय मांग कम होती है क्योंकि शरीर की वृद्धि रुक चुकी होती है। गर्भावस्था और धात्रीवस्था आदि में पोषण मांग में वृद्धि हो जाती है। किसी भी रोग में क्रियाशीलता कम होने के कारण ऊर्जा की आवश्यकता कम हो सकती है परन्तु रोग से लड़ने के लिए प्रोटीन व विटामिन तथा खाना लवणों की उपयोग मात्रा में बढ़त होती है। किसी पोषण होनाते जनन रोग में कुछ पोषण तत्वों की मांग अत्यधिक रुप से बढ़ जाती है। किसी रोग में कोई तत्त्व हानिकारक भी हो सकता है जैसे मधुमेह में कार्बोहाइड्रेट तथा हद तिहम सम्बन्धित रोगों में वसा। आत: हानिकारक भोज्य
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

पदाथः को आहार में समीमित नहीं करना चाहिए तथा लाभान्वित करने वाले पदाथः को आहार में विशेष स्थान देना चाहिए। इससे रोग मुक्त तथा स्वस्थ रहने में सहायता मिलती है। गृहिणी को आहार नियोजन करने से पहले सभी सदस्यों के स्वास्थ्य व विकास दृष्टि से अवस्था का अवलोकन आवश्यक रूप से करना चाहिए।

7. जलवायु एवं मौसम: भोजन को मौसम व जलवायु भी अविनियमक करते हैं। गृहणी में सदृष्ट अपेक्षा कम पोषक तत्वों की स्थायित्व सुनिश्चित करना चाहिए। पदाथः के साथ रोग निवारण का समायोजन होता है। मौसम में ताजे एवं सस्ते फल व सब्ज़ी जो भी उपलब्ध हों, उन्हें आहार में समीमित करना चाहिए।

8. धर्म: धर्म भी आहार नियोजन का एक महत्वपूर्ण कारक है। कुछ धर्मों में मांस, मछली, प्याज, लहसुन आदि पदाथः वर्जित होते हैं। अतः उन परिवारों में ऐसे खाद्य पदाथः का सेवन नहीं किया जाता है। इन पदाथः के स्थान पर समान रोषणीय मूल्य वाले खाद्यों को आहार में समीमित किया जाना चाहिए।

9. एलजन्स व रोग: कुछ प्रकार के रोगों एवं एलज़न्स में किसी विशेष खाद्य का प्रयोग वर्जित होता है। जैसे गेहूँ के इलज़न्स अथवा अण्डे के इलज़न्स। गृहिणी को आहार नियोजन करने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उसके द्वारा सीखी गई खाद्य योजना से किसी सदस्य को हानि तो नहीं। सभी भोजन पदाथः सभी के लिए सम्पूर्णता सुनिश्चित होने चाहिए जिससे किसी भी स्वास्थ्य समस्या को बढ़ावा न मिले।

10. खाद्यों की उपलब्धता: खाद्यों की उपलब्धता आहार नियोजन का अत्यावश्यक कारक है। खाद्य पदाथः की उपलब्धता के आधार पर ही खाद्य योजना बनाई जा सकती है। कुछ जगहों पर व्यावसायिक सुविधा उपलब्ध न होने की वजह से सभी फल व सब्ज़ीयाँ पत्तावरूप से पहुँच नहीं पाती। उदाहरण के लिए दुम्बू व पहाड़ी क्षेत्रों में अक्सर यातायात सुविधाएँ उप होने से खाद्य आपूर्ति प्रभावित हो जाती है। अतः आहार में स्थानीय खाद्य पदाथः की प्रधानता रखने एवं साधनों का निपटा जा सकता है। इसके अतिरिक्त भोजन संक्रमण निवृत्ति विधियों को अपनाकर भोजन पदाथः को अधिक समय तक गुणवत्ता रखा जा सकता है।

11. समय एवं शक्ति की उपलब्धता: वर्तमान समय में नारी भी कार्यशील हो गयी है। बह भी दिनभर काम करने के कारण अत्यधिक व्यस्त दिनचर्या व्यतीत करती है। आहार नियोजन करते
समय तालिका के प्रकार बनानी चाहिए जिससे समय और श्रम की बचत हो सके। स्थानीय कृषि सुबह तक काम पर जाना होता है। अतः भोजन की सभी व्यवस्था सुबह ही कर ली जाती है। घर के सभी सदस्यों को मिठाई-जूलकर समय व शक्ति की उपलब्धता के आधार पर रीति-रिहायों की योजना बनानी चाहिए।

12. आदतें- आहार नियोजन में व्यक्ति की आदतों का भी विशेष प्रभाव होता है। यदि परिवार में किसी सदस्य का सुबह चावल पीने की आदत है तो उसे समय पर चावल मिलनी चाहिए। किसी को चावल पसंद नहीं है तो उसे दूध, कॉफी आदि दिखाया जा सकता है। आदतों की त्याग भूमिका होती है।

इसी प्रकार किसी को भोजन में चावल खाने से ही तुम्ही का अनुभव होता है, किसी को भोजन के बाद मीठा खाने की आदत होती है। अगर इन आदतों का ध्यान नहीं रखा जाये तो यह भोजन की स्वीकृति को प्रभावित करता है तथा परिवार के सदस्य भोजन को खुश होकर नहीं खाते। कुछ आदतें भोजन के बाद समस्याओं भी बनाती हैं। अगर इन आदतों का अनुकूलन नहीं किया जाये तो वह आदत मसाला भोजन के बाद मसाले भोजन का अनुकूलन नहीं हो सकता।

13. रूचि- परिवार में सभी सदस्यों की रूचियों में भिन्नता होती है। आहार नियोजन करने में समय सभी की रूचियों को ध्यान में रखना चाहिए। भोजन सभी की आवश्यकतानुसार व रूचिप्रद होना चाहिए। कुछ भोजन पदार्थों का अनुयोग रूचिप्रद होने पर अंदर भी भोजन का इस्तेमाल रुचि करता है। अतः घर के छोटे बच्चे व अन्य लोग जो मसाला नहीं खाते उनके लिए दाल-सब्जी अलग से निकाल देनी चाहिए।

14. सदस्यों की संख्या- आहार नियोजन को परिवार का आधार या सदस्यों की संख्या प्रभावित करती है। परिवार के आधार पर बच्चे और पुरूषों को भोजन का अधिकार दिया जाता है। इसका कारण तनाव व घटना के हिसाब पर उनका इस्तेमाल बढ़ाया जा सकता है। अतः परिवार का संगठन भोजन की मात्रा एवं गुणवत्ता को प्रभावित करता है। बच्चों की अधिक संख्या होने पर भी आय का बढ़त बढ़ता भाग आहार पर ही व्यय होता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही अथवा गलत बताएं।
   a. एक वर्ष के शिशु को उपभोक्ता इकाई में सम्मिलित करना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

b. अच्छे आहार नियोजन से समय की बचत होती है।
c. आहार नियोजन घर के अलावा कैन्टीन व हास्तलों में भी प्रयोग में लाया जाता है।
d. आहार नियोजन में व्यक्ति के लिंग का कोई महत्व नहीं है।
e. सभी व्यवसाय के व्यक्तियों की पोषणीय आवश्यकताएं समान होती हैं।
f. लम्बे चीड़े व्यक्ति की पोषक तत्वों की आवश्यकताएं अधिक होती हैं।
g. अन्यपित्र विश्वासी व्यक्ति की ज्यादा ऊर्जादायक भोजन देना चाहिए।
h. गर्भावस्था तथा धात्रीवस्था में पोषण माँग बढ़ जाती है।
i. परिवार की आय कम होने पर आहार नियोजन सम्भव नहीं है।
j. मौसम व जलवायु आहार नियोजन को अधिकतम करते हैं।

1.7 आहार नियोजन के सिद्धांत

आहार नियोजन परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए किया जाना चाहिए ताकि उसे पूर्ण पौष्टिक एवं सनवन्दित भोजन की प्राप्ति हो सके। साथ ही उसे अधिकतम सनवन्दित व तृप्ति मिले। इन सबके लिए आहार नियोजन के कुछ आवश्यक सिद्धांतों का प्रयोग किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत निम्न हैं-  

1. पोषणीय उपयुक्तता- पोषणीय उपयुक्तता से तात्पर्य है कि प्रत्येक सदस्य की पोषक तत्वों की मात्रा की पूर्ति हो। परिवार के सभी सदस्य आयु, लिंग, अवस्था एवं कार्यशीलता में भिन्नता रखते हैं। इन्हीं भिन्नताओं पर उनकी पोषणीय आवश्यकताओं में भी भिन्नता पायी जाती है। साथ ही भोज्य तत्वों की आवश्यक मात्रा भी समय-समय पर परिवर्तित होती रहती है जैसे एक वर्ष का बालक दो वर्ष का हो जाता है, सामान्य ती स्थायी ती बन जाती है, प्रीड व्यक्ति बुद्ध बन जाता है आदि। इन्हीं सब परिवर्तनों द्वारा सभी सदस्यों की पोषण मांगें बदलती रहती हैं। आहार नियोजन में आसानी हेतु सभी भोज्य समूहों को तीन मुख्य भागों में बाँटा गया है। गृहणी को इन तीनों भागों के भोजन को उचित मात्रा में शामिल कर एक आदर्श व पौष्टिक आहार तैयार करने में मदद मिलती है।

- उर्जा देने वाले भोज्य पदार्थ- इस वर्ग में वह भोज्य पदार्थ आते हैं जो ऊर्जा अधिक देते हैं अर्थात् वे भोज्य पदार्थ कार्बोहाइड्रेट के अच्छे स्रोत होते हैं जैसे अनाज और उनके उत्पाद (वलिया, मैदा, चिंगड़ा, आटा आदि), कन्दमूल (मूली, गाजर, आलू, शककरकन, चुककर आदि), चीनी, गुड़ आदि। इसके अलावा इस वर्ग में वसा के स्रोत भी आते हैं जैसे सूखे मेवे, तेल, धी आदि। इस वर्ग में शामिल अनाज ऊर्जा के साथ प्रोटीन व वी विटामिन का भी अच्छा
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

MAHS-06

खोत होते हैं। वसा व शक्कर न केवल ऊर्जा प्रदान करते हैं वरन् यह भोजन को स्वाद व मनमोहक गन्ध भी प्रदान करते हैं।

• शरीर निर्माणात्मक भोज्य पदार्थः इस वर्ग में वह भोज्य पदार्थ आते हैं जो कोशिका के निर्माण व टूट-पूट रखरखाव सम्बन्धी प्रोटीन के मुख्य खोत होते हैं। प्राणिज्व को भ्रान्त भोज्य पदार्थ जैसे दूध व दुध उत्पाद, अण्डे, मांस, मछली बहुत अच्छी गुणवत्ता का प्रोटीन माने जाते हैं। यह प्रोटीन स्वतंत्र इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल उचित मात्र में पाये जाते हैं। यह शरीर में आसानी से अवशोषित हो मांसपेशियों की कोशिकाओं का निर्माण व अन्य शरीरीक रखरखाव सम्बन्धी कार्यों में इस्तेमाल होता है। वहीं वानस्पतिक खाद्यांत सूजे दाल, फलियाँ, मेवे काद आदि से भी प्रोटीन प्राप्त किया जा सकता है फलतुत तुलनात्मक रूप से यह मिन गुणवत्ता वाला माना जाता है। इस वर्ग में शामिल सभी प्रोटीन के खोत ऊर्जा, विटामिन ए व विटामिन बी के भी अच्छे खोत माने जाते हैं।

• सुस्खलता भोज्य पदार्थः यह वर्ग उन भोज्य पदार्थों को शामिल करता है जो विटामिन एवं खनिज लाभों के मुख्य खोत होते हैं। यह हमें शरीर के सभी सुस्खलन कार्य करते हैं। संतोष लेने वाली ही संतोष लेने लायक लाभ के विशेषज्ञ के तुलनात्मक रूप से यह निश्चित गुणवत्ता वाला माना जाता है। इस वर्ग में गृहणी को यह जानना आवश्यक है कि िकन; िकन भोजन तथा उनके अनुसार गुणवत्ता को याद करके भोजन तथा मात्रा को संतुलन रखना चाहिए। यहीं उसे सभी भोजन पदार्थों के गुणों के अनुसार इन वर्गों का उचित तालमेल करके परीक्षण का उत्तम स्वास्थ्य सुनिश्चित किया जा सकता है।

2. बजट सम्बन्धी मिति-वित्तियता- आहार नियोजन में बजट का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। महंगाई बहुत अधिक है और परीक्षण के साधन संभव हैं। गृहणी के यह जानना आवश्यक है कि िन-िन भोजन पदार्थों में कौन-कौन से पोषक तत्त्व विभविध हैं। उसे सभी भोजन से भी रुचिकर एवं मनोहारी भोजन पकाने की कला से भी रुचिकर है। उसे सभी भोजन से भी रुचिकर एवं मनोहारी भोजन पकाने की कला से भी रुचिकर है। उसे सभी भोजन से भी रुचिकर एवं मनोहारी भोजन पकाने की कला से भी रुचिकर है। उसे सभी भोजन से भी रुचिकर एवं मनोहारी भोजन पकाने की कला से भी रुचिकर है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

उसकी जगह प्रयोग में लाया जा सकता है। भोजन के इस प्रकार के परिवर्तन को खाद्य विनिमय कहते हैं। मौसम के अनुसार सस्ते एवं सन्तुलित खाद्य पदार्थ को खारीजना, उसने ठीक से पकाकर एवं परोसना आवश्यक है जिससे सन्तुलित और स्वादिष्ट भोजन परिवार को उपलब्ध कराया जा सके।

सभी भोज्य समूहों एवं खाद्य विनिमय की जानकारी द्वारा गृहीणि खाद्य पदार्थों का बजट से अनुसार आसानी से चयन कर सकती है जैसे दूध, अण्डा, मॉस, मछली आदि महंगी भोज्य पदार्थों के स्थानों पर बसा रहित दूध, अण्डा तथा समाह में एक-दो बार मॉस आदि भी प्रोटीन पूर्ति हेतु प्रयुक्त किये जा सकते हैं। गेहूँ में चना, सोयाबीन आदि मिलाकर आटा पिसवाने से भी प्रोटीन, कार्बोज, बसा आदि पोषक तत्त्वों की वृद्धि होती है। मूँगफली, दाल आदि भी प्रोटीन का उत्तम खोट हैं। इसी तरह अरबी की जगह आलू, पालक की जगह बथुआ प्रयोग कर भोजन तैयार किया जा सकता है।

लाल-पीली सब्जियां, हरी सब्जियां और फल आदि भी विटामिन सी और विटामिन E के अच्छे खोट होते हैं। नींबू, ऑफल, टमाटर, अमरूद, पपीता, आम आदि आसानी से बजट में समाकर भोजन को उचित गुणवत्ता प्रदान करते हैं। यह आदि से रिफाइन्ड तेल सम्भवते होते हैं साथ ही वसीय अम्ल की प्राप्ति के भी अच्छे साधन होते हैं। इनका प्रयोग भी सतत होता है। अतः इन्हें उपयोग में आहार में शामिल किया जा सकता है। नींबू, गुड़ भी ऊर्जा प्राप्ति का साधन हैं। इन्हें भी आहार में सीमित तात्कालिक तेजी में लेना चाहिए। इस प्रकार सभी भोज्य पदार्थों को आय के अनुसार पारिवारिक आहार नियोजन में शामिल किया जा सकता है।

3. भोज्य पदार्थों की स्वीकार्यता एवं स्वादिष्टता- आहार नियोजन करते समय गृहीणि को भोजन की स्वीकार्यता एवं स्वादिष्टता पर भी पूरा ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि एक भोजन जो परिवार के एक सदस्य के लिए सुपाच्छ एवं रुचिकर है, वही भोजन दूसरे सदस्य के लिए अपवश्लेष एवं अरुचिकर भी हो सकता है। उसमें छोटे बालकों को पूर्ण, करीब, पांडा तथा अन्य तले-भूले भोजन पसन्द आते हैं परन्तु एक बुद्ध एवं रोगी व्यक्ति के लिए यही भोजन अरुचिकर हो सकता है। भोजन की स्वीकार्यता एवं स्वादिष्टता हेतु निम्न गुणों का होना आवश्यक है।

1. सुपाच्छ एवं नरम हो।
2. भोजन पूर्ण रूप से पका हो।
3. दुर्गम न हो।
4. विशेष आकर्षक एवं मनोकामनामयी हो।
5. सुगम अच्छी हो।
6. स्वाद में खट्टा, मीठा, चटपटा तथा नमकीन का मिश्रण हो।
भोजन की स्वीकार्यता एवं स्वादिष्टता निम्न गुणों पर निर्भर करती है:-

रंग में विविधता- रंगों का हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। रंगीन जीवन नीरस हो जाता है। रंग में विविधता लाकर उसे मनोमोहक, आकर्षक एवं स्वादिष्ट बनाया जाए। उदाहरण के लिए दाल एवं सब्जियों चाहे कितनी भी स्वादिष्ट क्यों न बनायी जाएं, यदि उनमें हल्दी न डाली जाये तो वह देखने में भट्टी व अनाकर्षक लगेंगी। अतः भोजन का रंगीन होना आवश्यक है। भोजन में रोटी, सब्जी, दाल, सलाद, पापड़, दही, मिठाई, चटनी आदि से रंग लाकर उसे मनमोहक, आकर्षक एवं मनोमोहक बनाया जाए। उदाहरण के लिए दाल एवं सब्जी के रंगों में विविधता आती है क्योंकि हर एक भोजन का रंग अलग-अलग होता है। गृङ्गिणी आकर्षक रंगों के प्रयोग से सदस्यों को भरपूर भोजन प्रदान करने के लिए प्रेरित कर सकती है।

रंग में विविधता- रंग की तरह गंध का भी सूक्ष्म अवश्य भोजन प्रदान करने वाले व्यक्ति पर पड़ता है। यदि व्यक्ति को सड़ा हुआ, दुम्मक वाला या बासी भोजन खाने की दिशा जाये तो वह भोजन प्रदान नहीं कर सकेगा। वह सुगन्ध्युक भोजन देखते ही उसे खाने की इच्छा जागृत हो जाती है। इसलिए भोजन पकाने समय सुगन्ध वाले नहीं देनें। कुछ अवसरों में महक पकाने के माध्यम से नष्ट भी हो जाती हैं जो भोजन की स्वीकार्यता को बढ़ाता है। उदाहरण के लिए भोजन में कुछ प्राकृतिक सुगन्ध चिंता है। जब कोई पकाने पर विकसित हो जाती है। कुछ अवसरों में महक पकाने के माध्यम से नष्ट हो जाती है जिससे अक्सर भोजन का रंग बदल जाता है। इसलिए भोजन पकाने समय सुगन्ध पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

रचना में विविधता- आहार नियोजन करते समय भोजन प्रदान करने वाले व्यक्ति पर पड़ता है। जब व्यक्ति का मन उल्लोल हो जाता है, तब उसे मनोमोहक एवं आकर्षक भोजन प्रदान करने वाले व्यक्ति पर पड़ता है। उदाहरण के लिए सब्जी को सड़ा हुआ और चावल ज्यादा पकाया जाये तो वह भोजन प्रदान नहीं कर सकेगा। जैसे आटे का उपयोग कर पूरी, कचौड़ी, रोटी, तो दोनों ही अच्छी भोजन का समावेश होता है। तथापि भोजन का रंग अलग अलग होता है। उदाहरण के लिए सब्जी का उपयोग कर पूरी, कचौड़ी, रोटी, पतंगा लाकर उसे मनमोहक बनाना होता है। आमाशय से पाचक रसों का स्वाद ठीक ठीक हो जाता है और भूख प्राप्त होता है। गृङ्गिणी आकर्षक रंगों के प्रयोग से सदस्यों को भरपूर भोजन प्रदान करने के लिए प्रेरित कर सकती है।

रचना में विविधता- आहार नियोजन करते समय भोजन प्रदान करने वाले व्यक्ति पर पड़ता है। जब व्यक्ति का मन उल्लोल हो जाता है, तब उसे मनोमोहक एवं आकर्षक भोजन प्रदान करने वाले व्यक्ति पर पड़ता है। उदाहरण के लिए सब्जी को सड़ा हुआ और चावल ज्यादा पकाया जाये तो दोनों ही अच्छी भोजन का समावेश होता है। तथापि भोजन का रंग अलग अलग होता है। उदाहरण के लिए सब्जी का उपयोग कर पूरी, कचौड़ी, रोटी, पतंगा लाकर उसे मनमोहक बनाना होता है। आमाशय से पाचक रसों का स्वाद ठीक ठीक हो जाता है और भूख प्राप्त होता है। गृङ्गिणी आकर्षक रंगों के प्रयोग से सदस्यों को भरपूर भोजन प्रदान करने के लिए प्रेरित कर सकती है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

बनाये जा सकते हैं। पकाकर, उबालकर, भाप द्वारा इत्यादि अनेक विधियों द्वारा भोजन में विविधता लायी जा सकती है। इससे भोजन न केवल आकर्षक व स्वादिष्ट लगता है बल्कि मन से भरपूर खाने से सभी सदस्यों का स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है।

4. अधिकतम तृप्ति मूल्य प्रदान करे- आहार नियोजन इस प्रकार का होना चाहिए जिससे कि परिवार के हर सदस्य को अधिकतम तृप्ति प्रदान हो सके। यहाँ तृप्ति का अर्थ सतुष्ट होने से है। अर्थात् अगले भोजन तक व्यक्ति को भूख की संवेदनाओं जागृत न हो तथा भोजन का स्वाद व सुगम्य उसके रूप में सकारात्मक छवि बनाये, जिससे वह अगले भोजन के लिए भी अच्छे विचार रखे। अधिकतम तृप्ति एवं सतुष्टि के लिए निम्न विनिमय पर ध्यान देना चाहिए-

भोजन की पयांस मात्रा- सर्वप्रथम इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि प्रत्येक सदस्य को भरपूर भोजन दिया जाना चाहिए। कम भोजन से व्यक्ति असतुष्ट रह जाता है। इसके अलावा यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि शोधी-शोधी मात्रा में अधिक व्यक्ति परोसने की अपेक्षा कम व्यक्ति पयांस मात्रा में परोसे जायें। इससे खाने वाले को अधिक सतुष्टि मिलती है।

शाकाहारी एवं मौसाहारी भोजन- कुछ व्यक्ति शाकाहारी होते हैं, कुछ मौसाहारी। आहार नियोजन करने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लेना अति आवश्यक है कि व्यक्ति किस प्रकार का भोजन खाता है। शाकाहारी व्यक्ति अण्डा, माँस, मछली आदि को अपनाया नहीं मानते हैं। ऐसे में आगे उन्हें रंग, सुगम्य, स्वाद आदि से भरपूर मौसाहारी भोज्य पदार्थ खाने को दिया जाए तो वे उसे नहीं खा सकते। इसके विपरीत मौसाहारी व्यक्ति को हमेशा शाकाहारी भोजन परोसने से वह खाने के प्रति उदासीन हो जायेगा। अतः भोजन के प्रकार से भी तृप्ति प्रभावित होती है।

कुछ अवधि के लिए भोज्य पदार्थ नहीं ग्रहण करना- भारत एक धार्मिक देश है। विभिन्न धर्म व जातियों से समुद्रजन हमारे देश में अनेक पर्व व मन्यताएं हमारी भोजन शैली को भी प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए नवरात्र, श्रावण मास आदि अवसरों पर हिंदुओं में कुछ विशेष भोज्य तथा विशेषकर प्याज, लहसुन का उपयोग कर दिया जाता है। इसी तरह जैन धर्म में जड़ एवं कन्दमूल वाली सब्जियाँ तथा लहसुन का उपयोग कर दिया जाता है। अगर इन सब मान्यताओं का परिवार में ध्यान नहीं रखा जाये तो सदस्यों को भोजन से अर्थिक हो सकती है तथा शरीर की स्थिति के कारण वह भोजन से तृप्ति प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

5. समय, शक्ति व ईंधन की बचत हो- आहार नियोजन करने समय गुहिणी को समय, शक्ति तथा ईंधन की बचत पर ध्यान देना बेहद जरूरी है। सफल समय एवं शक्ति व्यवस्थापन से गुहिणी को घर के दूसरे कार्यों को करने के लिए पयांस समय मिल जाता है। यदि महिला स्वयं नौकरी पेशा है अथवा
परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक है अथवा निम्न आर्थिक वर्ग की है, तब उनके लिए समय शक्ति तथा ईंधन का व्यवस्थापन करना और भी जरूरी हो जाता है। इसके लिए परिवार के दूसरे सदस्यों से भी सहायता लेनी चाहिए एवं जलजलकर कार्य करने से आहार नियोजन की प्रक्रिया और भी प्रभावशाली हो जाती है।

6. आहार नियोजन लचीला हो- आहार नियोजन में लचीलापन अनिवार्य है। कई बार अनेक परिस्थितियों में होता है जिनमें दाल नहीं जा सकता। इसके लिए दूसरे स्तर का समय भी अधिक हो सकता है। इसके लिए राशन लचीला होना चाहिए। इसी तरह से दूसरे दिन में आहार नियोजन के अनुसार खाद्य पदार्थों की उपलब्धता नहीं हो अथवा खाद्य पदार्थ का समय नहीं हो या कोई अन्य कारण हो तो आहार में परिवर्तन किया जाना चाहिए। जैसे गूंडा दाल के स्थान पर चने की दाल फकार चा सकती है। हर परिस्थिति में निर्धारित समय पर सभी पीठिक तत्वों से युक्त भोजन व्यक्ति को प्राप्त हो सके इसी कारण आहार नियोजन में लचीलापन आवश्यक है।

7. दैनिक आहार नियोजन में दृष्टि तथा भारी दोनों ही तरह के व्यवस्थापन हो- आहार नियोजन करते समय दैनिक भोजन इस तरह होना चाहिए जिसमें हल्के तथा भारी व्यवस्थापन को सम्मिलित किया जा सके। भारी व्यवस्थापन से ताल्परिश्रम उन गरीब पकवानों से है जो ऊर्जा एवं वसा अच्छी मात्रा में धारण करते हैं। जब देर से पकते हैं तथा इनके लगातार सेवन से अपच बने पकवान से भी होती है। उदाहरण के लिए घर में मौसम के अनुसार भोजन का अनुसार खाद्य पदार्थ का प्रयोग किया गया है तो दूसरे समय का भोजन हल्का अर्थात उपाप रखा जाना चाहिए। जैसे खिचड़ी, पुलाव इत्यादि। इससे पोषण मूल्य को बिना गंवाये पाचन स्वास्थ्य भी अच्छा बनाये रखने में सहायता मिलती है।

8. मौसमी फलों एवं सब्जियों का समावेश- आहार नियोजन करते समय गृहिणियों को मौसमी फलों एवं सब्जियों का समावेश करना होता है। यद्यपि आजकल सालभर हर तरह की सब्जियों व फल बाजार में मिलते रहते हैं। परन्तु मौसमी फल व सब्जियों ज्यादा पीठिकता, रंग-रूप व ताजगी धारण करती हैं। साथ ही वेमौसम की सब्जियों व फल महंगी भी होती हैं। अतः मौसमी भोजन पदार्थों को भोजन में अवश्य शामिल करना चाहिए।

इसके अलावा मौसम के अनुसार भी आहार नियोजन करना चाहिए क्योंकि गर्मी में तले-भुने गरीब एवं मिर्च-मसालेदार भोजन अरुचिकर लगते हैं। वे देरी से पकते हैं तथा अच्छे एवं अरुची की उपलब्धि के लिए पर्याप्त लगते हैं।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण
करते हैं। सदियों में गरिष्ठ भोजन का आयोजन किया जाना चाहिए क्योंकि सदियों में गरिष्ठ एवं भारी भोजन आनन्ददायक, तृप्तिदायक एवं मजेदार लगते हैं। साथ ही वे आसानी से पच भी जाते हैं।

1.8 आहार नियोजन करते समय ध्यान देने योग्य बातें
आहार नियोजन की प्रक्रिया करते समय कुछ छोटी-छोटी बातों को अगर ध्यान में रखा जाये तो यह और भी प्रभावशाली व आसान बन सकती है। ऐसे कुछ ध्यान देने योग्य बिंदु निम्न हैं-
- एक बार में कम से कम एक समाह के आहार का नियोजन करना चाहिए।
- बाजार में से जो भी सामान लाना हो उसकी तैयार करनी चाहिए जिससे बार-बार बाजार न जाना पड़े।
- साधारण एवं उपलब्ध सामग्री को आहार तालिका में समंजित करना चाहिए जिससे सरलता से आहार तैयार किया जा सके।
- रसोईघर में उपकरण एवं सामग्री के सरलीकरण की दृष्टि से न्यूनतम बनानी चाहिए जिससे कार्य कुशलता में वृद्धि हो सके। जैसे प्रेसर कुकर, मिक्सर, ग्रेडर आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- व्यजनों का दोहराव कम हो इसके लिए खाद्यों में विविधता का प्रयास करना चाहिए।
- एक ही समय के आहार में एक ही पोषक तत्व का उपभोग नहीं दी जानी चाहिए। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट व वैसा आदि आदि की आहार में स्थान देना चाहिए।
- आहार नियोजन करते समय शरीर निर्माण अथवा दृश्य निर्माणात्मक से आहार का प्रयोग करना चाहिए।
- आहार नियोजन करते समय ऐसी पाक विधियाँ चुननी चाहिए जिससे पोषक तत्व कम से कम नहीं हो।
- प्रतिदिन एक अथवा दो कच्चे फल और सब्जियों का भी आहार में प्रयोग किया जाना चाहिए। ऐसे अनेक पोषक तत्व तो मिलते ही हैं साथ ही रेशा भी शरीर में पहुँचता है जो आँतों की गति विधि को स्वस्थ बनाये रखने में सहायक है।
- भोजन के पश्चात खाना, फल अथवा आइसक्रीम आदि मीठी वस्तु से चित रसायन रहता है। अतः आहार नियोजन में मिश्रण का भी प्रचलन होना चाहिए।
दैनिक एवं उपचारात्मक पोषण

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही भोजन करें।
   a. सुरक्षात्मक भोज्य पदार्थ (क) स्वीकार्यता एवं स्वादिष्टता
   b. सन्तुष्टि (ख) मित्यात्म
   c. रंगों में विविधता (ग) विटामिन व खनिज लवण
d. खाद्य विनिमय (घ) प्रोटीन
e. निर्माणात्मक भोज्य पदार्थ (ड) तुम्ब मूल्य

1.9 सारांश

प्रतिदिन कैसा आहार लेना है अथवा तैयार करना है साथ ही पीठिकता का सुनिश्चितकरण आहार नियोजन कहलाता है। वास्तव में परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य भी इसी बात पर निर्भर करता है कि उनके आहार कैसा मिलता है। अतः सभी सदस्यों की आवश्यकता और सन्तुष्टि के अनुसार आहार नियोजन करना चाहिए। आहार नियोजन का प्रमुख उद्देश्य परिवार हेतु पीठिक आहार प्रदान करना है। आहार नियोजन इस प्रकार किया जाना चाहिए जो सभी की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, लवण, विटामिन और जल उचित मात्रा में प्रदान करे। समानान्तः आहार नियोजन का कार्य परिवार में गृहीता द्वारा किया जाता है। यह उसका प्रमुख कर्तव्य है कि वह परिवार की आवश्यकताओं और सुचियाँ का ध्यान रखे। गृहीता की योग्यता, कार्य कुशलता, उसकी सुसंचिकृतता कल्पना और भोज्य सम्बन्धी ज्ञान परिवार को न केवल स्वादिष्ट व तुम्बिदायक आहार प्रदान करता है वरन् मानसिक सन्तुष्टि व सततता भी प्रदान करते हैं सहायक होता है।

1.10 पारिभाषिक शब्दावली

• दैनिक प्रस्तावित मात्रा- पोषक तत्वों की वह मात्रा जो व्यक्ति की आयु, लिंग व अवस्था के अनुसार उसे शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ्य रखने में सहायक हो। भारत में यह मात्रा भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद् (Indian council of Medical Research, ICMR) द्वारा स्थापित की गयी है।
• खाद्य विनिमय- एक भोज्य पदार्थ की जगह समान पोषणीय गुण वाले दूसरे भोज्य पदार्थ का प्रयोग करना।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही अथवा गलत बताइए।
   a. गलत
   b. सही
   c. सही
   d. गलत
   e. गलत
   f. सही
   g. सही
   h. सही
   i. गलत
   j. सही

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही मिलान करें।
   a. (ग)
   b. (द)
   c. (क)
   d. (ख)
   e. (घ)

1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. खना कुमुद: टेक्स्टबुक ऑफ न्यूट्रीशन एंड डाइटेंटिक्स, ऐलिट पब्लीशिंग।
2. श्रीलक्ष्मी बी0: डाइटेंटिक्स, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिकेशन (पाँचवा संस्करण)।
3. स्वामिनाथन एम0: फूड एंड न्यूट्रीशन, बैपको पब्लिकेशन।
4. बक्सी बी0 के0: आहार एवं पोषण के मूल सिद्धांत, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

इंटरनेट स्रोत:
www.wikipedia.com
www.ninindia.org.

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. आहार नियोजन से क्या अभिप्राय है? आहार नियोजन के लाभों का वर्णन करें।
2. आहार नियोजन को प्रभावित करने वाले कारकों का विवरण दें।
3. आहार नियोजन के सिद्धांतों पर चर्चा करें।
4. आहार नियोजन करते समय ध्यान रखने योग्य बिन्दुओं की विवेचना करें।
इकाई 2: गर्भावस्था व धात्रीवस्था में आहार

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 गर्भावस्था  
2.3.1 गर्भावस्था में शारीरिक परिवर्तन  
2.3.2 गर्भावस्था में पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकता  
2.3.3 गर्भावस्था में आहार नियोजन हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव  
2.3.4 गर्भवती स्त्री हेतु एक दिन की आहार तालिका  

2.4 धात्रीवस्था  
2.4.1 स्तनपान कराने से माँ को लाभ  
2.4.2 धात्रीवस्था को प्रभावित करने वाले कारक  
2.4.3 धात्रीवस्था में पोषक तत्त्वों की आवश्यकता  
2.4.4 धात्री माता के लिए आहार नियोजन करते समय ध्यान देने योग्य बातें  
2.4.5 धात्री स्त्री हेतु एक दिन की आहार तालिका  

2.5 सारांश  
2.6 पारिभाषिक शब्दावली  
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर  
2.8 सन्दर्भ प्रत्येक सूची  
2.9 निबंधात्मक प्रश्न  

2.1 यास्तावना  

प्रजनन काल की विशेषताओं के लिए महत्व प्राप्त है। इसी दौरान स्त्री गर्भावस्था धारण करती है एवं शिशु जन्म के पश्चात् उसे दाहल कराती है जिसे धात्री अवस्था कहते हैं। पोषण की दृष्टि से गर्भावस्था व धात्रीवस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण अवस्थाएं हैं। गर्भावस्था में स्त्री के शरीर में एक नये जीव का निर्माण होता है और कई प्रकार के उपायों में शामिल प्रत्येक परिवर्तन भी होते हैं। शिशु जन्म के बाद पूरी तरह से माता पर ही पोषण के लिए आवश्यक होता है जब अपने प्रारम्भिक जीवन में माँ के दूध से ही पोषक तत्त्व प्राप्त करता है। अतः भूषन के उचित विकास हेतु, उचित ढंग से प्रस्ताव हेतु तथा उचित शिशु
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

पोषण हेतु गर्भवती एवं पात्री स्वास्थ्य रहना आवश्यक है जिसके लिए सन्तुलित आहार आवश्यक है। स्वस्थ स्वास्थ्य ही एक स्वस्थ शिशु को जन्म देने तथा उचित शिशु पोषण में सक्षम है। अतः स्वास्थ्य और शिशु का स्वास्थ्य निर्भर करता है।

2.2 उदेश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पक्षात आप जानेंगे:
- गर्भवस्था में स्वास्थ्य रहने वाले शारीरिक विकास;
- गर्भवस्था में विभिन्न पोषण तत्त्वों की आवश्यकता;
- गर्भवस्था में आहार नियोजन हेतु ध्यान रखने वाले नियम;
- धानीवस्था को प्रभावित करने वाले कारक;
- धानीवस्था में विभिन्न पोषण तत्त्वों की आवश्यकता; तथा
- धानीवस्था में आहार नियोजन हेतु ध्यान रखने वाले नियम।

2.3 गर्भवस्था

गर्भवती अवस्था में एक ही साथ दो मानव शरीरों का पोषण होता है। जन्म से पूर्व 40 सप्ताह अर्थात् 9 मह तक शिशु माँ के गर्भ में भिक्षित होता है। वह अपनी पोषण सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति हेतु पूर्णत: माता पर आश्रित रहता है। विषाणुति: माता को न केवल अपने स्वयं के हेतु विभिन्न गर्भ में पत्र रहे शिशु के लिए भी पोषण प्राप्त करना होता है। अतः गर्भवती माँ का आहार ऐसा होना चाहिए जो उसे तथा उसके लिए समृद्धिभूत स्वास्थ्य देने के लिए सम्पूर्णत: पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर होकर स्वस्थ शिशु प्रदान करे। गर्भवती में भोजन पदाथरों की मात्रा एवं गुणवत्ता दोनों में ही वृद्धि करती है। गर्भ के दौरान सन्तुलित एवं पौष्टिक आहार होने से गर्भस्थ शिशु की समृद्धि वृद्धि एवं विकास होता है। गर्भवती अवस्था को तीन भागों में बांटा जा सकता है:-

1. डिब्बा अवस्था- यह गर्भधान से दो सप्ताह तक मानी जाती है।
2. बृहावस्था- यह 15 दिन से 2 मह तक होती है।
3. गर्भस्थ शिशु की अवस्था- यह तीसरे मह के प्रारंभ से शिशु जन्म तक होती है।

2.3.1 गर्भवस्था में शारीरिक परिवर्तन
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

गर्भवस्था के दौरान खी के शरीर में अनेक परिवर्तन होते हैं। वह शारीरिक, रासायनिक और हारमोन सम्बन्धी होते हैं। कुछ बाह्य परिवर्तनों के साथ अनेक आन्तरिक परिवर्तन भी होते हैं। गर्भवस्था के विभिन्न परिवर्तनों का विवरण निम्न है -

1. गर्भवती खी के वजन में वृद्धि- गर्भवस्था के दौरान वजन में वृद्धि होती है। यह वृद्धि प्रथम तीन माह में नहीं के बराबर होती है क्योंकि प्रथम तीन माह में भूण अवधन ही छोटा होता है। इस समय पाचन उत्पादन में होता है। गर्भवती खी के उदारी जी मचलाना आता है। परन्तु गर्भवस्था के चौथे माह से वजन में वृद्धि होती है। शिशु जन्म तक गर्भवती माता 10-12.5 किलोग्राम तक वजन प्राप्त कर लेती है। वजन में यह बुद्धि रक्त, वसा की मात्रा बढ़ने से, गर्भाशय के आकार को परिवर्तन, गर्भार्ध्व व गर्भतरल (एमिनोटिक तरल/Amniotic fluid) आदि में वृद्धि होने के कारण होता है।

तालिका 2.1: गर्भवर्ती खी के भार में वृद्धि का विवेशण

<table>
<thead>
<tr>
<th>भूण व गर्भार्ध्व</th>
<th>10 समाह तक (ग्राम)</th>
<th>20 समाह तक (ग्राम)</th>
<th>30 समाह तक (ग्राम)</th>
<th>40 समाह तक (ग्राम)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>भूण व गर्भार्ध्व</td>
<td>55</td>
<td>720</td>
<td>2350</td>
<td>4750</td>
</tr>
<tr>
<td>गर्भाशय एवं स्तनकोशिका</td>
<td>170</td>
<td>765</td>
<td>1170</td>
<td>1300</td>
</tr>
<tr>
<td>रक्त</td>
<td>100</td>
<td>600</td>
<td>1300</td>
<td>1350</td>
</tr>
<tr>
<td>बाह्यकोशिका ध्वल</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
<td>1200</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा</td>
<td>325</td>
<td>1915</td>
<td>3500</td>
<td>4000</td>
</tr>
<tr>
<td>योग</td>
<td>650</td>
<td>4000</td>
<td>8500</td>
<td>12600</td>
</tr>
</tbody>
</table>

स्रोत: टेक्स्ट बुक ऑफ न्यूट्रीशन एण्ड डाइटेटिक्स, कुपुद खना।

यदि माता कुपोषण का शिकार होती है तो वजन आवश्यक मात्रा से बहुत कम या अधिक बढ़ता है। दोनों ही स्थितियाँ गर्भवती खी एवं गर्भस्थ शिशु के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती हैं। अतः भार

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

माता के वजन में वृद्धि

<table>
<thead>
<tr>
<th>संख्या</th>
<th>पृष्ठ का कुल वजन (ग्राम)</th>
<th>माता के वजन में वृद्धि (ग्राम)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10</td>
<td>5</td>
<td>650</td>
</tr>
<tr>
<td>12</td>
<td>30</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>20</td>
<td>300</td>
<td>4000</td>
</tr>
<tr>
<td>24</td>
<td>900</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>28</td>
<td>1240</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>30</td>
<td>1484</td>
<td>8500</td>
</tr>
<tr>
<td>32</td>
<td>1750</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>34</td>
<td>2278</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>36</td>
<td>2750</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>38</td>
<td>3052</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>40</td>
<td>3230</td>
<td>12500</td>
</tr>
<tr>
<td>42</td>
<td>3310</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

खोज़े: टेक्स्ट बुक ऑफ न्यूट्रीशन एंड डाइटेटिक्स, कुमुद खन्ना।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

अत: उपोक्त भार वृद्धि दर के अनुसार विभिन्न गर्भ सम्बन्धी अंगों तथा शिशु विकास के लिए उपयुक्त पोषण की अति आवश्यकता होती है।

2. उपायात्मक परिवर्तन- शारीर का क्षेत्रफल व वजन के हिसाब से उपायात्मक परिवर्तन भी अलग-अलग होती है। भूण का वृद्धि व विकास होने के कारण गर्भवती मां की उपायात्मक परिवर्तन प्रथम तीन महीनों में 5 प्रतिशत बढ़ जाती है। आगे की गर्भवस्था में इस दर में 12 प्रतिशत तक बढ़ता रहता जाता है। इसके बढ़ने के कुछ प्रमुख कारण होते हैं जैसे- गर्भवती मां की वृद्धि, गर्भस्थ शिशु द्वारा अधिक पोषण व ऑक्सीजन की मांग आदि।

3. पाचन क्रिया में परिवर्तन- गर्भवस्था में पाचन क्रिया भी प्रभावित होती है। गर्भवत के प्रथम कुछ महीनों में जी मिल्क्लाना, तरल, गैस बनाना, कब्ज आदि समस्याएं देखने की शिक्षा है। यह सब शारीरिक रूप से शिखित व आमाशयिक साबित के कम होने के कारण होता है। आमाशय में उरिन अमल व पेशिंस कम होने तथा आमाशय में भोज्य पदार्थों का पलटकर वापस आ जाने से सीने में जलन व अन्य दुःख उठते होना देखा जाता है। जैसे-जैसे गर्भवस्था बढ़ती है भूण के बढ़ते भार के कारण दबाव से यह समस्या और बढ़ती है। गर्भवती मां की छोटी विशेष भोज्य पदार्थ खाने का मन करता रहता है तथा किसी भोज्य पदार्थ की गंध से परेशानी होती है। कुछ महिलाओं को अक्सर अखाड़ा पदार्थों को खाने का भी मन करता है जैसे मिठी आदि। इस आदत को “पिका” कहते हैं।

4. हारमोन में परिवर्तन- गर्भवत के प्रथम अनेक हारमोन सम्बन्धी परिवर्तन होते हैं। भूण के विकास के लिए प्रोजेस्ट्रोस हारमोन का स्तर बढ़ जाता है। इसके बढ़ने से पाचन सम्बन्धी विकास भी उपज होते हैं जैसे पेट में जलन आदि। इसके बढ़ने के कारण हारमोन स्तर की शुद्ध निर्माण के लिए उन्नति करता है। गर्भवत के हारमोन प्रजनन अंगों की कोशिकाओं का मात्रा बढ़ते हैं तथा स्तनों का आकार भी बढ़ता रहता है जैसे व्यायाम का आकार भी बढ़ाता है अतः। आयोडिन की गर्भवस्था में अतिरिक्त उपचारकता होती है।

5. मूृत नलिकाओं में परिवर्तन- गर्भवस्था में मूृत नलिकाओं में भी परिवर्तन होता है। रक्तपरिसंचरण गुदिया (Kidneys) की ओर अधिक होने लगता है, जिसके उन्हें अधिक कार्य करना पड़ता है। इस अवस्था में ग्लूकोज का अवशोषण कम हो जाता है, जिससे मूृत में ग्लूकोज की मात्रा अधिक हो जाती है। अतः। कई गर्भवती मिठियों को गर्भवस्था में मग्नहो जाती है, जो स्तन: ही प्रसव के बाद समाप्त हो जाती है। गर्भवत के बढ़ता भार मूृत नलिकों की आयोजन में भी वृद्धि हो जाती है।
6. त्वचा में परिवर्तन- गर्भवती श्री के गाल, नाक, ऊपरी होठ, ललाट तथा गर्भ घने में घने होते हैं। आँखों के नीचे की त्वचा भी कुछ-कुछ काली हो जाती है। ऐसा रंग में मेलेनोसाइट स्टीललाइट हारमोन की उपस्थिति के कारण होता है। स्तन की त्वचा में भी परिवर्तन होता है। पेट की त्वचा में खिरांचे के कारण लम्बी-लम्बी धारियाँ जैसे निशान बन जाते हैं। गर्भकाल में स्वेद प्रथिरियों (Sweat glands) की भी क्रियाशीलता बढ़ जाती है। फलतः शरीर से अधिक पसीना निकलता है।

7. श्रवन सम्बन्धी परिवर्तन- प्रोस्टेट्स में हरमोन के कारण श्रवन क्रियाओं में परिवर्तन होने लगते हैं। जैसे-जैसे गर्भ का समय बढ़ता है, इससे श्रवन क्रिया में उथलपन आने लगता है। इससे श्रवन दर बढ़ जाती है। गर्भशय का बढ़ता भार श्रवन क्रिया में बाधा उत्पन्न करता है। अतः गर्भवती श्री के स्तर-स्तर चलने में हाँफने लगती है।

8. पेशियों वं कंकाल तन्त्र में परिवर्तन- गर्भवस्था में गर्भाशय का आकार बढ़ने के कारण शरीर का सतततुलन बढ़ जाता है। इससे पीठ व कमर में दबाव आने लगता है। आमाशय की पेशियों भी होकर नरम हो जाती हैं। मलाशय की पेशियों के दबने से कन्जसे मूसा शय पर बढ़ने पड़ने से बार-बार मूसा त्यागने की तीव्र इच्छा होती है।

9. रक्त परिशरण में परिवर्तन- गर्भवस्था में रक्त परिशरण में भी परिवर्तन होता है क्योंकि शरीर में रक्त की मात्रा बढ़ जाती है। फलतः हड़ताल को अधिक कार्य करना पड़ता है। रक्त की मात्रा पूर्व के उपेक्षा 30% तक बढ़ जाती है। रक्त में हीमोलॉगी का प्रतिशत कम हो जाता है। रक्त-चाप भी चौथे भाग में महत्त्वपूर्ण होने लगता है। इससे पैरों व टखनों में सूजन उत्पन्न हो जाती है। रक्तचाप के अनुसार, कच्चे बढ़ने से गर्भवती श्री को बेहोशी भी आ सकती है। इसे गर्भाशय (Eclampsia) कहते हैं। यह भी एवं उथलन दोनों के लिए जानलेवा हो सकता है।

10. नाडी संरचन में परिवर्तन- गर्भवस्था में नाडी संरचन में अनेक परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं जिसके कारण गर्भवती श्री को नीचे कम आती है, स्वभाव में चिंता-चिंता पड़ने लगती है, लुक्का एवं आलस्य के कारण वह अधिक-अधिक समय विश्राम करना चाहती है। किसी विशेष वस्तु को खेलने के प्रति चाह तथा किसी विशेष वस्तु से घृणा हो जाती है। मानसिक तनाव, भय, चिंता, सिरदर्द आदि समस्याएं अक्सर गर्भवती श्री में देखी जाती हैं।

11. उदर एवं जोड़ों में परिवर्तन- गर्भवस्था में उदर की दीवारों में परिवर्तन होता है, जिसके कारण इनके पेशियों में बृद्धि होती है। इससे गर्भाशय की बृद्धि एवं विकास हेतु स्थान सुलभ होता है। उदर की दीवार फिला कर गर्भाशय शिशु के बढ़ते आकार के साथ उदर को बढ़ने में मदद करती है। यह प्रसव के उपरान्त भी फिली रहती है जिसके कारण त्वचा के लचीले तन्त्र फट जाते हैं और पेट पर लम्बे
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

भारीदार निशान ठहराते हैं। इस अवस्था में कमर का निचला हिस्सा (श्रृंगारी), जोड़ों के स्तंभ ढीले व नर्म हो जाते हैं। गर्भावस्था में जोड़ों की गतिशीलता भी बढ़ जाती है।

12. योनिमागण (Vagina), गृहिण (Cervix) एवं गर्भाशय (Uterus) में परिवर्तन- गर्भावस्था में हारमोन का प्रभाव प्रजनन अंगों पर बहुत अधिक पड़ता है। एस्ट्रोजेन हारमोन के कारण योनि मार्ग की श्रृंणिक झिल्ली अधिक मोटी हो जाती है। योनि मार्ग की शिराएं भी फूल जाती हैं। गर्भाशय के द्वार (गृहिण) के आकार में भी परिवर्तन होता है। इसकी पेशियाँ भी लचीला होकर ढीली हो जाती हैं। इसमें रक्त की कोशिकाओं का जाल बढ़ जाता है जिससे यह सूजा हुआ सा प्रतीत होता है।

13. अन्य परिवर्तन- उपरको सभी परिवर्तनों के अतिरिक्त गर्भावस्था में पिनलेवंक (Bile) तथा कोलेस्ट्रोल अधिक निरंजन होने लगते हैं तथा यकृत को अधिक कार्य करना पड़ता है जिससे भोजन का पाचन प्रभावित होता है। इसी अवस्था में भूण के वकृत में लोह तत्त्व भी संग्रहित होते हैं।

गर्भावस्था में इन्हें सव शारीरिक परिवर्तनों के कारण खी को इस समय सन्तुलित आहार की आवश्यकता होती है क्योंकि एक सुपोषित खी को गर्भधारण में व गर्भावस्था में कम कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

2.3.2 गर्भावस्था में पीठिक तत्त्वों की आवश्यकता

1. ऊर्जा- गर्भावस्था में ऊर्जा की मांग बढ़ जाती है। गर्भावस्था में खी के वजन एवं शरीर के आकार में बृद्धि होती है। इन दोनों में बृद्धि होने से आधारीय उपायमयिक दर में बृद्धि हो जाती है। परिणामतः ऊर्जा की मांग बढ़ जाती है। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद् (Indian Council of Medical Research, ICMR) के भोज्य विशेषज्ञों ने गर्भावस्था में 300 kcal अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता अनुसूचित की है।

2. प्रोटीन- गर्भवाती को सामान्य खी की अपेक्षा अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है। गर्भे मिश्रण के शरीर निर्माण, गर्भवाती खी के शरीर के उत्तरकाल में टूट-फूट की मस्तमत एवं नये तन्तुओं के निर्माण हेतु प्रोटीन की नितांत आवश्यकता होती है। I.C.M.R. के भोज्य विशेषज्ञों ने
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रोटीन की पूर्ति के लिए गर्भवती स्तन को सामान्य स्थिति की अपेक्षा 23 ग्राम अतिरिक्त प्रोटीन की मात्रा प्रस्तावित की है। यह प्रोटीन के उत्तम स्रोत जैसे दूध, दूध से बने पदार्थ, माँस, मछली, अण्डा, सोयाबीन, सूखे मेवे, बालों इत्यादि द्वारा लिया जा सकता है।

3. वसा- गर्भवती स्तन को प्रतिदिन 30 ग्राम वसा की मात्रा लेनी चाहिए। गर्भवस्था में वसा की अत्यधिक मात्रा की आवश्यकता नहीं होती। स्वस्थ प्रसव व मोटापे से बचने के लिए संतुष्ट वसा जैसे डालडा के उपयोग से बचना चाहिए। असंतुष्ट वसा का उपयोग श्रेयस्कर है जो वनस्पति तेलों से लिया जा सकता है।

4. कैल्शियम- गर्भस्थ शिशु की अवस्थाओं एवं दौरों के विकास में कैल्शियम का महत्वपूर्ण स्थान है। एक समायुक्त बोतल रक्त के शरीर में लगभग 25-30 ग्राम कैल्शियम होता है जिसमें से ज्यादातर यह गर्भवस्था की तीसरी तिमाही में संग्रहित करता है। अतः, गर्भवती स्तन की कैल्शियम आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं। गर्भवती स्तन को प्रतिदिन 1.2 मिलीग्राम कैल्शियम आहार के माध्यम से लेना चाहिए। दूध, पनीर, दही, छाछ, खीर जैसे मेवे, बालों इत्यादि भी कैल्शियम उपयोग प्रदान कर सकते हैं। इन्हें आहार शामिल करने के बाद भुने जा सकता है।

5. लौह लवण- गर्भस्थ शिशु के शरीर में रक्त एवं हिमोग्लोबिन निर्माण के लिए लौह लवण आवश्यक होता है। नवजात शिशु के शरीर में कुछ मात्रा में लौह लवण संग्रहित भी रहता है जिससे 4-6 महीने में उसकी लौह लवण की आवश्यकता अपूर्ण होती है। ज्यादातर मात्रा में लौह माता के दूध में लोहे की मात्रा कम होती है जब तक माता के आहार से वर्तमान मात्रा में लौह तत्व उपस्थित नहीं होता है। अतः गर्भवती स्तन को लौह लवण आहार निर्माण कर शामिल करना चाहिए।

6. आयोडीन- गर्भवती स्तन की आधारीय उपावधान दर (बी0एम0आर0) बढ़ जाने से आयोडीन की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। अतः गर्भवती स्तन को आयोडीनयुक्त नमक का ही सेवन करना चाहिए।

7. जिंक- जिंक का भी गर्भवस्था में उचित महत्व होता है। एक स्वस्थ गर्भवस्था के लिए जिंक की उचित मात्रा अत्यंत आवश्यक है। इसकी कमी से न केवल गर्भपात का खतरा होता है बल्कि शिशु
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

मानसिक रूप से विकलांग होने की भी सम्भावना बढ़ जाती है। गर्भवती खी को 12 मिलीग्राम जिंक प्रतिदिन लेना चाहिए।

8. विटामिन ए- गर्भावस्था में माता के आहार में विटामिन ए की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए।

गर्भावस्था में 800 माइक्रोग्राम विटामिन ए की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। सभी प्रकार के पीले फल जैसे पपीता, आम, गाजर, कदू, हरी पनसिया सब्जियाँ आदि विटामिन ए के अच्छे स्रोत होते हैं। इन्हें आहार में उचित मात्रा में शामिल करना चाहिए।

9. विटामिन सी- शरीर में प्रतिक्षण क्षमता (रोगों से लड़ने की क्षमता) में वृद्धि के लिए विटामिन सी अत्यावश्यक है। गर्भावस्था शिशु के विकास में विटामिन सी का अपूर्व योगदान होता है क्योंकि यह शरीर में कोलेजन का निर्माण करता है। कोलेजन शरीर की विभिन्न कोशिकाओं एवं ऊतकों को जोड़ने के काम आता है। प्रस्तुत व्यक्ति गर्भवती खी को प्रतिदिन 60 मिलीग्राम विटामिन सी की आवश्यकता होती है। आहार में कूट ओर फल बज नाजी सब्जियों को शामिल करके विटामिन सी प्राप्त किया जा सकता है।

10. विटामिन बी- गर्भावस्था में विटामिन बी समूह की भी आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं।

• थायिमन- गर्भावस्था में इसकी 0.2 मिलीग्राम अतिरिक्त मात्रा प्रस्तावित की गयी है। सब्जी अनाज और शुष्क खमीर में यह मिलता है। व्यक्ति हरी सब्जियों, मेवे, मूँगफली, मछली, यकृत और फल में पाया जाता है।

• राइबोफ्लॉवन- इसके लिए चूले, दूध, पनीर, यकृत, ब्रूकलिन, सूखे मटर, सोयाबीन, अंकुरी चना आदि का आहार, जो इसके अच्छे स्रोत होते हैं। गर्भवती खी को इसकी 0.3 मिलीग्राम अतिरिक्त मात्रा प्रस्तावित की गई है।

• नियासिन- इसके लिए दूध, दुध उत्पादों को भोजन में अच्छी मात्रा में शामिल करना चाहिए।

• विटामिन बी6- इसकी 2.5 मिलीग्राम अतिरिक्त मात्रा प्रस्तावित की गई है। इसकी योग्यता लाल चव्वाच और फल में मिलती है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• विटामिन बी12- विटामिन बी12 को साइनोकोबालामिन भी कहते हैं। यह 1.2 माइक्रोग्राम प्रतिदिन आवश्यक होता है। इसके लिए दूध, दही, अण्डा, मॉस, मछली, युक्त, पनीर, छाछ आदि का सेवन करना चाहिए।

• फॉलिक अम्ल- रक्त की अतिरिक्त आवश्यकता के कारण फॉलिक अम्ल की आवश्यकता बढ़कर 500 माइक्रोग्राम प्रतिदिन हो जाती है। हरी पत्ती सब्जियाँ, फलियाँ, फूसरफुसर, ताजे फल एवं फलों का रस, साजुत अनाज, युक्त, अण्डे आदि फॉलिक अम्ल के अच्छे खाद्य स्रोत हैं।

11. अन्य तत्व- गर्भवास्था में उपरोक्त पोषक तत्वों के अतिरिक्त कुछ अन्य तत्वों को भी ध्यान रखना चाहिए जैसे-

• जल एवं तरल पदार्थ- उपयुक्त स्वास्थ्य के लिए उचित मात्रा में जल एवं तरल पदार्थ अति आवश्यक होते हैं। गर्भवती बीं को प्रतिदिन 1.5-2 लीटर पानी पीना चाहिए। फलों का रस, सूप, शरीर, छाछ आदि पेय पदार्थ भी दैनिक आहार में सम्मिलित करने चाहिए।

• आहारीय रेश्मा- गर्भवास्था में प्रायः सभी खिस्मों को कब्ज़ की शिकायत रहती है। अतः साजुत अनाज, छिलकेदार फल, अंकुरित अनाज, हरी पत्ती सब्जियाँ आहार में शामिल करने चाहिए। इससे शरीर में भरपूर मात्रा में रेश्मा पहुँचेगा और कब्ज़ से बचाव होगा।

• कैफिन- गर्भवास्था में अत्यधिक मात्रा में कैफीनयुक्त पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए, जैसे चाय, कॉफी, कोला एवं कोको। कैफिन के अत्यधिक सेवन से गर्भपाट, समय से पहले प्रसव आदि खतरों की समस्याबाद बढ़ जाती है।

• धूरुपान- तमाखू में हानिकारक पदार्थ उपस्थित होते हैं। यह गर्भनाल में ओक्सीजन भूषण को तुक्सान पहुँचाते हैं। इससे भूषण को कम ओक्सीजन मिल पाती है इससे समय से पहले प्रसव हो सकता है। अतः धूरुपान को गर्भवास्था में निषेध करना चाहिए।

• मदापान- मदापान करने से भूषण में अनेक असमानताएं एवं विकृतियाँ हो जाती हैं, जैसे मानसिक विकलांगता, आँखें एवं नाक की विकृतियाँ, पोषक तत्वों की कमी तथा उनसे उत्पन्न समस्याएं इत्यादि। इसी कारण गर्भवास्था में मदापान नहीं करना चाहिए।

2.3.3 गर्भवास्था में आहार नियोजन हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

गर्भवती खी के आहार का चयन करते समय बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। कु योग्य ही नहीं बल्कि गर्भवती खी के समय बहुत हानिप्रद होता है। आहार का चुनाव करते समय निम्न बातों का ध्यान रखें-

- माता व भूम के स्वस्थ्य के लिए शरीर निर्माणक व संरक्षक प्रोटीन को ऊर्जादायक व वसायुक्त खाद्यों की अपेक्षा आहार में प्रमुखता देनी चाहिए।
- भोजन में परिवर्तन व विभिन्नता को भी ध्यान में रखना चाहिए, जिससे उचित पोषक तत्व सरलता से प्राप्त किये जा सकें।
- जल को भी आहार में महत्वपूर्ण स्थान देना चाहिए।
- भोजन करते समय मानसिक स्थिति प्रसन्नतित व चिंतारहित होनी चाहिए।
- रात्रि को सोने से पहले 2-3 प्रणेत्र पूर्व भोजन कर तेज चाहिए।
- प्रतिदिन के आहार में हरी पतलेदार सब्जियाँ, अंजुमित दालें व अनाज, दूध व दूध से बने पदाथर, उत्तम कोटि के प्रोटीन युक्त खाद्य जैसे अण्डा, मौसमी फल, चोकर सहित आटे की रोटी, छिलके सहित दाल, रेसीपी भोज्य पदाथर सम्मिलित करने चाहिए।
- बासी भोजन व अधिक मिठाई मसालेदार गरिछ भोजन से परहेज करना चाहिए क्योंकि वे देर से पकते हैं तथा पाचन समय स्वास्थ्य कई गड़बड़ियाँ उत्पन्न करते हैं।
- आयोडीन की पूर्ति हेतु आयोडीनमुक्त नमक का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- पौँडा रहित दाल व चावल का प्रयोग करना चाहिए।
- गर्भवती खी को दिन में एक-दो बार भरपूर भोजन प्रहण करने के स्थान पर 5-6 बार थोड़ा-थोड़ा करके खाना चाहिए। सम्पूर्ण दिन का भोजन हल्का और स्वच्छांग होना चाहिए।

2.3.4 गर्भवती खी हेतु एक दिन की आहार तालिका

मध्यम व्रतीय गर्भवती खी के लिए एक दिन की आहार तालिका-

प्रस्तावित दैनिक आवश्यकता-

ऊजाय: 2230+350 = 2580 kcal

प्रोटीन: 55+23 = 78 gm
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

खाद्य विनिमय सूची के अनुसार आहार योजना

*आहार विनिमय सूची के बारे में जानने हेतु MAHS-01 की खाद्य एवं पोषण की अभ्यास सामग्री को देखें।

<table>
<thead>
<tr>
<th>विनिमय</th>
<th>मात्रा</th>
<th>ऊज्ज (kcal)</th>
<th>प्रोटीन (gm)</th>
<th>कार्बोहाइड्रेट (gm)</th>
<th>वसा (gm)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>3</td>
<td>442.5</td>
<td>23.25</td>
<td>35.25</td>
<td>24</td>
</tr>
<tr>
<td>माँस/पनीर</td>
<td>1</td>
<td>70</td>
<td>7</td>
<td>-</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>दाल</td>
<td>2</td>
<td>200</td>
<td>14</td>
<td>20</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>15</td>
<td>1050</td>
<td>30</td>
<td>255</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>हरी पतंदार सब्जियाँ</td>
<td>2</td>
<td>80</td>
<td>-</td>
<td>6</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>3</td>
<td>120</td>
<td>6</td>
<td>30</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>2</td>
<td>80</td>
<td>-</td>
<td>20</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा</td>
<td>8</td>
<td>360</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
<td>40</td>
</tr>
<tr>
<td>चीनी</td>
<td>9</td>
<td>180</td>
<td>-</td>
<td>45</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>योग</td>
<td></td>
<td>2582.5</td>
<td>80.25</td>
<td>411.25</td>
<td>69</td>
</tr>
</tbody>
</table>

# अन्य सब्जियाँ में जड़ एवं कंदमूल भी सम्मिलित हैं।

आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार</th>
<th>विनिमय</th>
<th>मात्रा</th>
<th>मीनू</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>6:30 a.m.</td>
<td>दूध</td>
<td>0.25</td>
<td>चाय</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td>1</td>
<td>बिस्कुट</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>वसा</td>
<td>0.5</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>------------</td>
<td>-----</td>
<td>--------------------------</td>
<td>--------------</td>
</tr>
<tr>
<td>8:30 a.m.</td>
<td></td>
<td>दूध</td>
<td>कॉफी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>दाल</td>
<td>पालक बेसन परांठा</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>दही</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>हरी पतेदार सब्जियाँ</td>
<td>अमरूद</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>फल</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>1.5</td>
<td>वसा</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>11:30 a.m.</td>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>मुरमुरा/चिवड़ा</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td>नमकीन</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>नीबू पानी</td>
</tr>
<tr>
<td>1:30 p.m.</td>
<td></td>
<td>दूध</td>
<td>चने की दाल</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>0-5</td>
<td>दाल</td>
<td>भरवाँ बेंगन</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>पुदीना रायता</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>हरी पतेदार सब्जियाँ</td>
<td>सलाद</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>चावल</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>रोटी</td>
</tr>
<tr>
<td>5:30 p.m.</td>
<td></td>
<td>दूध</td>
<td>पोहा</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>फल</td>
<td>बनाना शेक</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>
## नैदालिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>चीनी</th>
<th>1-5</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>8:30 p.m.</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>0-5</td>
</tr>
<tr>
<td>मांस</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>हरी पतंदार सब्जियाँ</td>
<td>0-5</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>चीनी</td>
<td>1-5</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### अभ्यास प्रश्न 1

1. गर्भवस्था में निम्न पोषक तत्वों की अनुशंसित की मात्रा बताएं:
   a. प्रोटीन
   b. थायमिन
   c. विटामिन सी
   d. लौह लवण
   e. वसा

2. सही अथवा गलत बताएं।
   a. गर्भवस्था में खी की उपायविधिक दर बढ़ जाती है।
   b. गर्भवस्था में वसा अत्यधिक मात्रा में खाना चाहिए।
   c. गर्भवती खी को रोशोध भोजन पदार्थों से परहेज करना चाहिए।
   d. गर्भवस्था में अक्सर पदार्थ जैसे निष्ठु आदि खाने की आदत ‘पिका’ कहलाती है।
   e. गर्भवती खी को आयोडीनुक्त नमक इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।
2.4 धात्रीवस्था

शिशु के जन्म के उपरान्त माता की उस अवस्था को धात्रीवस्था कहते हैं जब तक माता अपने शिशु को दूध पिलाती है। शिशु जन्म के तुर्क बाद से ही माता के स्तनों में दूध साबित होने लगता है। माता का दूध शिशु के लिए इंतज़ की देन है क्योंकि इससे शिशु की आवश्यकतानुसार सभी पोषक तत्व उचित माता में उपस्थित होते हैं। शिशु जन्म से लगभग एक वर्ष की आयु तक स्तनपान करता है। अतः इस अवस्था में खींच के शरीर में दूध का निर्माण होने के कारण पीठिक तत्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है। उत्तम पोषण लेकर पर्याप्त माता में दूध निर्माण द्वारा शिशु पोषण व स्वास्थ्य सुनिश्चित किया जा सकता है।

2.4.1 स्तनपान कराने से माँ को लाभ

स्तन पान द्वारा शिशु को केवल पोषण ही नहीं मिलता अपितु यह माता के लिए भी निम्न लाभ प्रदान करता है:

- माता और शिशु के बीच भावनात्मक सम्बन्ध मजबूत बनता है।
- स्तनपान कराने वाली माताएं देर से गृहरक्ष्य होती हैं क्योंकि स्तनपान प्रक्रिया एक प्राकृतिक गर्मिनिरूपक विधि की तरह कार्य करती है।
- स्तनपान से गर्भाशय अपनी पूर्व आकृति को शीर्षता से प्राप्त कर लेता है क्योंकि इस क्रिया में गर्भाशय की पेशियों का संकुचन उचित ढंग से होता है।
- माता जब चाहे शिशु को स्तनपान करा सकती है।
- स्तनपान कराने से माँ को मानसिक सन्तुष्ट एवं खुशी मिलती है।

2.4.2 धात्रीवस्था को प्रभावित करने वाले कारक

एक स्वस्थ माता जो प्रतिदिन सन्तुलित एवं पौष्टिक भोजन प्रणव करती है वह लगभग एक वर्ष तक दूध साबित करती है।  फर्तु कुपोषण तथा अन्य कारणों से दूध कम मात्र में साबित होता है। इससे शिशु के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। धात्रीवस्था में माता के दूध को प्रभावित करने वाले मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:

1. माता की उम्र- माता की उम्र सामान्यतः धात्रीवस्था को प्रभावित करती है। वह देखा जाता है कि यदि माता की उम्र 35 वर्ष से अधिक होती है तो उसकी धात्रीवस्था कम समय की होती है या वह कम दूध साबित कर पाती है। सम्भवतः उम्र अधिक हो जाने से पेशियों का लचीलापन कम हो जाना
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

इसका कारण हो सकता है जिसके फलस्वरूप दुष्धवाहिनी नलिकाओं का पूरा विकास नहीं हो पाता है।

2. माता की मानसिक स्थिति- कई भावनाओं के कारण माताएं शिशु को स्तनपान कम करती हैं। जैसे स्तनपान से उनकी शरीर आकृति खराब होने का भय आदि। शिशु को स्तनपान करने की इच्छा में कमी से स्वतः ही दूध सावर पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

3. माता का आहार- यदि माता पूर्ण पोषक एवं सन्तुलित आहार प्राप्त करती है तो दूध सावर भी अच्छा होता है तथा दूध की गुणवत्ता भी अच्छी होती है क्योंकि उस दूध में सभी पोषक तत्व विद्यमान होते हैं। कुपोषित माता को दूध तो कम होता ही है साथ ही उन पोषक तत्वों की भी कमी होती है जिनकी माता के शरीर में कमी होती है।

4. माता का व्यवस्थ- यदि माता कुपीत, रोगी, अत्यधिक कमजोर व निर्बल होती है तो उसकी धातीवस्था भी नकारात्मक दंग से प्रभावित होती है।

5. धाती अवस्था का बढ़ता समय- शिशु जन्म से लेकर 6 माह तक माता को अधिक मात्र में पोषक तत्वों से भर्पूर दूध सावर होता है। यह शिशु पोषण के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। इसके पश्चात् इसकी मात्र कम होती जाती है अतः शिशु को ऊपरी आहार खिलाया जाना चाहिए।

6. प्रोलेक्टिन हारमोन के अल्प सावर द्वारा- दूध सावर पिट्यूटरी प्रतिथि से निकलने वाले प्रोलेक्टिन हारमोन से प्रभावित होता है। यदि ये हारमोन अल्प मात्र में साखित होता है, तो दूध का निर्माण भी कम होता है।

7. माता के स्तन का दोषपूर्ण होना- माता के स्तन के दोषपूर्ण या विकृत होने पर वह स्तनपान नहीं करवा पाती है। फ़र्मानशत: धीरे-धीरे शिशु का मात्र के दूध के प्रति आकर्षण समाप्त हो जाता है।

8. शिशु के मुख की विकृति- कई बार यह भी होता है कि माता के शरीर में दूध की कमी नहीं होती। परन्तु यदि बालक शारीरिक रूप से स्वस्थ, कम शारीरिक वजन तथा कमजोर होता है तो वह दूध भी नहीं पाता। मुख में किसी विकृति जैसे कटा होता, तलवा व जीभ फटा होना आदि के कारण शिशु को दूध पीने में कठिनाई होती है।

9. समय की कमी- धाती माता यदि काम करती है व अत्यधिक व्यस्त दिनचर्या व्यतीत करती है तो वह कई-कई घण्टे बाहर होने के कारण स्तनपान नहीं करवा पाती। ऐसी परिस्थिति में भी दूध की मात्रा धीरे-धीरे कम हो जाती है।

2.4.3 धातीवस्था में पोषक तत्वों की आवश्यकता
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

I.C.M.R. के अनुसार एक धाट्री माता प्रतिदिन 600-800 मिली लीटर दूध उत्पादित करती है। दूध की मात्रा प्रसव के तुरंत बाद कम होती है जो बढ़ते-बढ़ते 6 महीने में अपने चरम पर आ जाती है। इसके बाद दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता घटने लगती है। अतः I.C.M.R. ने पोषक तत्वों की आवश्यकतानुसार धाट्रीवस्था को दो भागों में बांटा है:
• 0-6 महीने
• 6-12 महीने

धाट्रीवस्था में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता इस प्रकार है:

1. ऊर्जा- दूध साथ के कारण धाट्री माता को अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता गर्भवस्था से भी अधिक मानी गयी है। I.C.M.R. के अनुसार 0-6 महीने में 600 किलो कैलोरी (kcal) तथा 6-12 महीने में 520 kcal अतिरिक्त ऊर्जा धाट्री माता को लेनी चाहिए। धाट्री माता 1 वर्ष के बाद सामान्य आहार ले सकती है क्योंकि तब तक दूध साथ लगभग समाप्त हो जाता है व शिशु सम्पूर्णत: पूरक आहार प्रणाली लगता है।

2. प्रोटीन- माता के २० में प्रोटीन की अच्छी मात्रा होने के कारण उसकी प्रोटीन की आवश्यकताएं काफी मात्रा में बढ़ जाती है। 0-6 महीने में 19 ग्राम तथा 6-12 महीने में 13 ग्राम अतिरिक्त प्रोटीन माता को अपने आहार में शामिल करना चाहिए। प्राणिज भोजन विद्यमान जैसे दूध, अण्डा, माँस, मछली प्रोटीन प्राप्त के उत्तम साधन हैं तथा इससे उच्च कोटि का प्रोटीन क्राइट होता है। दालों, सोयाबीन, मेवे आदि भी प्रोटीन के अच्छे वनस्पति स्रोत हैं। अतः भोजन में इनका योग अवश्य किया जाना चाहिए।

3. वसा- गर्भवस्था की तरह ही धाट्री अवस्था के किसी भी चरण में अतिरिक्त वसा की आवश्यकता नहीं होती। धाट्री माता को सामान्य खाना की तरह ही 30 ग्राम वसा का प्रतिदिन सेवन करना चाहिए।

4. कैलोरियम- माता के २० में कैलोरियम की उच्चत मात्रा पायी जाती है। अतः धाट्री माता को गर्भवस्था की तरह कैलोरियम की मात्रा का भोजन में ध्यान रखना चाहिए। धाट्रीवस्था के दोनों चरणों में प्रतिदिन 1.2 ग्राम कैलोरियम की आवश्यकता होती है। इसके उच्च तौर पर आहार के अधिक मात्रा में शामिल करना चाहिए।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

5. लौह लवण: धात्रीवस्था में सामान्यतः किसी को मासिक साव कम होता है या रुक जाता है व शिशु रफ्त निर्माण जैसी आवश्यकताएं भी नहीं होती। धात्री माता को प्रतिदिन 21 मिलीग्राम लौह लवण आहार के माध्यम से लेना चाहिए।

6. विटामिन ए: धात्री माता द्वारा सावित रूप से विटामिन ए का अच्छा स्रोत होता है। अतः विटामिन ए की आवश्यकता गर्भवती रूप से अधिक हो जाती है। धात्रीवस्था में 950 रेटोनाल की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता 1 वर्ष तक की धात्रीवस्था के लिए मानी गयी है।

7. विटामिन सी: धात्रीवस्था में विटामिन सी की आवश्यकता होती है। आहार को पकाते समय उसका विटामिन सी काफी मात्रा में नष्ट हो जाता है। अतः विटामिन सी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए आहार में ताजी तथा कच्ची और खट्टे से तथा मौसम के फलों का बहुतायत उपयोग करना चाहिए।

8. विटामिन बी: धात्रीवस्था में विटामिन बी की समूह की आवश्यकताएं निम्न हैं -

- **थायमिन**: थायमिन की आवश्यकता सम्पूर्णतः ऊर्जा आवश्यकताओं से प्रभावित होती है। अतः 0-6 महीने में 0.3 मिलीग्राम व 6-12 महीने में 0.2 मिलीग्राम अतिरिक्त थायमिन की आवश्यकता होती है। धात्रीवस्था के प्रथम चरण में ऊर्जा की अधिक आवश्यकता होने से थायमिन की आवश्यकता भी बढ़ जाती है।

- **राइबोफ्लेविन**: 0-6 महीने में 0.4 मिलीग्राम व 6-12 महीने में 0.3 मिलीग्राम अतिरिक्त राइबोफ्लेविन की आवश्यकता होती है। इसकी मात्रा भी ऊर्जा की आवश्यकता से प्रभावित होती है।

- **नियासिन**: धात्री माता को 0-6 महीने में 4 मिलीग्राम व 6-12 महीने में 3 मिलीग्राम अतिरिक्त नियासिन की आवश्यकता होती है।

- **विटामिन बी6**: विटामिन बी 6 की मात्रा गर्भवती के समान अर्थात् 2.5 मिलीग्राम प्रतिदिन ही मानी गई है।

- **विटामिन बी12**: धात्रीवस्था के दोनों चरणों में इसकी आवश्यकता 1.5 माइक्रोग्राम प्रतिदिन प्रस्तावित की गयी है।

- **फोलिक अम्ल**: धात्रीवस्था में फोलिक अम्ल की मात्रा गर्भवती की तुलना में कम हो जाती है। धात्रीवस्था में 300 माइक्रोग्राम फोलिक अम्ल प्रतिदिन लेना चाहिए।
9. जिंक- जिंक की मात्रा धातीवस्था में भी गर्भावस्था के समान ही रहती है अर्थात् 12 मिलीग्राम प्रतिदिन।

2.4.4 धात्री माता के लिए आहार नियोजन करते समय ध्यान देने पोषण बातें

उचित पोषण की जितनी आवश्यकता गर्भवती खरी को है उतनी ही धात्री माता को भी होती है। धात्री माता के लिए आहार आयोजन करते समय कुछ आवश्यक बातों का ध्यान रखना चाहिए:

- इस अवसथा में दूध, अण्डा, माँस, मछली, पनीर, छाछ आदि भोज्य पदार्थों को अधिक मात्रा में आहार में शामिल करना चाहिए क्योंकि इनमें उतम गणवता का प्रोटीन पाया जाता है।
- धात्री माता को अधिक जल पीना चाहिए क्योंकि दूध खाते हुए के कारण शरीर में पानी की कमी हो जाती है।
- फलों का रस, सब्जियों का सूप, छाछ एवं अन्य तरल भोज्य पदार्थों की मात्रा आहार में बढ़ा देनी चाहिए।
- गरिछ, तला-भुना एवं बासी भोजन से परहेज रखना चाहिए।
- अधिक मिर्च- मसालेदार भोजन नहीं खाने चाहिए।
- कैल्शियम की बढ़ी हुई आवश्यकता के लिए दूध एवं दूध उत्पाद, सूखे मेवे आदि उचित मात्रा में लेने चाहिए।
- एक साथ ज्यादा भोजन न करके थोड़ी- थोड़ी देर में कुछ-न कुछ खाना चाहिए।
- दिन भर के भोजन को तीन मुख्य व तीन छोटे आहार में बांट लें। अर्थात् दिन में 6-7 बार आहार ग्रहण करना चाहिए।
### नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

#### तालिका 2.3: पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा

स्रोत: [www.ninindia.org](http://www.ninindia.org)

<table>
<thead>
<tr>
<th>श्रेणी</th>
<th>विटामिन ए (माइग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>थायमिन (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>राइबोफल्टिन (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>नियासिन (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>विटामिन बी 6 (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>विटामिन बी 12 (माइग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>फोलिक अम्ल (माइग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>मैनीशियम (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>अत्याधिक श्रम</td>
<td>600</td>
<td>4800</td>
<td>1</td>
<td>1.1</td>
<td>12</td>
<td>2.0</td>
<td>1</td>
<td>200</td>
</tr>
<tr>
<td>मध्यमश्रम</td>
<td>800</td>
<td>6400</td>
<td>+0.2</td>
<td>+0.3</td>
<td>+2</td>
<td>1.2</td>
<td>500</td>
<td>310</td>
</tr>
<tr>
<td>गर्भावस्था</td>
<td>950</td>
<td>7600</td>
<td>+0.3</td>
<td>+0.4</td>
<td>+4</td>
<td>2.5</td>
<td>1.5</td>
<td>300</td>
</tr>
<tr>
<td>धातुवस्था 0-6 महीने</td>
<td>6-12 महीने</td>
<td>+0.2</td>
<td>+0.3</td>
<td>+3</td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

स्रोत: [www.ninindia.org](http://www.ninindia.org)
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>श्रेणी</th>
<th>ऊर्जा किलो (कैलोरी प्रतिदिन)</th>
<th>प्रोटीन (ग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>वसा (ग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>कैलिशम (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>लोहा (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>विटामिन सी (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
<th>लिंक (मिलिग्राम प्रतिदिन)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>अत्यपश्रम</td>
<td>1900</td>
<td>20</td>
<td>600</td>
<td>21</td>
<td>40</td>
<td>10</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>मध्यपश्रम</td>
<td>2230</td>
<td>25</td>
<td>600</td>
<td>21</td>
<td>40</td>
<td>10</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>अत्यधिक पश्रम</td>
<td>2850</td>
<td>30</td>
<td>600</td>
<td>21</td>
<td>40</td>
<td>10</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>गर्भावस्था</td>
<td>+350</td>
<td>+23</td>
<td>1200</td>
<td>21</td>
<td>80</td>
<td>12</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>धात्रीवस्था 0-6 महीने</td>
<td>+600</td>
<td>+19</td>
<td>1200</td>
<td>21</td>
<td>80</td>
<td>12</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>6-12 महीने</td>
<td>+520</td>
<td>+13</td>
<td>1200</td>
<td>21</td>
<td>80</td>
<td>12</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

तालिका 2.4: पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा

2.4.5 धात्री खरी हेतु एक दिन की आहार तालिका

मध्यम क्रियाशील धात्री माता (0-6 माह) हेतु एक दिन की आहार तालिका

प्रस्तावित दैनिक आवश्यकता

ऊर्जा – 2230+600=2830 kcal

प्रोटीन- 55+19=74 gm

खाद्य विनिमय सूची से अनुसार आहार योजना-

<table>
<thead>
<tr>
<th>विनिमय</th>
<th>मात्रा</th>
<th>ऊर्जा (kcal)</th>
<th>प्रोटीन (gm)</th>
<th>कार्बोहाइड्रेट (gm)</th>
<th>वसा (gm)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>3</td>
<td>442-5</td>
<td>23-25</td>
<td>35-25</td>
<td>24</td>
</tr>
<tr>
<td>मांस</td>
<td>1</td>
<td>70</td>
<td>7</td>
<td>-</td>
<td>5</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>वस्‌कण</th>
<th>वातन</th>
<th>माना</th>
<th>मीनू</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दाल</td>
<td>2</td>
<td>200</td>
<td>14</td>
</tr>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>16</td>
<td>1120</td>
<td>32</td>
</tr>
<tr>
<td>हरी पतेदार सब्जियाँ</td>
<td>5</td>
<td>200</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>3</td>
<td>120</td>
<td>6</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>2</td>
<td>80</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा</td>
<td>9</td>
<td>405</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>चीनी</td>
<td>10</td>
<td>200</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>योग</td>
<td></td>
<td>2837.5</td>
<td>82.25</td>
</tr>
</tbody>
</table>

आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार</th>
<th>विनिमय</th>
<th>मात्रा</th>
<th>मीनू</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>6:30 a.m.</td>
<td>दूध</td>
<td>0.25</td>
<td>चाय बिस्कुट</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td>2</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>0.5</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>8:30 a.m.</td>
<td>दूध</td>
<td>0.5</td>
<td>दूध कार्नफलेक्स</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>मांस</td>
<td>1</td>
<td>उबला अप्पा</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>3</td>
<td>ब्रैड बटर</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>0.5</td>
<td>केला</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td>2</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>फल</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>11:30 a.m.</td>
<td>दूध</td>
<td>0.25</td>
<td>चाय</td>
</tr>
<tr>
<td>Time</td>
<td>Food Items</td>
<td>Amount</td>
<td>Description</td>
</tr>
<tr>
<td>-------</td>
<td>--------------------------</td>
<td>--------</td>
<td>----------------------------------</td>
</tr>
<tr>
<td>08:30</td>
<td>दूध</td>
<td>0.5</td>
<td>सब्जियों का सूप</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दाल</td>
<td>1</td>
<td>लोबिया की दाल</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>4</td>
<td>कटूठ की सब्जी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>हरी सब्जियाँ</td>
<td>2</td>
<td>आलू का रान्ता</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>2</td>
<td>रोटी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>2</td>
<td>चावल</td>
</tr>
<tr>
<td>13:00</td>
<td>दूध</td>
<td>0.5</td>
<td>स्ट्रॉबेरी शेक</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दाल</td>
<td>1</td>
<td>वेजीटेबल कटलेट</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>2</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>हरी सब्जियाँ</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>0.5</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>फल</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>2</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चीनी</td>
<td>2</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>20:00</td>
<td>दूध</td>
<td>0.5</td>
<td>मिक्स दाल</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दाल</td>
<td>1</td>
<td>भिन्डी की सब्जी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अनाज</td>
<td>4</td>
<td>सलाद</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>हरी सब्जियाँ</td>
<td>2</td>
<td>चावल</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>1</td>
<td>रोटी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वसा</td>
<td>2</td>
<td>प्याज-टमाटर का रान्ता</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th></th>
<th>दूध</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10:00 p.m.</td>
<td>चीनी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>0.5</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>
| अभ्यास प्रश्न 2

1. धात्रीवस्था के दोनों चरणों में निम्न पोषक तत्त्वों की अनुशासित आवश्यकता बताएं।
   a. ऊर्जा
   b. राइबोफ्लैविन
   c. फोलिक अम्ल
   d. विटामिन बी6
   e. विटामिन बी12

2. सही अथवा गलत बताएं।
   a. धात्री माता को जल कम पीना चाहिए।
   b. धात्री माता को प्रसव के प्रथम 3 महीने अधिक दूध साबित होता है।
   c. जॉलिंटेन हार्मोन के अल्प क्षय से दूध का निर्माण कम होता है।
   d. माता के दूध में बैलियम नहीं पाया जाता।
   e. धात्रीवस्था में प्रोटीन की अत्यधिक आवश्यकता नहीं होती है।

2.5 सारांश

गर्भावस्था में खी एक नये जीव को विकसित करती है एवं धात्रीवस्था में वह दृष्ट कावन करके शिशु को पोषण उपलब्ध कराती है। अतः गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था पोषण की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन दोनों ही अवस्थाओं में अनेक शारीरिक बदलावों के कारण कई अस्थायी स्वास्थ्य समस्याएं जैसे कमर दर्द, कब्ज आदि उत्पन्न हो जाती हैं। इन समस्याओं के बढ़ते हुये पोषक तत्त्वों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर आहार निवेदन ही माता एवं गर्भावस्थ शिशु के समुचित विकास व स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। इसी प्रकार से धात्री अवस्था भी माँ और शिशु पर अत्यधिक प्रभाव डालती है। कुरोषण प्रस्त माता स्वयं भी अनेक स्वास्थ्य समस्याओं से जुड़ी है, साथ ही शिशु के
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शुरूआती पोषण व स्वास्थ्य पर लुप्त असर डालकर उसके सम्पूर्ण जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। अतः धात्रीवस्था में भी माता के पोषण का अधिकारिक ध्यान रखना चाहिए।

2.6 पारिवारिक शादिवाली

- रक्त परिसंचरण: जीवित अवस्था में रक्त शरीर में संदेह संचरण करता रहता है। रक्त के इसी प्रकार से संचरण करने की क्रिया को रक्त परिसंचरण कहते हैं।

- संतृप्त वसा: यह वह वसा होती है जिसमें कोई कार्बन डबल बॉन्ड नहीं होता है। पशु की चर्बियों व मक्खन आदि वसा के प्राणिज स्रोत संतृप्त वसा के स्रोत हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह अच्छी नहीं मानी जाती।

- असंतृप्त वसा: यह वह वसा होती है जिसमें कार्बन डबल बॉन्ड उपस्थित होता है। यह स्वास्थ्य के लिए संतृप्त वसा से बेहतर मानी जाती है। यह वानस्पतिक तेलों जैसे सोयाबीन, कैनोला, ऑलिव आदि तेलों में पायी जाती है।

- आधारीय उपायचिक दर (Basal Metabolic Rate/ BMR): शरीर को जीवित रखने के लिए एक न्यूनतम मात्रा में ऊर्जा की जरूरत रहती है जिसे आधारीय उपायचिक कहा जाता है। व्यक्ति पूर्ण विश्राम अवस्था में एक घण्टे में जितनी ऊष्मा उत्पन्न करता है उसे व्यक्ति की आधारीय उपायचिक दर कहा जाता है।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. गर्भवस्था में निम्न पोषक तत्वों की अनुशंसित की मात्रा बताएं:
   a. +23 ग्राम
   b. +0.2 मिलीग्राम
   c. 60 मिलीग्राम
   d. 35 मिलीग्राम

2. सही अथवा गलत बताएं।
   a. सही
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषन

b. गलत
c. गलत
d. सही
e. गलत

अभ्यास प्रश्न 2

1. धातीवस्था के दोनों चरणों में निम्न पोषक तत्वों की अनुशासित आवश्यकता बताएं।
   a. 0-6 महीने +600 kcal एवं 6-12 महीने +520 kcal
c. 300 mg
d. 2.5 mg
e. 1.5 mg

2. सही अथवा गलत बताएं।
   a. गलत
c. सही
d. गलत
e. गलत

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. खाना कुंद्र: टेक्स्ट्बुक ऑफ न्यूरोशन एण्ड डाइटेटिक्स, ऐलीट पब्लिशिंग।
2. श्रीलक्ष्मी बी0: डाइटेटिक्स, न्यू एज इन्टरनेशनल पब्लिकेशन (पाँचवा संस्करण)।
3. स्मारिनाथ एम0: फूड एण्ड न्यूरोशन, बैपको पब्लिकेशन।
4. दक्षी बी0 के0: आहार एवं पोषण के मूल सिद्धांत, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. एनिया एफ0 पी0 एण्ड फिलिप्स एब्राहम: क्लिनिकल न्यूरोशन एण्ड डाइटेटिक्स, ऑक्सफोर्ड पब्लिकेशन (चौथा संस्करण)।

इंटरनेट स्रोत:
2.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. गर्भावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों का उल्लेख करें।

2. गर्भावस्था में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता पर प्रकाश डालें।

3. गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था में आहार नियोजन करते समय ध्यान रखने योग्य सुझाव लिखें।

4. धात्रीवस्था को प्रभावित करने वाले कारकों को समझाएं।

5. धात्रीवस्था में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता को विस्तृत रूप से समझाइये।
इकाई 3: शैशवावस्था में आहार

3.1 प्रस्तावना
3.2 स्वरूप
3.3 शैशवावस्था की विशेषताएं
3.4 शैशवावस्था में पीस्तिक तत्वों की आवश्यकता
3.5 शैशवावस्था के प्रारंभिक महीनों में आहार
  3.5.1 स्तनपान
  3.5.2 माता के दूध का संगठन
  3.5.3 स्तनपान के लाभ
  3.5.4 बोतल का दूध
3.6 शिशु का शैशवावस्था में मध्य एवं अन्तिम महीनों में आहार
  3.6.1 वींगिंग
  3.6.2 अनुपूरक आहार
3.7 शिशु को अनुपूरक आहार देते समय ध्यान रखने योग्य बातें
3.8 सारांश
3.9 परिभाषित शब्दावली
3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

जन्म से लेकर एक वर्ष तक की अवस्था की शैशवावस्था कहा जाता है। यह तीन मास के लिए विकास से पूर्व अवस्था है। जीवन की पहले वर्ष में शिशु की सभी जीवन अवस्थाओं की अपेक्षा अत्यंत तेजी से बढ़ता है। यही कारण है कि एक नवजात श्रीम जो सम्पूर्णतः अपनी माता पर आश्रित होता है, प्रथम वर्ष के अंत तक काफी मात्रा में शारीरिक एवं मानसिक योग्यताएं सीख जाता है। इसके अलावा शिशु कुछ मात्रा में भाषा ज्ञान, क्रियात्मक कौशल व संवेदनात्मक गतिविधियां भी करने लगता है। इस सब विकास दरों का निर्विभ सूचना से चलता शिशु के सम्पूर्ण जीवन के सामान्य रहने के
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषन

लिए अत्यन्त आवश्यक है। यदि इस अवस्था में पर्याप्त तथा सुचित खाद्य से शिशु बच्चत्व रह जाता है
तो निश्चित रूप से इसका नकारात्मक प्रभाव उसके सम्पूर्ण जीवन पर पड़ता है। अतः जीवन के
प्रारम्भिक काल में पोषण का महत्वपूर्ण स्थान है। माता-पिता अथवा अभिभावकों को शिशु की
पोषण आवश्यकताओं के प्रति जागरूक रहना चाहिए क्योंकि इस अवस्था में उसकी अस्थियों,
मौसेपियों, अंगों तथा मानसिक योग्यताओं का आधार निर्धारित होता है व उसके भविष्य का
विकास निश्चित होता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानेंगे;
• शैशवावस्था की विशेषताएं;
• शैशवावस्था में पौयात्मक तत्वों की आवश्यकता;
• शैशवावस्था के पारंगित महीनों में आहार; तथा
• शिशु का शैशवावस्था के मध्य एवं अन्तिम महीनों में आहार।

3.3 शैशवावस्था की विशेषताएं

शैशवावस्था में शिशु सभी विकास क्षेत्रों में अत्यन्त तेज दर से वृद्धि एवं विकास प्राप्त करता है।

1. शरीर के आकार में परिवर्तन- जीवन के प्रथम वर्ष में बहुत तेजी से आकार में परिवर्तन होता है।
एक सामान्य शिशु पाँच माह की आयु में अपने जन्म के बजाय से दोगुना हो जाता है तथा पहले वर्ष
के अन्त तक तीन गुना हो जाता है। शिशु का जन्म पर वजन 2.5-3.5 किलोग्राम तक होता है। इसी
प्रकार वह लम्बाई में भी तेजी से बढ़ता है। जन्म के समय शिशु की लम्बाई 50 सेंटीमीटर होती है
जो प्रथम वर्ष तक 75 सेंटीमीटर हो जाती है। इसके साथ ही शिशु के शरीरिक अनुपात भी काफी
तेजी से बदलते हैं।

2. शारीरिक संगठन में परिवर्तन- हमारे शरीर का सम्पूर्ण भार हमारी मौसेपियों, अंगों, शस्त्र
उत्तरोत्तर तथा हड्डियों से मिलकर बना होता है। जन्म के समय शिशु के शरीर में 75 प्रतिशत जल,
12-15 प्रतिशत वसा व अन्यत्व कमजोर मौसेपियों होती है। प्रथम वर्ष के अन्त तक शिशु के
शरीर में जल की मात्रा 60 प्रतिशत रह जाती है। यहीं वजह है इस अवस्था में अतिसार शिशु के लिए
जानलेवा भी हो सकता है क्योंकि अतिसार की स्थिति में जल की भारी मात्रा में क्षति होती है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

3. पाचन सम्बन्धी परिवर्तन- नवजात शिशु सरल प्रोटीन, वसा व कार्बोहाइड्रेट पचाने में सक्षम होता है परन्तु प्रश्न कुछ महीनों में स्टार्च के पाचन सम्बन्धी एन्जाइम का उपयोग नहीं हो पाता। जैसे-जैसे शिशु बड़ा होता है एन्जाइम उत्पादन क्षमता बढ़ती है तथा प्रश्न वर्ष के अन्त तक वह लगभग हर प्रकार का भोजन पचाने योग्य हो जाता है।

4. उत्सर्जन क्रिया सम्बन्धी परिवर्तन- कुछ महीनों तक शिशु के गुड़े रक्त शुद्धिकरण में सम्पूर्णत: सक्षम नहीं होते परन्तु प्रश्न वर्ष के अन्त तक गुड़ की शुद्धिकरण क्षमता परिवर्तन प्राप्त कर लेती है।

5. मानसिक विकास- प्रश्न वर्ष में शिशु के मस्तिष्क की कोशिकाएं बहुत तेजी से बढ़ती हैं। कुपोषण की स्थिति इस अवस्था में होने वाले मानसिक विकास पर अपूर्वीक क्षति पहुँचाती है।

6. खान-पान सम्बन्धी व्यवहार- जैसे-जैसे शिशु परिपक्व होता है उसके मांसपेशियाँ विकसित होती हैं जिससे वह पतली से बेहतर रूप से भोजन प्राप्त कर पाने में सक्षम होता है। प्रारम्भ में शिशु चुप्पी न लगने की क्रिया द्वारा दृष्टि पिटी है। 3-4 महीने में वह जीवन को ऊपर-नीचे हिला के निगलने में आसानी अनुभव करता है। 6 महीने में वह खाने को हत्का चबा लेता है तथा बाद में दूंगे निकलने पर शिशु दौस आहार भी खा लेता है।

3.4 शैशवावस्था में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता

शैशवावस्था में वृद्धि व विकास को सुचारू रूप से बढ़ावा देने के लिए उचित पोषण की अति आवश्यकता होती है। ICMR ने पोषण की दृष्टि से शैशवावस्था को दो भाग में बाँटकर उनकी पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को प्राप्त किया है। यह दो भाग इस प्रकार हैं- • 0-6 महीने 
• 6-12 महीने

दोनों अवस्थाओं में शिशुओं की क्षमताएं एवं आवश्यकताएं अलग होती हैं। विभिन्न पोषक तत्वों का विवरण निम्न प्रकार है-•

1. ऊर्जा- नवजात शिशु सम्पूर्णत: माता के दृष्टि पर निर्भर होता है। उसकी समस्त आवश्यकताएं मात के दृष्टि से पूर्ण हो जाती हैं परन्तु 5 महीने के बाद उन्हें अनुपूरक आहार द्वारा ऊर्जा प्राप्त होती है। ICMR के अनुसार 0-6 महीने के शिशु को 92 किलो वेटो/प्रति किलो/प्रतिदिन आवश्यक है और 6-12 महीने के शिशु को 80 किलो वेटो/प्रति किलो/प्रतिदिन आवश्यक है। वृद्धि की गति तीव्र होने की वजह से ऊर्जा संग्रह की आवश्यकता भी तीव्र होती है अतः शिशु की ऊर्जा
2. प्रोटीन- 0-6 महीने में 1.16 ग्राम/प्रति किलो|प्रतिदिन एवं 6-12 महीने में 1.69 ग्राम/प्रति किलो/ प्रतिदिन प्रोटीन की मात्रा शिशु को देनी चाहिए। मांसपेशियों एवं अन्य अन्य विकासात्मक कार्यों के कारण शिशु के लिए प्रोटीन लेना आवश्यक है।

3. वसा- 0-6 महीने का शिशु वसा को किसी भी आहारीय वसा में प्राप्त नहीं करता। माता के दूध का वसा भी समग्र ही उसकी शारीरिक आवश्यकता पूर्ण कर देता है। 6-12 महीने के शिशु को 19 ग्राम वसा प्रतिदिन देनी चाहिए। अनुपूरक आहार के लिए वसा प्राप्त कर सकता है।

4. कैल्शियम- जम्मे से एक वर्ष तक शिशु को 500 मिलीग्राम कैल्शियम प्रतिदिन देना चाहिए। हड्डियों एवं दाँतों के विकास हेतु कैल्शियम अतिवार्षिक रूप से शिशु के आहार में शामिल करना चाहिए। शैशवावस्था में कैल्शियम की कमी से आहार के अस्थियों दुर्वल हो जाता है जिससे उसे रिक्टियस रोग हो सकता है।

5. लौह लवण- 0-6 महीने में शिशु को 46 माइक्रोग्राम/प्रति किलो/प्रतिदिन लौह की आवश्यकता होती है। माता के दूध में लोहा अन्य वसा में नहीं होता है परन्तु गर्भकाल में शिशु के शरीर में संग्रहित लौह लवण उसकी ग्राहम्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम होता है। इसके लिए सी का गर्भकाल में स्वस्थ व गर्भा तथा लौह लवण की भरपूर मात्रा का होना आवश्यक है। यदि माता के आहार में परिवार मात्रा में लोहा तथा उपस्थित नहीं होता है तो गर्भवती शी व शिशु एनिमिया रोग के शिकार की जाते हैं। 6-12 महीने में शिशु को 5 मिलीग्राम/प्रतिदिन लौह लवण की आवश्यकता होती है।

6. विटामिन ए- ICMR ने 0-6 महीने में विटामिन ए की कोई मात्रा प्रस्तावित नहीं की है क्योंकि शिशु माता के दूध एवं अन्य शारीरिक संग्रहण द्वारा प्राप्त विटामिन ए प्राप्त कर सकता है। 6-12 महीने में उसे 350 माइक्रोग्राम रेटिनोल प्रतिदिन आवश्यक होता है। विटामिन ए शरीर की वृद्धि एवं आँखों के स्वास्थ्य के लिए बेहद जरूरी है। इसकी कमी से भूती रोग हो जाता है।

7. विटामिन सी- उच्च स्वास्थ्य एवं संक्रमण रोगों से बचाव के लिए विटामिन सी की आवश्यकता होती है। शरीर में प्रतिक्षण अभाव में वृद्धि के लिए भी विटामिन सी अत्यावश्यक है। पूरे शैशवकाल में शिशु को 25 मिलीग्राम विटामिन सी प्रति दिन आवश्यक होता है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

8. मैत्रीमय - शिशु को प्रथम 0-6 महीने में 30 मिलिग्राम प्रतिदिन व 6-12 महीने में 45 मिलिग्राम प्रतिदिन मैत्रीमय की आवश्यकता होती है।

9. वीटमिन बी- वीटमिन बी समूह की विभिन्न आवश्यकताएं निम्न प्रकार हैं -
   - शायमिन - शायमिन की आवश्यकता ऊर्जा प्राप्त करने पर निर्भर करती है। अतः धातुवस्तु की बाद की अवस्था में शायमिन की अधिक आवश्यकता होती है। 0-6 महीने में 0.2 मिलीग्राम प्रतिदिन व 6-12 महीने में 0.3 मिलीग्राम प्रतिदिन शायमिन शिशु के लिए आवश्यक होता है।
   - राइबोफ्लविन - धातुवस्तु के 0-6 महीने में 0.3 मिलीग्राम प्रतिदिन व 6-12 महीने में 0.4 मिलीग्राम प्रतिदिन राइबोफ्लविन की मात्रा शिशु के लिए प्रस्तावित की गयी है।
   - नियासिन - धातुवस्तु के प्रथम 0-6 माह में 710 माइक्रोग्राम/प्रतिदिन व 6-12 माह में 650 माइक्रोग्राम/प्रतिदिन नियासिन शिशु के लिए आवश्यक होता है।
   - वीटमिन B6/पाइरीडॉक्सिन - अध्ययनों में यह पाया गया है कि वीटमिन बी6 शिशु को नागण्य मात्रा में आवश्यक होता है। मा ता के दूध द्वारा यह आवश्यकता पूर्ण नहीं होती है। गर्भस्थ अवस्था में चूज्ञद्वारा संचालित किया गया वीटमिन बी6 शिशु अपनी शुरुआती शैशवावस्था में आवश्यकता पूर्ति के लिए उपभोग कर लेता है। बाद की अवस्था में यह जरूरत बढ़ जाती है। 0-6 माह में 0.1 मिलीग्राम प्रतिदिन व 6-12 माह में 0.4 मिलीग्राम प्रतिदिन वीटमिन बी6 की आवश्यकता प्रस्तावित की गई है।
   - वीटमिन बी12 - सम्पूर्ण शैशविकल में शिशु को 0.2 माइक्रोग्राम वीटमिन बी12 की आवश्यकता होती है।
   - फोलिक अम्ल - शैशवावस्था की दोनों अवस्थाओं में शिशु को 25 माइक्रोग्राम फोलिक अम्ल प्रतिदिन आवश्यक होता है।

तालिका 3.1 शिशुओं के लिए पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>शैशवावस्था</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td></td>
<td>0-6 माह</td>
</tr>
<tr>
<td>ऊर्जा</td>
<td>92 kcal/kg/d</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रोटीन</td>
<td>1.16 gm/ kg/d</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

| वसा (gm/d) | - | 19 |
| कैल्शियम (mg/d) | 500 | 500 |
| लीह लवण | 46 µg/kg/d | 5mg/d |
| मैमीशियम (mg/d) | 30 | 45 |
| विटामिन ए | - | रेटीनॉल 350 µg/d |
| विटामिन सी (mg/d) | 25 | 25 |
| थायमिन (mg/d) | 0.2 | 0.3 |
| ब्राइनोफलेबिन (mg/d) | 0.3 | 0.4 |
| नियासिन | 710 µg/kg | 650 µg/kg |
| विटामिन बी6 (mg/d) | 0.1 | 0.4 |
| विटामिन बी 12 (mg/d) | 0.2 | 0.2 |
| फोलिक अम्ल (µg/d) | 25 | 25 |

स्रोत: www.ninindia.org

3.5 शैशववास्था के प्रारम्भिक महीनों में आहार

शैशववास्था में शिशु प्रारम्भिक 4-5 महीनों तक माता के दूध पर ही निर्भर होता है। अगर किसी कारणबाद उसे माता का दूध प्राप्त नहीं हो पाता तो उसे बोतल का दूध अथवा फॉम्यूला दूध दिया जाता है। अतः शिशु के प्रारम्भिक आहार को दो भागों में बाँटा जा सकता है:

1. स्तनपान/माता का दूध
2. बोतल का दूध

3.5.1 स्तनपान

माता का दूध शिशु के लिए अमृत समान है। यह दूध शिशु के लिए जितना पौष्टिक, लाभदायक, स्वस्थ्यवर्धक एवं सुपाच्य होता है, संसार की कोई भी वस्तु नहीं हो सकती। नवजात शिशु के पाचन
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अंग अल्मन है अपरिपक्व दशा में होते हैं, जो केवल माता के दूध को ही सरलता व सुगमता से पचा पाते हैं।

3.5.2 माता के दूध का संगठन

माता के दूध में वे सभी पीढ़ी तथा उचित अनुपात एवं आवश्यक मात्रा में विद्यमान रहते हैं जो शिशु के भोजन एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिए नितान्त जरूरी होते हैं। माता के दूध में कार्बोहाइड्रेट, वसा, कैल्शियम आदि प्रचुर मात्रा में तो होते ही हैं साथ ही अत्यन्त सुपार्श्य रूप में भी होते हैं।

उदाहरण के लिए माता के दूध में पाया जाने वाला प्रोटीन उतम प्रकार का होता है। इसमें लेक्टिन एवं लेक्टिनोसिलिन की मात्रा अधिक होती है। इसमें यह अधिक पुलिनशील होने के कारण बेवकूफ आसानी से शिशु द्वारा पचा लिया जाता है।

उदाहरण के लिए माता के दूध पाया जाने वाला विभिन्न प्रकार के दूध का संगठन

<table>
<thead>
<tr>
<th>दूध</th>
<th>ऊरजा</th>
<th>प्रोटीन</th>
<th>कार्बोहाइड्रेट</th>
<th>वसा</th>
<th>कैल्शियम</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>माता का दूध</td>
<td>65</td>
<td>1.1</td>
<td>7.4</td>
<td>3.4</td>
<td>28</td>
</tr>
<tr>
<td>गाय का दूध</td>
<td>67</td>
<td>3.2</td>
<td>4.4</td>
<td>4.1</td>
<td>120</td>
</tr>
<tr>
<td>भैंस का दूध</td>
<td>117</td>
<td>4.3</td>
<td>5.0</td>
<td>6.5</td>
<td>210</td>
</tr>
</tbody>
</table>

प्राप्त: कुमुद खन्ना- टेक्स्टबुक ऑफ न्यूट्रीशन एण्ड डाइटेटिक्स

3.5.3 स्तनपान के लाभ

माता के दूध को शिशु के लिए सर्वश्रेष्ठ आहार माना जाता है। इसके अनेक लाभ हैं जिसका वर्णन निम्न है- 

माता का दूध प्राकृतिक व सर्वोत्तम आहार है और आसानी से उपलब्ध है।

• माता का दूध अत्यन्त शुद्ध और जीवाणु रहित होता है।
• यह शिशु की पाचन क्षमता के अनुकूल होता है।
• इसे पीने से शिशु के जबड़ों का व्यायाम होता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- मां का दूध सभी मौसम में उचित तापक्रम पर उपलब्ध होता है।
- माता के दूध में इम्यूनोलोजिक लिंस होते हैं जो शिशु की सृष्टि जीविका तथा रोगों से लड़ने की अनुभूत क्षमता प्रदान करते हैं।
- माता के दूध में लाइसोजाइम्स की मात्रा अन्य जानवरों के दूध की अपेक्षा अधिक होती है। यह जीवाणुओं से लड़ने व रोग-रोधक शक्ति प्रदान करते हैं।
- माता के दूध में लैक्टोफेरिन नामक प्रोटीन प्रसूत मात्रा में उपस्थित रहता है। इसमें लील तत्व को बाँधने का अनुभुत गुण विद्यमान रहता है। अतः यह शिशु की रक्तअत्यर्थ रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं।
- माता के दूध में लैक्टोबासिलस बिफिडस फैक्टर (Lactobacillus bifidus factor) नामक जीवाणु उपभोक्ताओं में जाकर विटामिन B3 का निर्माण करते हैं। यह विटामिन बी भोजन के अवशेष में मदद करता है।
- माता के स्तनों से प्रारम्भ के दो दिनों में गाढ़ा पीला रंग का तरल पदाभिन्न होता है। इसमें खिंचवाला, वस्त्र एवं प्रोटीन का अनुभूत अधिक होता है। इसे या पीएच के पोषण के लिए अधिकतम उपस्थिति होते हैं जो शिशु के पोषण में सहयोग देते हैं। यह पाचन शक्ति रोग रोधक क्षमता बढ़ाता है।
- शिशु के पाचन तन्त्र के अनुसार ही माता के दूध का संगठन होता है। प्रारंभ में यह पतला होता है, क्योंकि शिशु का पाचन तन्त्र अपरिपूर्ण होता है। किंतु जैसे-जैसे शिशु का शरीर परिपूर्ण होता जाता है, दूध का रासायनिक संगठन एवं स्वरूप परिवर्तित होता है।
- स्तनपान से माता और शिशु दोनों ही स्वस्थ होते हैं और दोनों का भावनात्मक सम्बन्ध प्रभावित होता है। मां का वातावरण बढ़ता है और शिशु को माता से सुरक्षित और संरक्षण की अनुभूति होती है।
- नवजात शिशु के जीर्ण (Kidney) क्षमता होते हैं। अन्य जानवरों की अपेक्षा मात्रा के दूध में प्रोटीन की मात्रा नीच होती है। इससे कम यूरिया का निर्माण होता है, जिससे जीवन प्रक्रिया में कम भार पड़ता है।
- माता के दूध में लिम्फोइड कोशिकाएं अत्यधिक संख्या में उपस्थित होती हैं। ये कोशिकाएं इम्यूनोलोजिक लिंस का उत्पादन करती हैं जिससे कोशिका गूंज रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

• माता के दूध से शिशु को किसी भी प्रकार की एल्टीक्स का खातरा नहीं होता। गाय के दूध में पाया जाने वाला लीक्स्ट्रीब्लूलिन व सीरम बोवाइन एल्टीमिन कई शिशु में एल्टीक्स कारक सिद्ध होता है।

• गर्भवस्था में माता के शरीर में गर्भवाय के स्तन की मॉनिटरिंग जो बढ़ जाती हैं, दुधपान करने से संगचित होकर अन्य संस्थित में आ जाती हैं। सामान्यतः स्तनपान करने के दौरान माताएं दोबारा गर्भस्थलिन नहीं करती। अतः यह प्राकृतिक गर्भितायोग का भी कार्य करता है।

3.5.4 बोतल का दूध

इसे शिशु के लिए कृत्रिम आहार भी कहा जाता है। वह शिशु जिनको हम माता का दूध नहीं दे सकते तथा जो माताएं अपने शिशु को स्तनपान द्वारा पापिया दूध नहीं दे पाती हैं, उन शिशुओं को बोतल द्वारा दूध देने में आवश्यक हो जाता है। शिशु को बोतल द्वारा दो प्रकार का दूध दिया जाता है-

• पशु दूध
• पाउडर/ दूध पाउडर/ दूध फार्मूलाएं

पशु दूध

ज्यादातर माताएं अपने शिशु को मैस या गाय का दूध पिलाना भस्म करती हैं। कई जगह पशुओं को बकरी का दूध भी दिया जाता है। माता के दूध के पक्षात्मक गाय का दूध शिशु के लिए सबसे उत्तम माना गया है। बहुत से गाय का दूध शिशु की आवश्यकताओं के अनुसार नहीं होता। इसमें पौष्टिक तत्व तो अनेक होते हैं लेकिन माता के दूध से अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। इसलिए शिशु को गाय के दूध में शुद्ध पानी मिलाकर दिया जाना चाहिए जैसे- दो माह के शिशु को 2 भाग पानी, 3 भाग दूध। आयु अनुसार शिशु को गाय का दूध निर्दिष्ट अनुपात में पानी मिलाकर दिया जा सकता है।

पशु दूध देने से पहले उसे अच्छी तरह उबाल लेना चाहिए। इससे दूध कीटगुली रूप हो जाता है और दूध में उपस्थित प्रोटीन भी सरल व सुपारी रूप में आ जाती है। आयु के अनुसार शिशु को गाय का दूध निर्दिष्ट कम अनुपात में पानी मिलाकर दिया जा सकता है।

आयु दूध व पानी का अनुपात

- 0 से 15 दिन 1 भाग दूध + 1 भाग पानी
- 2-6 सामाय 2 भाग दूध + 1 भाग पानी
- 1 ठात्र से 3 माह 3 भाग दूध + 1 भाग पानी
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- 3 माह से अधिक बिना पानी बाला दूध

पाउडर दूध

इसे दूध फार्मूला भी कहते हैं। पशु दूध की उपलब्धता न होने पर या शिशु द्वारा उसे पचाने पर दूध फार्मूला का उपयोग किया जाता है। शिशु की आयु व स्वास्थ्य के अनुसार ही शिशु रोग विशेषज्ञ दिब्बा बन दूध फार्मूला की सलाह देते हैं।

पाउडर दूध की निम्न विशेषताएं होती हैं-

- फामूला दूध या पाउडर दूध की संरचना मात्र के दूध की संरचना के अनुपात में ही होती है।
- पाउडर दूध कीटाणु रचित होता है।
- शिशु द्वारा दुध पाउडर में उपस्थित प्रोटीन को आसानी से पचाया जा सकता है।
- नवजात शिशुओं तथा अन्य शिशुओं के लिए अलग-अलग फार्मूले होते हैं।
- दूध पाउडर को बनाने का कार्य आसान होता है तथा इसको तैयार करने की विधि डिब्बों पर ही लिखी होती है।
- शिशु की दूध पाउडर देने की मात्रा शिशु की आयु तथा भार के अनुसार डिब्बों पर निर्देशित होती है।
- फार्मूला दूध को लम्बी अवधि तक संग्रहित किया जा सकता है।

दूध फार्मूला बनाने की विधि

दूध तैयार करने से पहले दूध की बोतल, निपिल, चम्मच व छलनी को उबालकर विसंग्रहित कर लें तथा निपिल को गर्म पानी में अच्छी तरह रंगड़कर साफ कर लें। एक बर्तन में पानी उबाल लें। शिशु को दी जाने वाली आवश्यक दूध पाउडर की मात्रा बोतल में ले लें तथा डिब्बे पर मिले हुए निर्देशों के अनुसार उसमें गर्म पानी मिलाएं। फिर बोतल को ठककर सहित लगाकर अच्छी तरह हिलाएं। यदि आवश्यकता हो तो दूध को छलनी से छान लें। दूध को शरीर के तापक्रम तक ठंडा होने दें और फिर शिशु को पिलायें।
### तालिका 3.3: मानव, गाय, भेंस और बकरी के दूध के बिस्तूल संगठन

<table>
<thead>
<tr>
<th>पाठ्यक्रम</th>
<th>मानव का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>गाय का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>भेंस का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>बकरी का दूध (100 ग्राम)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रोटीन (ग्राम)</td>
<td>1.2</td>
<td>3.3</td>
<td>3.8</td>
<td>3.3</td>
</tr>
<tr>
<td>केसीन (ग्राम)</td>
<td>0.4</td>
<td>2.8</td>
<td>3.0</td>
<td>2.5</td>
</tr>
<tr>
<td>लैक्टेंल्सिनिन (ग्राम)</td>
<td>0.3</td>
<td>0.4</td>
<td>0.4</td>
<td>0.4</td>
</tr>
<tr>
<td>लैक्टेंल्सिनिन (ग्राम)</td>
<td>0.2</td>
<td>0.2</td>
<td>0.2</td>
<td>0.3</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा (ग्राम)</td>
<td>3.8</td>
<td>3.7</td>
<td>7.5</td>
<td>4.1</td>
</tr>
<tr>
<td>लैक्टेज (ग्राम)</td>
<td>7.0</td>
<td>4.8</td>
<td>4.4</td>
<td>4.7</td>
</tr>
<tr>
<td>ऊर्जा (कालोकैलोरी)</td>
<td>71</td>
<td>69</td>
<td>100</td>
<td>76</td>
</tr>
<tr>
<td>कॅर्बोहाइड्रेट (मिलीग्राम)</td>
<td>33</td>
<td>125</td>
<td>210</td>
<td>130</td>
</tr>
<tr>
<td>फॉस्फोरस (मिलीग्राम)</td>
<td>15</td>
<td>96</td>
<td>130</td>
<td>106</td>
</tr>
<tr>
<td>मैग्नीशियम (मिलीग्राम)</td>
<td>4</td>
<td>12</td>
<td>15</td>
<td>16</td>
</tr>
<tr>
<td>सोडियम (मिलीग्राम)</td>
<td>15</td>
<td>58</td>
<td>65</td>
<td>41</td>
</tr>
<tr>
<td>तौरी हल्फन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.15</td>
<td>0.10</td>
<td>0.2</td>
<td>0.05</td>
</tr>
<tr>
<td>तांबा (मिलीग्राम)</td>
<td>0.04</td>
<td>0.03</td>
<td>0.02</td>
<td>0.04</td>
</tr>
<tr>
<td>आयोडीन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.007</td>
<td>0.021</td>
<td>0.004</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>फैट (मिलीग्राम)</td>
<td>0.7</td>
<td>2</td>
<td>-</td>
<td>8</td>
</tr>
<tr>
<td>जिंक (मिलीग्राम)</td>
<td>0.53</td>
<td>0.38</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन ए (I.U.)</td>
<td>160</td>
<td>158</td>
<td>200</td>
<td>120</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन डी (I.U.)</td>
<td>1.4</td>
<td>2.0</td>
<td>-</td>
<td>2.3</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन सी (मिलीग्राम)</td>
<td>4.0</td>
<td>2.0</td>
<td>2.5</td>
<td>2.0</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>पौष्ठिक तत्व</th>
<th>मानव का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>गाय का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>बैंस का दूध (100 ग्राम)</th>
<th>बकरी का दूध (100 ग्राम)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>थायमिन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.017</td>
<td>0.04</td>
<td>0.05</td>
<td>0.05</td>
</tr>
<tr>
<td>राइबोफलेविन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.04</td>
<td>0.18</td>
<td>0.10</td>
<td>0.12</td>
</tr>
<tr>
<td>नियासिन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.17</td>
<td>0.08</td>
<td>0.28</td>
<td>0.12</td>
</tr>
<tr>
<td>पेटोथोनिक अम्ल</td>
<td>0.20</td>
<td>0.35</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन बी 6</td>
<td>0.001</td>
<td>0.035</td>
<td>-</td>
<td>-</td>
</tr>
<tr>
<td>फोलिक अम्ल</td>
<td>1.3</td>
<td>5.6</td>
<td>3.3</td>
<td>0.7</td>
</tr>
<tr>
<td>वायोमीन</td>
<td>0.4</td>
<td>2.0</td>
<td>-</td>
<td>1.5</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन बी 12</td>
<td>0.03</td>
<td>0.50</td>
<td>0.30</td>
<td>0.10</td>
</tr>
</tbody>
</table>

स्रोत: डॉ. एम.0 स्वामीनाथन - एडवांड बुक ऑफ्फ फूड एण्ड न्यूट्रिशन।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रि क्ट स्थान भरे।
   a. सामान्य शिशु पाँच माह की आयु में अपने जन्म के बजन से ............................................. हो जाता है।
   b. जन्म के समय शिशु के शरीर में ............................................................... प्रतिशत जल होता है।
   c. माता के स्तनों से प्रारंभ में गाढ़ा पीला पदार्थ निकलता है, जिसे ............................................................... कहते हैं।
   d. माता के दूध में लैक्टाब्सिलस जीवाणु विटामिन ............................................. का निर्माण करते हैं।
   e. ......................................... द्वारा माता के गर्भाशय व स्तन की मांसपेशियों का संकुचन होता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 58
2. शिशु की पोषण आवश्यकता का मूल्य बताएं।
   a. 0-6 माह की ऊर्जा आवश्यकताएं.................................................
   b. 0-1 वर्ष की कैल्शियम आवश्यकताएं................................................
   c. 0-1 वर्ष की विटामिन सी आवश्यकताएं..............................................
   d. 0-6 माह व 6-12 माह की थायमिन आवश्यकताएं........................................
   e. 0-1 वर्ष की फोलिक एसिड आवश्यकताएं.................................................

3.6 शिशु का शैवालयथा में मध्य एवं अन्तिम महीनों में आहार

शैवालयथा के प्रथम चार महीनों में शिशु का आहार स्तनपान या बोतल द्वारा मिलने वाला दूध ही होता है। यह शुरू के महीनों में सभी पौष्टिक तत्त्वों की पूर्ति कर देता है, लेकिन जैसे-जैसे शिशु की आयु बढ़ती है, शिशु के लिए कैल्शियम तथा पौष्टिक तत्त्वों की मात्रा भी बढ़ती जाती है। यह बढ़ी हुई मात्रा केवल माता या बोतल के दूध से पूरी नहीं हो पाती है। इसी पूर्ति के लिए माता के दूध के अतिरिक्त कुछ तरल तथा अर्द्ध ठोस पदार्थ देने आवश्यक हो जाते हैं। इसे अनुपूरक आहार भी कहते हैं। इन्हें देने के लिए माता का दूध छुड़ाना पड़ता है जिसे स्तनत्याग या बीनिंग कहते हैं।

3.6.1 बीनिंग

माता का दूध शिशु के लिए 3 से 5 माह तक ही काफी रहता है। इसके उपरांत शिशु को अन्य सहायक भोज्य पदार्थ भी देने शुरू करने चाहिए। स्तनत्याग या बीनिंग से तालयथा है शिशु को मां का दूध छुड़ाना व साथ ही मिश्रित आहार की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देना अर्थात् स्तनपान को कम करते हुये शिशु को उपरी आहार देना।

शिशु का स्तनपान छुड़ाना माता के लिए आसान कार्य नहीं है। यह भी एक प्रकार की कला है जिसके लिए काफी मेहनत करनी पड़ती है। कुछ माताएं समय से पहले शिशु का स्तनपान छुड़ा देती हैं। इससे शिशु के कमजोर व बीमार होने की क्रिया संभावना रहती है। इसी प्रकार अगर शिशु को एकदम स्तनपान कराना बन्द कर दिया जाये तो शिशु चिड़चिड़ा हो जाता है। शिशु माता का दूध एकदम से नहीं छोड़ सकता है, इसलिए माता को अपने दूध को कम करते हुये बोतल के दूध को देना चाहिए तथा बोतल के दूध की मात्रा की थीर-थीर बढ़ाते रहना चाहिए। इस अवस्था में मां को भी दुःखसाव थीर-थीर कम होने लगता है। बोतल के दूध के साथ माता को अन्य तरल भोज्य पदार्थों को
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

शिशु को खिलाना शुरू करना चाहिए जैसे फलों का रस, दाल का पानी आदि इन भोज्य पदार्थों से न केवल शिशु को अतिरिक्त पोषण मिलता है, बल्कि उसकी पाचन शक्ति का भी विकास होता है।

3.6.2 अनुपूरक आहार

पाँच से छः महीने के शिशु के लिए एक ओर तो माता के दूध की मात्रा अपयोग होने लगती है तथा दूसरी ओर शिशु की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं में वृद्धि हो जाती है। जिस कारण शिशु को ऊपरी दूध तथा भोज्य पदार्थों की भी आवश्यकता होती है जिसमें पूर्ण पोषण प्राप्त हो सके। अतः शिशु को माता के दूध अथवा ऊपरी दूध पिलाने पर जो पोषण सम्बन्धी कमियों रह जाती हैं, उनको कम करने के लिए दूध के अतिरिक्त जो आहार शिशु को दिया जाता है उसे अनुपूरक आहार कहते हैं।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से अनुपूरक आहार को तीन वर्गों में वाँटा जा सकता है-  
- तरल पूरक आहार
- ठोस पूरक आहार
- टोस पूरक आहार

1. तरल पूरक आहार- विटामिन सी एवं खनिज लवणों की पूर्ति हेतु शिशु को ताजे फलों का रस पिलाना चाहिए। मौसम के अनुसार शिशुओं को संतरा, मौसमी, अनार, सेब, अंगूर, नींबू आदि फलों का रस देना चाहिए। जिसके कारण शिशु इसे रुचिपूर्वक पी लेता है। विटामिन दी दूध एवं मसूर रोग-रोधक क्षमता भी होती है।

2. ठोस पूरक आहार: सिणनुनजयणक एवं दाल का सूप: फलों के साथ शिशु को हरी पत्तेदार सब्जियों (पालक, बघुआ, चौलाई), टमाटर, गाजर, लौक, चुकड़, परवल आदि सब्जियों का सूप बनाकर पिलाना चाहिए।

5-6 माह के शिशु को सब्जियों का सूप दिया जा सकता है। तमाटर का सूप स्वादिष्ट होता है तथा शिशु इसे रुचिपूर्वक पी लेता है। अन्य सब्जियों के सूप को रुचिपूर्वक बनाने के लिए उसमें टमाटर भी डाल देना चाहिए। प्रारंभ में सूप कम मात्रा में देना चाहिए। जैसे-जैसे शिशु इसे पचाने लगे, इसकी
नैदाक्षिक एवं उपचारात्मक पोषण

मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। सामान्य रूप से नियमित लाभ एवं विटामिन भरपूर मात्रा में होते हैं जिससे शिशू की पोषण सम्मति दैनिक आवश्यकताएं भली प्रकार से पूर्ण हो जाती हैं।

6 मह के शिशू को मिश्रित दालों जैसे मूंग, मसूर, अरहर, चना आदि दालों का सूप भी दिया जाता है। दालों में प्रोटीन के साथ विटामिन बी भी होता है। यदि शिशू दालों के सूप के प्रति अरुचि दिखाते हैं तो जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए। इसको बनाने की विधि में परिवर्तन करके शिशू को खाने के प्रति रुचि बढ़ायें।

2. अर्द्ध ठोस पूरक आहार- 6 मह के पश्चात शिशू अर्द्ध ठोस पूरक आहार पूरक आहार खाने तथा पचाने में सक्षम होता है। अर्द्ध ठोस आहार खिलाने से उसके पाचन अंगों में बृद्धि और विकास भी होता है। पुट्टी विच्छिद्र, पतली विच्छिद्र, दलिता, उबला आलू, मसला हुआ कैला, सूजी की खिचड़ी, सालुदान की खीर, मसला हुआ फल, मसली सब्जियों आदि अर्द्ध ठोस भोजन पदार्थ शिशू को दिये जा सकते हैं। आजकल बाजार में कई प्रकार के 'बेबी फूड' उपलब्ध हैं जिसे तैयार करके शिशू को खिलाया जा सकता है जैसे सूजी की खीर, साबुदाने की खीर, मसली हुआ फल, मसली भोजन पदार्थ शिशू को दिये जा सकते हैं। इनसे कैलोरी, अमीनो अभाव, वसा, विटामिन एवं खिचड़ी लाभ होते हैं जो शिशू के शारीरिक वृद्धि एवं मानविक विकास में सहायक होते हैं।

3. ठोस पूरक आहार- 7-8 मह के शिशू को ठोस आहार खिलाया जा सकता है। ठोस आहार दो प्रकार के होते हैं-

मसला हुआ ठोस आहर- उबले अण्डे का पीला भाग, लोकी, गाजर, दाल- चावल मसलकर, दूध में रोटी या ब्रेड मसलकर, उबली मसली सब्जियों, उबला सेब या फल आदि शिशू को खिलाया जा सकता है। प्रारंभ में शिशू को सीर्फ 1-2 चमच ही ठोस आहार दे, बाद में इसकी मात्रा बढ़ायें। शिशू को एक बार में एक ही आहार दें। जब वह एक नये आहार को खाने के प्रति अभ्यस्त हो जाये तभी दूसरा नया आहार प्रारंभ करें। 10-11 मह के शिशू को उबले अण्डे का पीला भाग, पका हुआ माँस, मछली आदि कुछ मात्रा में खिला सकते हैं।

बिना मसला ठोस आहार- 9-10 मह के शिशू को बिना मसला ठोस आहार खिलाया जा सकता है। विशेषकर जब शिशू के दाँत निकलने लगते हैं तो मसूढ़े फूल जाते हैं तथा खुजली होती है। ऐसी रिथित में कहीं फल व सब्जियों शिशू को खाने को देना चाहिए जैसे गाजर, अमरूद, सेब, ताजा नारियल, चीनी, खीरा, ककड़ी आदि। इन्हें चाटने से शिशू के दाँतों का व्यायाम को जाता है तथा दाँत निकलने में आसानी होती है। बिस्कुट, मटरी, ब्रेड, पाव, परांठा आदि 10-12 मह का शिशू खा सकता है। माता को यह ध्यान रखना चाहिए कि शिशू इसके ठीक से खाने करना कई बार यह गलें में
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अटक सकते हैं। 1 वर्ष का शिशु घर का खाना खाने लगता है पर ध्यान रखें भोजन बिना मिर्च-मसाले का हो। थोड़ी मात्रा में घी या मक्खन का प्रयोग किया जा सकता है।

3.7 शिशु को अनुपूरक आहार देते समय ध्यान रखने योग्य बातें

• पूरक आहार प्रारंभ में थोड़ी मात्रा में देना चाहिए। यदि शिशु इसे आसानी से पचा लेता है तब धीरे-धीरे इसकी मात्रा बढ़ानी चाहिए।
• आहार प्रतिदिन बदल-बदल कर देना चाहिए। एक ही प्रकार का आहार खिलाने से शिशु का मन उस आहार के प्रति ऊब जाता है।
• शिशु के पूरक आहार में एक साथ, एक समय में कई नये आहार नहीं समिलित करने चाहिए।
• जब शिशु भूखा हो तभी नया आहार खिलाना चाहिए। अन्यथा वह उसे खाने में रुचि नहीं लेगा।
• आहार में तरल पदाथों तथा जल का समावेश पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए। जिससे पाचन आसान हो व कमज़ोर न हो।
• दो आहारों के मध्य फलों का रस, सब्जियों का सूप व पानी शामिल करना चाहिए।
• शिशु को आरामदायक एवं शान्त वातावरण में भोजन खिलाना चाहिए।
• शिशु के आहार में अधिक मिर्च-मसाले, घी व तेल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। थोड़ी मात्रा में स्वादनुसार नमक व शक्कर समिलित किया जा सकता है।
• बासी भोजन पिसून को कराने नहीं खिलाना चाहिए। हमेशा ताजा भोजन खिलायें।
• यदि किसी भोजन को शिशु पचा नहीं पाता है तो वह आहार कुछ दिनों तक नहीं खिलाना चाहिए। कुछ दिनों बाद उस आहार को प्रारंभ करे व प्रारंभ में बहुत ही कम मात्रा में खिलायें।
• अलग-अलग खाद्य पदाथों की मिश्रण में मिश्रित भोजन को अधिक समिलित करना चाहिए। जैसे- खिचड़ी, दूध-दलिया, मिश्रित सब्जियाँ, खीर, घुटा हुआ दाल -चावल, दूध-अण्डा, इडली आदि।

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय

62
यदि शिशु किसी विशेष आहार के प्रति अलौकिक रूप से प्रतिक्रिया दे तो उसे कुछ समय के लिए बंद करके उसके स्थान पर सामान पौष्टिक ताला व्यजन खिलाएं। अर्थात् उसका रूप परिवर्तित कर दें।

शिशु को मीठा एवं नमक मजबूत दोनों प्रकार का आहार खिलाना चाहिए ताकि वह सभी प्रकार के भोजन खाने का अभ्यास कर सके।

यदि शिशु भोजन के प्रति अलौकिक रूप से प्रतिक्रिया दे तो उसे कुछ समय के लिए बंद करके सिंचाई दें। उसका जल निकालना चाहिए ताकि वह सभी प्रकार के भोजन खाने का अभ्यास कर सके।

बाजार में उपलब्ध ‘बेबी फूड’ के स्थान पर घर का बना भोजन खिलाएं। यह स्वादीत्र्य स्वादिष्ट व हानिचक होता है।

शिशु को अधिक खाने के लिए बाध्य नहीं करना चाहिए ताकि वह जिंदगी का प्रयोग सही से न कर पाने के कारण भी ऐसा होता है।

• बाजार में उपलब्ध 'बेबी फूड' के स्थान पर घर का बना भोजन खिलाएं। यह स्वादिष्ट व हानिचक होता है।

• शिशु को अधिक खाने के लिए बाध्य नहीं करना चाहिए, वह जिंदगी स्वच्छ से ले उतना ही देना चाहिए।

### तालिका 3.4 शिशु का पूरक आहार

<table>
<thead>
<tr>
<th>शिशु की उम्र</th>
<th>पूरक आहार का प्रकार</th>
<th>खाद्य</th>
<th>खाद्य का रूप</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>4-6 महीने</td>
<td>तरल</td>
<td>फलों का रस</td>
<td>फलों के रस में थोड़ी चीनी दूध में सब्जियों का सूप</td>
<td>1 से 2 चम्मच से शुरूआत करें व इसे 30-50 मिली लीटर तक बढ़ाएं।</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>तरल</td>
<td>हरी पत्तेदार सब्जियाँ</td>
<td></td>
<td>1 से 2 चम्मच से शुरूआत करें व यह मात्रा 50 मिली लीटर तक बढ़ाएं।</td>
</tr>
<tr>
<td>5-6 महीने</td>
<td>अदडौसेंग</td>
<td>अनाज</td>
<td>पानी या दूध के साथ पके हुए</td>
<td>लगभग 2 चम्मच अनाज 1 कप पानी या दूध के</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

63
<table>
<thead>
<tr>
<th>आयु (माह)</th>
<th>सामग्री</th>
<th>प्रात: दूध के साथ, मसला आलू, मक्खन या दूध के साथ, दूध में मसला केला</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>6-7 माह</td>
<td>अर्द्धसूखा</td>
<td>अण्डे का पीला भाग, चार्ज वाले फल व सब्जियां, उबला, मसला आलू, मक्खन या दूध के साथ, दूध में मसला केला</td>
</tr>
<tr>
<td>7-8 माह</td>
<td>अर्द्धसूखा</td>
<td>सब्जियाँ व दालें, अच्छी तरह पकी हुई सब्जियाँ व पतली खिचड़ी</td>
</tr>
<tr>
<td>10-12 माह</td>
<td>अर्द्धसूखा</td>
<td>पूरा अण्डा जिसमें अण्डे की सफेदी भी हो, मॉस, सब्जियाँ, फल, अनाज, मुलायम उबला अण्डा, हाफ बॉइल अण्डा, अच्छी तरह से पकाया या बारीक चूरा किया हुआ</td>
</tr>
</tbody>
</table>

साध पकाए, जैसे सूजी की खीर आदि।

1/2 चम्मच से शुरू करें व इसे बढ़ाकर पूरा पीला भाग दें। कम मात्रा से शुरूआत करें व 40-50 ग्राम तक मात्रा बढ़ाएं।

कम मात्रा से शुरू करें व शिशु की पाचन शक्ति के अनुसार मात्रा बढ़ाएं।

एक अण्डा

कम मात्रा में शुरू करें व शिशु की पाचन शक्ति के अनुसार बढ़ाएं।

क्रोट: टेक्स्टबुक अफ न्यूरीशन एण्ड डाइटेटिक्स, कुमुद खन्ना।

अभ्यास प्रश्न 2
1. सही अथवा गलत बताएं।
   a. शिशु का स्नान पुछना वीनिंग कहलाता है।
   b. फलों का रस व सचिवयों का सूप अर्ध ठोस पूरक आहार के अन्तर्गत आता है।
   c. 3 माह के शिशु को पतली खिचड़ी दी जा सकती है।
   d. शिशु को मिर्च - मसाले युक्त भोजन देना उचित होता है।
   e. दौंत निकलने के दौरान शिशु को ठोस आहार चबाने को देने चाहिए।

2. निम्नलिखित भोजन पदार्थ किस प्रकार का अनुपूरक आहार है, नाम बताएः
   a. उबला आलू
   b. फलों का रस
d. दालों का सूप
e. बिस्कुट

3.8 सारांश
शैशवावस्था वृद्धि एवं विकास के दृष्टिकोण से जीवन की बहुत महत्वपूर्ण अवस्था होती है। इसमें अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं जैसे आकार, भार, अनुपात आदि। यह परिवर्तन अति तीव्र गति से होते हैं। अतः शैशवावस्था में उचित रोग अत्यावश्यक है। शैशवावस्था दो भागों (0-6 माह व 6-12 माह) में बाँटी गयी है। दोनों अवस्थाओं में शिशु की रोग आवश्यकताएं भिन्न होती हैं। प्रारंभ में नवजात शिशु का सम्पूर्ण आहार माता का दूध ही होता है। यह शिशु के लिए अमृत समान माना गया है। माता के दूध की सुलभता न होने पर शिशु को पशु, जैसे गाय, भैंस व बकरी का दूध भी दिया जा सकता है। पशु के दूध की क्षुद्रता बाजार में उपलब्ध फार्मूला दूध भी दिया जा सकता है। 5-6 माह के पश्तात्र शिशु की रोग आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं किन्तु माता का दूध उत्पादन घट जाता है। अतः इस अवस्था में स्नान (नीतियों) की प्रक्रिया द्वारा शिशु को अनुपूरक आहार देना शुरू किया जाता है। अनुपूरक आहार द्वारा शिशु सभी खाद्य पदार्थों को खाना सीखता है। इससे उसकी बढ़ती हुई रोग आवश्यकताएं भी पूर्ण हो जाती हैं व पाचन प्रक्रिया का भी विकास होता है।
3.9 पारिभाषिक शब्दावली

• रिफ्रेट्स: कैलोरियम की कमी से उत्पन्न रोग जिसमें हड्डियों मुलायम हो जाती हैं व उनके सामथ्र में कमी आ जाती है।

• रसायन: विटामिन ए की कमी से होने वाला रोग जिसमें कम रोजनी में ठीक तरह से दिखाई नहीं देता है।

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक स्थान भरें।
   a. दोगुना
   b. 75
   c. कोलोस्ट्रूम
   d. विटामिन बी
   e. खानपान

2. शिशु की पोषण आवश्यकता का मूल्य बताएं।
   a. 90 किलोकैलोरी/प्रतिकैलो/प्रतिदिन
   b. 500 मिलीग्राम
   c. 25 मिलीग्राम
   d. 0-6 माह- 0.2 मिलीग्राम/प्रतिदिन व 6-12 माह- 0.3 मिलीग्राम/प्रतिदिन
   e. 25 माइक्रोग्राम

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताएं।
   a. सही
   b. गलत
   c. गलत
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

2. निम्नलिखित मोज्य पदार्थ किस प्रकार का अनुपूरक आहार है, नाम बताएँ:
   a. उबला आलू- अर्ध ठोस पूरक आहार
e. बिस्कुट- ठोस पूरक आहार

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1. खना कुमुद: टेक्स्टबुक ऑफ न्यूट्रीशन एनड डाइटेटिक्स, ऐलीट पब्लिशिंग।
2. श्रीलक्ष्मी बी: डाइटेटिक्स, न्यू एज इन्टरनेशनल पब्लिकेशन (पाँचवा संस्करण)।
3. स्वामिनाथन एस: फूड एनड न्यूट्रीशन, बैपको पब्लिकेशन।
4. बक्सी बी(केए): आहार एवं पोषण के मूल सिद्धांत, बिनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. एन्जिया एफ: एनड फिलिप्स एंब्राहम: क्लीनिकल न्यूट्रीशन एनड डाइटेटिक्स ऑक्सफोर्ड पब्लिकेशन (चौथा संस्करण)।

3.12 निबंधात्मक प्रश्न
1. शौर्यावस्था की विशेषताएं बताइए।
2. शौर्यावस्था में घोषित तत्वों की आवश्यकता पर प्रकाश डालें।
3. शौर्यावस्था के प्रारम्भिक महीनों के आहार के बारे में टिप्पणी कीजिए।
4. माता के दूध का संगठन व स्थिति के लाभ लिखें।
5. बीनिंग क्या होती है? अनुपूरक आहार के प्रकार व इसे देते समय सावधानियाँ बताएँ।
डिकाई 4: शालापूर्व बालकों एवं विद्यालयी बालकों में पोषण

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 शालापूर्व बालक
   4.3.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन
   4.3.2 पोषक तत्त्वों की मांग
   4.3.3 पोषण संबंधी समस्याएं
   4.3.4 भोजन संबंधी आदतें
4.4 विद्यार्थी बालक
   4.4.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन
   4.4.2 पोषक तत्त्वों की मांग
   4.4.3 पोषण संबंधी समस्याएं
   4.4.4 भोजन संबंधी आदतें
4.5 सारांश
4.6 पारिभाषिक शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ प्राप्त सूची
4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत अध्याय में आप शालापूर्व बालकों एवं विद्यालयी बालकों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं के बारे में जानेंगे। 1-5 वर्ष के बालकों को शालापूर्व बालकों की श्रेणी में रखा जाता है जिसे पूर्व बाल्यावस्था या प्रारंभिक बाल्यावस्था के नाम से भी जाना जाता है। कुछ विशेषजन्तुओं के द्वारा 3-6 वर्ष की अवस्था को शालापूर्व अवस्था में लिया जाता है। इसलिए इस अध्याय में हमने 1-6 वर्ष के बालकों को शालापूर्व अवस्था में लिया है, जबकि 6-12 वर्ष के बालकों को विद्यालयी
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

बालकों की श्रेणी में लिया है। इस अवस्था को उसर बाल्यवस्था भी कहा जाता है। शालापूर्व अवस्था में बालक नसरी कक्षा में पाठशाला पढ़ने जाता है या घर पर ही माता पिता से खेत के माध्यम से पिक्सा प्राप्त करता है, किन्तु विद्यालयी अवस्था में बालक औपचारिक रूप से पिक्सा प्राप्त करने लगता है।

शालापूर्व अवस्था में उत्तम एवं वैष्ठपक्षी आहार की बहुत अहम भूमिका है क्योंकि इस आयु के बच्चे अयोग्य भेद अवस्था में होते हैं। निम्न स्तर के पोषक आहार से वे शीघ्र ही प्रभावित हो जाते हैं जिससे उनका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास बाधित हो जाता है। इस आयु के बच्चों में संक्रामक रोगों से लड़ने की क्षमता का भी अभाव होता है जिसके कारण वे शीघ्र ही बीमार पड़ जाते हैं। 1-6 वर्ष की अवस्था में लक्षिका, रक्त वाहिनियाँ एवं नाड़ी तन्तुओं का विकास तीव्र गति से होता है। केन्द्रीय नाड़ी संस्थान एवं मस्तिष्क के नाड़ी तन्तुओं का विकास भी इसी आयु में होता है। इस आयु में यदि पूर्ण पौष्टिक आहार नहीं मिलता है तब मस्तिष्क तथा नाड़ी तन्तुओं की कोशिकाओं का निर्माण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है तथा दौष पूर्ण तन्तुओं का निर्माण होता है जिससे इसकी रचना एवं कार्यों में विकास एवं विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। विद्यालयी अवस्था के दौरान बालक की विकास तथा धीरी एवं नियमित होती है परन्तु जो कुछ विकास पूर्व अवस्था में हो जाता है उसे एक स्थायी रूप में आकार मिल जाता है। इसलिए बालकों के इस आयु की “मिथ्या परिपक्वता की अवस्था” (Stage of pseudo maturity) भी कहते हैं। बच्चों के समग्र विकास के लिए पौष्टिक एवं उच्च प्रोटीन युक्त आहार खिलाना नितान्त आवश्यक होता है। इस अवस्था में आप शालापूर्व एवं विद्यालयी बालकों में होने वाले शारीरिक परिवर्तन, पोषक तत्त्वों की मांग एवं उनकी पोषण समस्याओं के बारे में जानें।

4. 2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;

• शालापूर्व एवं विद्यालयी बालकों की विशेषताएं एवं उनमें होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएँ;

• शालापूर्व एवं विद्यालयी बालकों में विभिन्न पोषक तत्त्वों की मांगों के विषय में जानें;

• शालापूर्व बालकों में कुपोषण एवं बचाव के उपाय के बारे में जानकारी ले पाएँ;
• विद्यालयी बालकों में भोजन की समस्याएं एवं उनके निदान के बारे में जान पाएं; तथा
• शालापूर्व एवं विद्यालयी बालकों में भोजन संबंधी अच्छी आदतों के निर्माण सम्बंधी जानकारी ले पाएं।

4.3 शालापूर्व बालक

4.3.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन

शैशवावस्था के बाद इसी अवस्था में शिशु का शारीरिक एवं मानसिक विकास तीन मंजूर होता है। शारीरिक एवं मानसिक विकास तीन होने के कारण बालक की क्रियाशीलता में वृद्धि हो जाती है। फलतः वह अपनी सभी क्रियाओं को स्वतंत्रतापूर्वक स्वयं ही करने का प्रयास करता है। इस अवस्था में बालक 2-2.5 किलो वजन में तथा 6-7 सेमी समय में प्रति वर्ष बढ़ता है। इस आयु का बालक बहुत ही प्रजाज्ञा व नतज्जत प्रकृति की होती है इसलिए वह अपने आयुष्य के बालवर्ण को जानने के प्रयास में कम-कम दुर्लभता का भी शिकार हो जाता है। इस आयु के बालक अपनी नतज्जत हरकतों से समय के आर्कण का केंद्र बने रहते हैं। वह नसरी या किंडर-गार्डन स्कूलों में जाने लगते हैं जहाँ उन्हें खेल खेल में निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कार्य करना सिखाया जाता है व विद्यालय जाने वाली अवस्था के लिए तैयार किया जाता है। सूपोषित बालकों के वजन एवं लम्बाई में सतत एवं नियमित वृद्धि होती रहती है। व्यक्ति एवं लम्बाई के आधार पर शारीरिक वृद्धि को नापा जाता है। बालवर्ण के साथ समायोजन की क्षमता, मांसपेशियों के निर्माण, उनकी दृढ़ता एवं शारीरिक शक्ति तथा मानसिक वस्तुता के लक्षणों द्वारा भी बच्चे की गति को जाना जा सकता है। वैज्ञानिक शोधों के परिणाम बताते हैं कि 4 वर्ष की आयु तक 90 प्रतिशत केंद्रीय नाड़ी संस्थान एवं मस्तिष्क की मर्यादा, 20 प्रतिशत आकार एवं रूप प्रणाली कर लेते हैं। मस्तिष्क के समय विकास के लिए प्रोटीन, विटामिन एवं खिनज लवण अति आवश्यक होते हैं। आहार में जूझी पोषक तत्वों के कमी से बालक के मस्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। बच्चों के समय विकास के लिए पौष्टिक आहार बहुत ही आवश्यक है और बच्चों के समय विकास का जानने के लिए निम्नाखंड लक्षणों का नियमित निरीक्षण करते रहना चाहिए:

1. वजन एवं लम्बाई: विश्व स्वास्थ्य संगठन (2006) द्वारा दी गई शालापूर्व बालक एवं बालिकाओं की लम्बाई एवं वजन तालिका 4.1 में दर्शाई गया है। आयु के अनुसार वजन में वृद्धि होनी चाहिए। 1-2 वर्ष के बालकों में 2.6 किलो, 2-3 वर्ष के बालकों में 2.1 किलो, 3-4 तथा 4-5 वर्ष के बालकों में 2.0 किलो और 5-6 वर्ष के बालकों में 1.8 किलो वजन में बढ़ोतरी होनी चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

जबकि बालिकाओं में 1-2 वर्ष में 2.6 किलो, 2-3 वर्ष में 2.4 किलो, 3-4 वर्ष में 2.2 किलो, 4-5 वर्ष में 2.1 किलो और 5-6 वर्ष में 2.0 किलो की बढ़ोतरी वजन में होनी चाहिए।

वजन की भाँति ही शिशु की लम्बाई में निरन्तर वृद्ध होनी चाहिए। हालांकि शिशु की लम्बाई आनुवांशिकता पर भी निर्भर करती है। परन्तु खान पान से शिशु की लम्बाई में निरन्तर वृद्ध होती है। बालकों में 1-2 वर्ष में 12.1 से0मी0, 2-3 वर्ष में 8.3 से0मी0, 3-4 वर्ष में 7.2 से0मी0, 4-5 वर्ष में 6.7 से0मी0 और 5-6 वर्ष में 6 से0मी0 लम्बाई में वृद्ध होनी चाहिए जबकि बालिकाओं में 1-2 वर्ष में 12.4 से0मी0, 2-3 वर्ष में 8.7 से0मी0, 3-4 वर्ष में 7.6 से0मी0, 4-5 वर्ष में 6.7 से0मी0 और 5-6 वर्ष में 5.7 से0मी0 की वृद्ध लम्बाई में होनी चाहिए।

तालिका 4.1: शालापूवण बालकों की औसत लम्बाई एवं वजन (WHO, 2006)

<table>
<thead>
<tr>
<th>आयु (वर्षों में)</th>
<th>लम्बाई (से.मी.)</th>
<th>वजन (कि.ग्र.)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>बालक</td>
<td>बालिकाएं</td>
<td>बालक</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
<td>75.7</td>
<td>74.0</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>87.8</td>
<td>86.4</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>96.1</td>
<td>95.1</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>103.3</td>
<td>102.7</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>110.0</td>
<td>109.4</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>116.0</td>
<td>115.1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

2. बच्चों की मांसपेशियाँ सख्त, गठीली एवं मजबूत होनी चाहिए। बच्चों की छाती बाहर की तरफ, पेट अन्तर की ओर, शरीर दोषी तथा हाथ पैर सीधे होने चाहिए जिससे बच्चे की संस्थिति सही दिखे।

3. बच्चों के दाँतों सीधे, चमकदार, मजबूत एवं सामान्य आकृति के होने चाहिए। उनके मसूढ़े सख्त, मजबूत एवं गुलाबी रंग के होने चाहिए। मसूढ़ों से खून नहीं आना चाहिए।

4. बच्चों की त्वचा चिकित्सी, चमकदार, मुलायम, आकर्षक एवं स्वच्छ होनी चाहिए। त्वचा के नीचे वसा का जमाव होना चाहिए किन्तु इन पर फोड़े, पुंछियाँ, दाग, धब्बे आदि नहीं होनी चाहिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

5. बच्चों के बाल घने, काले, चमकदार, मुलायम एवं जीवंत होने चाहिए। उनके सिर पर दो मुंह हाल नहीं होने चाहिए और न ही बाल झड़ने चाहिए।

6. बच्चे की पाचन क्रिया सही हो अर्थात् बच्चे को खुलकर भूख लगती हो, कब्ज़ नहीं रहती हो तथा वह नियमित रूप से मल विसर्जन करता हो।

7. बच्चे चिंतनिहत, धीरे, आलसी एवं जल्दी थकने वाला न हो। वह सतत, प्रसन्न, चुस्त एवं तृप्त दिखे। वह दूसरे के साथ अच्छा व्यवहार करे और अपने व्यवहार पर नियंत्रण रखने की क्षमता रखता हो।

8. बच्चा रात को गहरी नींद में सोने, थकान से शीघ्र मुक्त हो तथा उसमें सहनशीलता हो।

9. बच्चा पूर्णिमा एवं चंदन तौर पर तथा उसमें चीजें की बाल रखने की क्षमता हो।

10. बच्चा हंसता, मुस्कुराता, प्रसन्नचित, उत्साहित, सजग एवं सक्रिय हो। वह अपनी आयु के अनुसार व्यवहार करे तथा सभी कार्यकलाप ओरु रुचि ले।

4.3.2 पोषक तत्वों की मांग

प्रारंभिक बाल्यावस्था में गलत आहार पद्धतियाँ सामाजिक आर्थिक विकास के लिए एक बड़ा खतरा हैं। बच्चों को पोषक तत्वों को उनकी जरूरत के अनुसार देने से उनकी बढ़त अच्छी होती है, विद्यालय रूप का विकास होता है और उन्हें बीमारियों से लड़ने की शक्ति मिलती है। बच्चों में सही पोषण का असर उनके जीवन पर दिखाई देता है। शालापूर्व बालकों की पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा आई0 सी0 एम0 आर0 द्वारा निर्धारित की गई है जो कि तालिका 4.2 में दर्शाई गई है।

तालिका 4.2 शालापूर्व बालकों के लिए पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा (ICMR, 2010)

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>1 – 3 वर्ष</th>
<th>4 – 6 वर्ष</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>ऊर्जा (किलो कैलोरी)</td>
<td>1060</td>
<td>1350</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रोटीन (ग्राम)</td>
<td>16.7</td>
<td>20.1</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा (ग्राम)</td>
<td>27.0</td>
<td>25.0</td>
</tr>
<tr>
<td>कैल्शियम (मिग्राम)</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
</tr>
<tr>
<td>ऊर्जा (मीमारी)</td>
<td>09</td>
<td>13</td>
</tr>
<tr>
<td>----------------</td>
<td>----</td>
<td>----</td>
</tr>
<tr>
<td>लोह तत्व (मीमारी)</td>
<td>400</td>
<td>400</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन 'ए' (माइक्रो ग्राम)</td>
<td>0.5</td>
<td>0.7</td>
</tr>
<tr>
<td>थायमिन (मीमारी)</td>
<td>0.6</td>
<td>0.8</td>
</tr>
<tr>
<td>पायरीडिओफलेबिन (मीमारी)</td>
<td>8</td>
<td>11</td>
</tr>
<tr>
<td>नियासिन (मीमारी)</td>
<td>0.9</td>
<td>0.9</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन सी (मीमारी)</td>
<td>400</td>
<td>400</td>
</tr>
<tr>
<td>फोलिक एसिड (माइक्रो ग्राम)</td>
<td>0.2-1.0</td>
<td>0.2-1.0</td>
</tr>
<tr>
<td>मैनीशिंगम (मीमारी)</td>
<td>50</td>
<td>70</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन B₁₂ (माइक्रो ग्राम)</td>
<td>5</td>
<td>7</td>
</tr>
</tbody>
</table>

ऊर्जा: शालापूर्व बच्चे संक्रिय और ऊर्जावान होते हैं। अपनी वृद्धि और विकास तथा अपनी दैनिक गतिविधियों के लिए उन्हें पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। 1-3 वर्ष के बच्चों को प्रतिदिन 1060 किलो कैलोरी की आवश्यकता होती है जबकि 4-5 वर्ष के बच्चों के लिए यह मांग बढ़कर 1350 किलो कैलोरी हो जाती है। चीनी, तेल, गुड़, घी आदि ऊर्जा के संकेतित स्रोत हैं अत: इन बच्चों के आहार में समयालित कर ऊर्जा में भरपूर वृद्धि की जा सकती है। किस्तु इन खाद्य उत्पादों की आवश्यकता से अधिक आहार में देने से बच्चों में मोटापे की स्थिति हो सकती है जो आज के युग में एक बड़ी समस्या के रूप में समाने आ रही है। बच्चों में मोटापा जीवनभर के लिए खतरनाक विकार भी उपहन कर सकता है जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हड़प्पा रोग, बीचक का जब्दी आना, बालिकाओं में मासिक धर्म का जल्दी गुरू होना, आहार विकार जैसे एनोरिक्सिया और बुलीमिया, अस्थाय और श्वसन से संबंधित अन्य समस्याएं आदि। अध्ययनों से पता चला है कि अधिक वजन वाले बच्चों में वयस्क होने पर भी अधिक वजन बने रहने की संभावना अधिक होती है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रोटीन: शालापूर्व बच्चों में शारीरिक वृद्धि एवं मानसिक विकास तीव्रता से होता है। नई कोशिकाओं एवं तन्तुओं के निर्माण की प्रक्रिया चलती रहती है। इस आयु में अस्थियाँ, दाँतों, मौसमपरिवर्तन, उत्तर आवाद की निर्माण प्रक्रिया शीघ्रता से होती है। चार वर्ष की आयु तक 90 प्रतिशत मस्तिष्क तथा केन्द्रीय नाड़ी संस्थान के तन्तु पूर्ण रूप में लेते हैं। अतः इस आयु में प्रोटीन की दैनिक मांग बढ़ जाती है। बच्चों के आहार में पूर्ण प्रोटीन के स्रोत, जिसमें सभी अमीनो अम्ल विभागन, समस्तिक करते चाहिए। प्राणिज स्रोत से प्राप्त भोज्य पदार्थों में जैसे दूध, आमदा, मौस, मस्ली आदि उच्च कोटि के प्रोटीन विभागन होते हैं। अतः इन्हें आहार में अवश्य ही सम्मिलित करना चाहिए। जो बच्चे शाकाहारी हैं, उन्हें पर्याप्त मात्रा में दूध पिलाना चाहिए।

वसा: वसा ऊर्जा का अच्छा स्रोत होने के साथ-साथ वसा घुलनशील विटामिनों के अवशोषण के लिए भी जरूरी है। धी, तेल, मक्खन आदि के रूप में वसा को बच्चों के आहार में दिया जा सकता है किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि आहार में जरूरत से ज्यादा वसा नॉटाय के कारण बन सकती है।

कैल्शियम: अस्थियाँ एवं दाँतों के निर्माण एवं विकास के लिए कैल्शियम अत्यावश्यक होता है। नवजात शिशु के शरीर में उपस्थियाँ ही अधिक होती हैं। आयु बढऩे के साथ-साथ ये उपस्थियाँ अस्थियाँ में परेरवर्तर होने लगती हैं। परन्तु इसके लिए कैल्शियम अत्यावश्यक होता है। कैल्शियम अस्थियाँ को मजबूत, दृढ़ता एवं परीक्षण प्रदान करता है। दूध कैल्शियम का मुख्य स्रोत है इसलिए इस आयु के बच्चों को दूध एवं दूध से बने व्यंजन पर्याप्त मात्रा में खिलाना चाहिए।

लौह लवण: लौह शरीर की कमी से स्वतंत्रता होने का खतरा रहता है। अतः बालकों के आहार में पूर्ण मात्रा में लौह तत्व विभागन होना चाहिए। लौह तत्व की पूर्ति हेतु बच्चों के आहार में भरपूर मात्रा में पालक, पल्प उ अन्य हर तत्व पत्तेदार सब्जियाँ, यकृत, मौस, अंडा आदि सम्मिलित करने चाहिए।

विटामिन ए: यदि इस आयु के बच्चों के आहार में विटामिन ‘ए’ की कमी होती है तो इसका असर उनकी आँखों पर पड़ता है जिससे पहले वो रातों के शिकार होते हैं और बाद में पूर्ण अंधता के भी शिकार हो जाते हैं। विटामिन ‘ए’ की पूर्ति के लिए बच्चों को दूध, दूध से बने व्यंजन, पनीर, मक्खन, पीले फल एवं हरी पत्तेदार सब्जियाँ को खिलाना चाहिए। इसके अलावा गाजर विटामिन ‘ए’ का सबसे सस्ता एवं अच्छा स्रोत है। अतः इसे अवस्थ ही बच्चों के आहार में सम्मिलित करना चाहिए।

उत्तराखंड मुक्त विद्यालय

MAHS-06
विटामिन ‘बी’ समूह: विटामिन, राइबोफलेविन और नियासिन की दैनिक आवश्यकता बच्चों की आवश्यक कैलोरी की मांग पर निर्भर करती है। बच्चों को बेरी-बेरी रोग से बचाव के लिए विटामिन बहुत ही जरूरी है। बेरी-बेरी रोग इस आयु के बच्चों के लिए जानलेवा भी हो सकता है। विटामिन की प्राप्ति के लिए सम्पूर्ण अनाज, चोकर सहित आटा, छिल्ले युक्त दाल आदि का प्रयोग बच्चों के भोजन के अवश्य करना चाहिए। इसके अलावा खमीर-युक्त भोजन जैसे इडली, डोसा, ढोकला आदि भी विटामिन के अच्छे स्रोत हैं।

बच्चों के आहार में राइबोफलेविन की कमी से होती हुई किसी की बीमारी के लिए थायिमन की कमी हो सकती है। बच्चे के उम्र के अनुसार उन्हें खिलाते समय यह भी जरूरी है कि वे संयोजन का अच्छा उपयोग करें।

नियासिन की कमी से बच्चों में पेलाज्ज़ा नामक रोग होने का खतरा होता है जिससे उनकी मृत्यू भी हो सकती है। पेलाज्ज़ा नामक 3 ‘D’ disease के नाम से जानी जाती है। इसका अर्थ होता है दांत युक्त (डायरिया), धारिया (डरमेटाइटिस) एवं देंटेलिया (पागलपन)। नियासिन की कमी होती है जब वे अनाज, सूखा, युक्त आटा, खमीर युक्त दाल चला जाते हैं।

विटामिन सी: विटामिन सी बच्चों में रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकसित करता है जिसके कारण बच्चे खुशी से बीमार नहीं पड़ते। वे अनाज, मसूर युक्त और दूध युक्त भोजन के लिए भी वित्तीय सशक्त है। शरीर में लौह लवण का स्वस्थ रखने के लिए भी विटामिन सी आवश्यक है। आहार में विटामिन सी की कमी होने के कारण बच्चों में उपलब्ध रहता है जब खाने के दौरान, मूंगफली, युक्त, माँस, मछली और खमीर युक्त भोजन जैसे इडली, डोसा, ढोकला आदि खिलाना चाहिए।

मैणुष: मैणुष एक खिनज लवण है जो बीमार्के का चयापचय आवश्यक है। शरीर में लौह लवण का स्वस्थ रखने के लिए भी विटामिन सी आवश्यक है। आहार में विटामिन सी की कमी होने के कारण बच्चों में बुखार, मौसम, सांतरा, बी एवं अन्य खुशी फल विटामिन सी के अच्छे स्रोत हैं। अत: इनें बच्चों को अवश्य खिलाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचाराणु पोषण

सा महसूस करता है। उसके मूढ में अचानक परिवर्तन होता है, बिना किसी कारण अवसाद का शिकार हो जाता है। बच्चे की लचा गुणक हो जाती है, नाखून आसानी से टूट जाते हैं, बाल झड़ लगते हैं। बच्चों में मैमीशिम की कमी से बचने के लिए उनके भोजन में गेहूँ के बीजांकुर, सोयाबीन, कुटु, दिलया, चावल, सेम आदि सम्मिलित करने चाहिए।

जिज्ञास: बच्चों में जिक की कमी होने से दस्त, निमोनिया, मलरिया होने का खतरा बढ़ जाता है क्योंकि जिक की कमी से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, शरीर की वृद्धि कम हो जाती है एवं बच्चे कुष्टियक हो जाते हैं। दस्त से पीड़ित बच्चों को जिक देने से दस्त जल्दी ठीक हो जाता है।

अध्याय प्रश्न 1

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।
   a. शालापूव बालक का एक वर्ष में ........................................... किलो वजन बढ़ता है।
   b. 4 वर्ष की आयु तक बच्चों में ........................................... प्रतिशत केन्द्रीय नाड़ी संस्थान एवं मस्तिष्क के तनु पूर्ण आकार एवं यप ग्रहण कर लेती है।
   c. 1-5 वर्ष की आयु के बच्चों को आहार में ......................... मिराग्रो कैलिशियम प्रतिदिन देना चाहिए।
   d. बच्चों में विटामिन ‘ए’ की कमी से ................................. रोग होता है।
   e. आई0सी0एम0आर0 द्वारा 1-3 वर्ष के बच्चों के लिए ......................... मिराग्रो लौह लवण की दैनिक मात्रा प्रस्तावित की गई है।

4.3.3 पोषण संबंधी समस्याएं

भारत जैसे विकासशील देशों में शालापूव बच्चों में कुपोषण बहुत अधिक व्याप्त है। इसका मुख्य कारण पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक आहार नहीं मिल पाना है। साथ ही इसका आहार गुणवत्ता एवं गुणात्मकता दोनों में कम होता है। फलता: बच्चे अपेक्षित लम्बाई एवं वजन नहीं प्राप्त कर पाते। भारतीय शालापूव बच्चों में निम्न पोषण संबंधी समस्याएं पाई जाती हैं।

1. विटामिन ‘ए’ हीनता के रोग: इस आयु के बालक विटामिन ‘ए’ हीनता के रोगों से प्रस्तुत रहते हैं। बालक को स्तनपान हीनता हो जाता है जिसमें वह कम प्रकाश या रात के समय देख नहीं पाता। यदि

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 76
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शुरुआत में इसका उपचार नहीं किया जाता तो बालक अंधा भी हो सकता है। गरीब परिवार के बच्चों में यह रोग अधिक देखने को मिलता है किन्तु कई बार सम्पन्न परिवारों के बच्चों में यह रोग अज्ञात, अंधविचार, गलत पाक विधि एवं संक्रमण के कारण भी देखने को मिलता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (1963), एम0 लॉरें (1966) तथा जेिलफ (1966) ने सवालों से यह निष्कर्ष निकाला है कि:

• 1 वर्ष के बच्चों के यकृत में विटामिन ‘ए’ को संग्रह करने की क्षमता बहुत अधिक नहीं होती, इसलिए वे विटामिन ‘ए’ हीनता के जल्दी शिकार हो जाते हैं।
• 1 वर्ष के बच्चों को स्तनपान छुड़ाने के पश्चात यदि विटामिन ‘ए’ से पूर्ण आहार नहीं दिया जाता तो भी वो विटामिन ‘ए’ हीनता के जल्दी शिकार हो जाते हैं।
• यदि बालक सीधे मां के दूध पर आश्ििा हो और मां के दूध में विटामिन ‘ए’ की कमी है।
• स्तनपान से वंचित बालकों में प्रोटीन कैलोरी कुपोषण हो जाता है जिसके कारण उन्हें विटामिन ‘ए’ की कमी हो जाती है।
• 2-3 वर्ष के बच्चों में जब विटामिन ‘ए’ की न्यूनता से संबंधित लक्षण जैसे कैलोरोमेट्रिशिया, जेरोफेदमिया तथा बीटोट स्पॉट के लक्षण दिखाई देते हैं और उनका उपचार नहीं किया जाता तो यह रोग बढ़ने पर बालक की आँखों के कॉरियां व रेटिना को नष्ट कर देता है और अंततः बालक अंधा हो जाता है।

2. प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण: अधिकांश विकसित एवं विकासशील देशों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण एक गंभीर समस्या है। शाकाहारी बालकों में यह रोग अधिक व्याप्त है हालांकि इस रोग की शुरुआत तभी हो जाती है जब यानी का स्तनपान छुड़ाकर उसे ठोस आहार देना शुरु किया जाता है। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण के कारण बालकों में क्वाशियोरकर और मासमस रोग हो जाता है। प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण विशेषकर उन बालकों में देखा जाता है जिन्हें स्तनपान छुड़ाने के बाद ऐसा आहार दिया जाता है जिससे ऊर्जा की पूर्ति तो होती है परन्तु प्रोटीन की पूर्ति नहीं हो पाती। परिणामवश बालक देखने में मोटा एवं तंदूरस्त लगता है जबवकि वह क्वाशियोरकर रोग से प्रभावित होता है। जब बालकों के आहार में प्रोटीन एवं कैलोरी दोनों की ही कमी होती है तब मासमस रोग होता है। इसमें बच्चे की शारीरिक वृद्धि रुक जाती है तथा वजन में अभावक भाव हो जाती है। कम आहार लेना तथा आहार में कम प्रोटीन लेने के अलावा, संक्रमण भी प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का एक मुख्य कारण है। संक्रमण
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

उन्मैत्र बच्चों के लिए संपूर्ण पोषण बनाने के लिए एक नवीनता दाता वैज्ञानिकों के निर्धारण के आधार पर होता है। यह दाता वैज्ञानिकों के निर्धारण के आधार पर होता है।

3. रक्ततापता: जिन बच्चों के आहार में लौह तर्क, फॉलिक अम्ल तथा विटामिन बी12 की कमी होती है उनमें रक्ततापता की समस्या होती है। इसके अलावा जिन बच्चों के पेट में कीड़े होते हैं उनमें लौह तर्क का अवशोषण न होने के कारण भी रक्ततापता होने की संभावना अधिक होती है।

4. विटामिन डी: जिन बच्चों के आहार में विटामिन डी की कमी होती है उन्हें रक्ततापता का भी आस-पास होता है। इसीलिए इस आयु के बच्चों को दूध भी खाने चाहिए।

5. आयोडीन हीनता जन्म रोग: आयोडीन बच्चों के मानसिक और शारीरिक विकास के लिए बहुत जरूरी होता है। आयोडीन की कमी से प्रस्त व्यक्ति बहरे, गौरेपन, भेंगापन, समय पूर्व जन्म,
4.3.4 भोजन संबंधी आदतें

शालापूर्वी बालकों का स्वभाव चंचल होने की वजह से उनका मन हर समय खेल कूद में लगा रहता है। उन्हें एक जगह स्थिर रखकर खाना खिलाना माता पिता के लिए एक चुनौती के समान होता है। किन्तु इस आयु में बालक जो सीखता है वह जीवनपर्यंत उसके साथ रहता है। अतः इस आयु के बालकों के खाने पर व्यवहार करना जितना साबित होता है। 

निम्नलिखित बातों को अनुसरण करने पर इस आयु के बालकों में अच्छी भोजन संबंधी आदतों का विकास किया जा सकता है:

• इस आयु के बच्चों को नकल करना पसंद करते हैं। अतः जरूरी है कि आप उनके सामने वही व्यवहार करें जो आप उनको सिखाना चाहते हैं।
• बच्चों को नियमित समय पर भोजन और नाश्ता कराएं।
• बच्चों को पहले कम मात्रा में भोजन परोसें। जब वह उसे खा ले तभी और भोजन परोसें। उन्हें पूरा खाना खत्म करने पर जोर न दें।
• बच्चों को खाने के लिए खुशनुमा माहौल दें। उन्हें खाना खिलाने के लिए खिलौने, टेलिविजन और मोबाइल जैसी चीजें का अनुभव नहीं कराएं।
• बच्चों को विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों को आहार में दे ताकि उन्हें प्राप्त खाद्य समूह से जरूरी पोषक तत्व पाने में मदद मिलें। प्रत्येक भोजन में कम से कम 3-4 खाद्य समूहों से आहार दें।
• बच्चों को भोजन आकर्षक ढंग से परोसकर दें जिससे उनकी भूख बढ़े और भोजन को खाने के प्रति रुचि जागृत हो।
• इस आयु के बच्चों को पर्याप्त मात्रा (कम से कम आधा किलो) में दूध दें। यदि वह दूध नहीं पीना चाहता तो दूध को खीर, सेवइयाँ, आइसक्रीम, कस्टड, पनीर आदि के रूप में दें।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- यदि बच्चे को कोई सब्जी पसंद नहीं है तो उसे अलग तरह से बनाकर दें। जैसे पातल की सब्जी
  देने की बजाय पातल के पारठे, पूरी या सूप के रूप में दें।
- बच्चों को अधिक मिश्र मसाले युक्त, अत्यधिक मीठा, तला हुआ या खैदे से बनी वस्तुएं देने से
  बचे क्योंकि उसका पाचक तंत्र बिगाड़ सकते हैं।
- बच्चों को कोल्ड ड्रिंक, चॉकलेट, पेस्ट्री, केक, टॉफी, पिज्जा, बर्गर, मेगी जैसे जंक फूड
  देने में बचे आदत को घटने से मिलता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. सत्य अथवा असत्य व्यक्त करे।
   a. शालापूर्व बालकों में स्तंभी रोग विटामिन सी की कमी से होता है।
   b. बालकों में स्तंभाल्पता का मुख्य कारण उनके आहार में लोह लवण की कमी है।
   c. सूर्य की तिरंगे विटामिन ‘डी’ का अधिक स्रोत है।
   d. बच्चों को जंक फूड आहार में देने चाहिए।

4.4 विभागीय बालक

4.4.1 विशेषताएं व शारीरिक परिवर्तन

इस आयु में अपनाई गई आदतें व व्यवहार, किशोरशास्त्र की नींव बनती है। इस आयु में बच्चे
समूह गतिविधियों में रूचि लेना आरम्भ कर देते हैं और उनका लघु दोस्तों के प्रति बड़े लगता है।
इस अवस्था के दौरान शारीरिक विकास की दर धीमी और सिंचा होती है। 5-8 वर्ष की आयु के
दौरान बच्चे बड़ी मांसपेशियों को छोटी मांसपेशियों की तुलना में ज्यादा अच्छे से नियंत्रित कर पाते
हैं और 8-12 वर्ष की आयु में छोटी मांसपेशियों का विकास भी तेजी से होता है। किशोरकल्याण तक
पहुंचने पर बालक शारीरिक वृद्धि, मानसिक विकास तथा नवेणाभासिक विशेषताओं से प्रभावित होने
लगता है। साथ ही उसे परिवार तथा अपने साथियों के साथ सामाजिक भी स्थापित करना पड़ता है
जिसमें उसकी बढ़ती सी ऊर्जा व्यथ होती है। यदि इस आयु में बालक की पौष्टिक आहार नहीं मिलता
तो उसके शारीरिक, मानसिक, वैज्ञानिक एवं संवेणाभासिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

1. वजन एवं लम्बाई: इस आयु सीमा के बच्चों के बीच लम्बाई, वजन और निर्माण के काफी
  अंतर देखने को मिलता है। इसका कारण है कि आनुवंशिक पृष्ठभूमि, पोषण और व्यायाम बच्चे के
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण  

विकास को प्रभावित कर सकते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (2006) द्वारा दी गई विद्यालयी बालक एवं बालिकाओं की लम्बाई एवं वजन तालिका 4.3 में दर्शाया गया है। बालकों की ऊंचाई में 7 से 12 वर्ष के बीच की आयु में 5.2 से लेकर 6.0 से मी तक की वृद्धि होती है जबकि बालिकाओं में इस दौरान 5.8 से लेकर 6.4 से मी तक की वृद्धि होती है। वजन के मामले में बालकों में 7 से 8 वर्ष में 2.5 किलो, 8 से 9 वर्ष में 2.7 किलो, 9 से 10 वर्ष में 3.1 किलो की वृद्धि होती है जबकि बालिकाओं में 7 से 8 वर्ष में 2.6 किलो, 8 से 9 वर्ष में 3.2 किलो और 9 से 10 वर्ष में 3.7 किलो की बढ़ोतरी होती है।

तालिका 4.3: विद्यालयी बालकों की औसतन लम्बाई व वजन (WHO, 2006)

<table>
<thead>
<tr>
<th>आयु (वर्षों में)</th>
<th>लम्बाई (सेमी)</th>
<th>वजन (किलो)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td></td>
<td>बालक</td>
<td>बालिकाएं</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>121.7</td>
<td>120.8</td>
</tr>
<tr>
<td>8</td>
<td>127.3</td>
<td>126.6</td>
</tr>
<tr>
<td>9</td>
<td>132.6</td>
<td>132.5</td>
</tr>
<tr>
<td>10</td>
<td>137.8</td>
<td>138.6</td>
</tr>
<tr>
<td>11</td>
<td>143.1</td>
<td>145.0</td>
</tr>
<tr>
<td>12</td>
<td>149.1</td>
<td>151.2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

2. इस आयु में बालकों में क्रियाशीलता और आत्मनिर्भरता दोनों ही बढ़ जाती है। वे अपना हर कार्य स्वयं करना चाहते हैं जैसे नहाना, वस्त्र पहनना, भोजन करना, अपनी वस्त्रों को यथा रखना आदि। दूसरे दृष्टिकोण उन्हें पसंद नहीं आता।

3. विद्यालयी बालकों में समूह भावना बहुत प्रभावित होती है। वे अधिकांश समय अपने दोस्तों के साथ बिताते हैं जिसके कारण वे अपने भोजन पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते। समूह में रहकर बालक समाजीय मान्यताओं एवं आचरणों को सीखते हैं।

4. बाल्यवस्था में बालक के हाथ पैरों का विकास शरीर की तुलना में अधिक तीव्र होता है जिससे उनकी दौरे लम्बी प्रतीत होती हैं। अतः इस आयु को सारस अवस्था भी कहा जाता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

5. इस आयु में बालक पर स्कूल की पढ़ाई, कत्ता में प्रतिस्पर्धा की भावना, सहपाठियों के साथ समायोजन में समस्या आदि कई तरह के दबाव होते हैं जिससे बालक तनाव में रहता है। यद्यपि इस आयु में बालक को अधिक भूख लगती है किन्तु विद्यालय के काम की अधिकता, गृहकार्य, खेलने से बचना आदि कारणों से वो भरपूर भोजन नहीं कर पाते।

6. इस आयु के बालक बहुत जिज्ञासु प्रवृत्ति के होते हैं। वे अपने सम्पर्क में आने वाली हर वस्तु के बारे में समुचित जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।

7. इस आयु में नैतिकता भावना का विकास होने लगता है। फलतः वह परिवार, समूह, साथियों तथा विद्यालय व समाज के नियमों के अनुसार आचरण करने लगता है।

8. इस अवस्था के बालकों में किसी विशेष भोजन के प्रति रुचि बन जाती है और कुछ भोजन को वो बिल्कुल नहीं करना चाहते।

10. इस आयु में हड्डियाँ परिपक्व हो जाती हैं। दूध के दाँत गिर जाते हैं और स्थायी दाँत आ जाते हैं। शरीर की वृद्धि के साथ खून की मात्रा का भी वृद्धि होता है।

4.4.2 पोषक तत्वों की मांग

इस आयु के बच्चों के लिए पोषक तत्व बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। दिन भर के खेल कूद और विकास के लिए उन्हें पवारी मात्रा में पोषक तत्वों की जरूरत होती है। इस आयु में उन्हें जितना अधिक पौष्टिक आहार मिलेगा उनका विकास उतना ही अच्छा होगा। आई0 सी0 एम0 आर0 द्वारा विद्यालयी बालकों के लिए पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा निर्धारित करते समय इन्हें 2 वर्गों ‘7 से 9 वर्ष’ एवं ‘10 से 12 वर्ष’ में विभाजित किया गया है। पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा 7 से 9 वर्षों के दौरान बालक और बालिकाओं में समान है जबकि 10 से 12 वर्षों के दौरान यह मात्रा बालक और बालिकाओं में भोड़ी भिन्न है जो ठाकुर 4.4 में दर्शाई गई है।

तालिका 4.4: विद्यालयी बालकों के लिए पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>7 – 9 वर्ष</th>
<th>10 – 12 वर्ष</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रोटीन (ग्राम)</td>
<td>29.5</td>
<td>39.9</td>
</tr>
<tr>
<td>ऊर्जा (किलो कैलोरी)</td>
<td>1690</td>
<td>2190</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विभवविद्यालय 82
ऊर्जा: विद्यालयी बालक अत्यधिक क्रियाशील होते हैं जिसके कारण उन्हें अच्छी भूख लगती है। अधिक क्रियाशील होने की वजह से इन बच्चों को कैलोरियुक्त आहार पर्याप्त मात्रा में देना आवश्यक है अन्यथा उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरुद्ध हो सकता है। बढ़ती आयु के साथ बच्चों में ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ती है। 10 वर्ष के परवर्ती बालिकाओं में यह आवश्यकता बालकों की अपेक्षा में थोड़ी कम होती है।

प्रोटीन: विद्यालयी बच्चों में वृद्धि, शक्ति और मांसपेशियों के रखरखाव के लिए प्रोटीन बहुत महत्वपूर्ण है। साथ ही नवीन कोशिकाओं के निर्माण तथा दूसरी पूरी कोशिकाओं एवं तनावों के निर्माण के लिए प्रोटीन युक्त भोजन लेना आवश्यक होता है। प्रोटीन की पूर्ति हेतु बच्चों के आहार में पर्याप्त मात्रा में दूध, अंडा, मांस, मछली, सोयाबीन एवं दालों को सम्मिलित करें।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

ब्याह: बच्चों में ब्याह, विशेष रूप से ओमिगा- 3 वसीय अम्ल संज्ञानात्मक विकास के लिए बहत महत्वपूर्ण है। बच्चों को प्रत्येक ब्याह तेल, घी, मस्फन आदि के रूप में दी जा सकती है। इसके अलावा ब्याह घुलनशील विटामिनों जैसे विटामिन ‘ए’, ‘डी’, ‘ई’ एवं ‘के’ के संचरण के लिए भी आहारी ब्याह आवश्यक है।

कैलिशायम: इस आयु के बच्चों में भी दौंत एवं अफ्तें अर्थों के विकास के लिए कैलिशायम आवश्यक है। इस आयु में बच्चों की दौंत टूट जाती है और उनके स्थान पर स्थायी दौंत उगती है। ऐसी परिस्थिति में उनके आहार में कैलिशायम पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए। इसलिए इस आयु के बच्चों को दूध एवं दूध से बने उपादान अधिक मात्रा में खिलाने चाहिए। कैलिशायम के अवशेषण के लिए विटामिन ‘डी’ भी आवश्यक होता है। इस आयु में विटामिन ‘डी’ की मांग भोजन के माध्यम से कम हो जाती है क्योंकि बालक अपना अधिक समय पर द्वारर धूप में बिता लेता है। अत: विटामिन ‘डी’ की पूर्ण सूर्य की रोशनी से पूरी हो जाती है।

लौह त्वरण: लौह त्वरण की कमी होने पर रक्तात्मक, थकान और कमजोरी होने लगती है जिसकी वजह से बच्चों की शारीरिक खियाएं प्रभावित हो जाती हैं। इसके अलावा लौह त्वरण की कमी की वजह से बच्चे को ध्यान केंद्रित करने में समस्या हो सकती है और उसका शैक्षणिक प्रदर्शन खराब हो सकता है। इसकी पूर्ति के लिए बच्चों के आहार में सबुत अनाज, फलियाँ, हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे पालक, मेथी, बथुआ आदि को सम्पूर्ण रूप से खाना पसन्द नहीं करते। ऐसे में उन्हें सब्जी की बजाय मेथी की पूरी, बथुआ के पाटे, पालक का सूप आदि बनाकर खिलाना जा सकता है। लौह त्वरण के अत्यधिक अवशेषण के लिए विटामिन सी से समय से सोने जोड़े जाना चाहिए। इस आयु के बच्चों ने लौह त्वरण की कमी से होने वाले समस्याओं तथा कमी के बारे में बताते हैं।

पूर्णता बालकों के आहार में इन विटामिनों की मांग बढ़ती आयु के साथ बढ़ती है और बालिकाओं की
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अपेक्षा में बालकों में अधिक होती है। हालांकि पाइरिडोक्सिन और फोलिक अम्ल की दैनिक मांग 10-12 वर्ष के दौरान बालक और बालिकाओं में समान होती है।

विटामिन ‘सी’: बच्चों को विभिन्न रोगों से बचाव तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए पर्याप्त मात्रा में विटामिन ‘सी’ की आवश्यकता होती है। इसके नियमित सेवन से सर्दी, खांसी व अन्य तरह के संक्रमण का खतरा कम हो जाता है। साथ ही यह शरीर में विटामिन ई की आपूर्ति को पुनर्उत्पादन करता है और शरीर में लोहा की अवशोषण क्षमता को भी बढ़ाता है। वह एक एंटीएलिजिंक और एंटीआक्सिडेंट के रूप में भी काम करता है और दांत, मसूद और आँखों को भी स्वस्थ रखता है।

मैनीशियम एवं जिंक: मैनीशियम और जिंक दोनों की आवश्यकताएं बढ़ती आयु के साथ बढ़ती हैं। 10-12 वर्ष के दौरान मैनीशियम की आवश्यकता बालकों की अपेक्षा बालिकाओं में अधिक होती है जबकि जिंक की आवश्यकता दोनों में समान होती है। बच्चों में मैनीशियम और जिंक की कमी से होने वाले रोग एवं इनके सोतों के बारे में विद्यालयी पूर्व बच्चों में “पोषक तत्वों की मांग” के अंतर्गत बताया जा चुका है।

अभ्यास प्रश्न 3

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।
   a. विद्यालयी बालकों की अवस्था को ........................................... अवस्था भी कहा जाता है।
   b. 7 से 9 वर्ष के बच्चे के दाँतों एवं अस्थियों के विकास के लिए प्रतिदिन ........................................... मिश्रण के लिए प्रतिदिन की आवश्यकता होती है।
   c. विद्यालयी बालकों में ........................................... भावना प्रकट होती है।
   d. 10 से 12 वर्ष के दौरान गैरीटीन की आवश्यकता बालकों की अपेक्षा बालिकाओं में ........................................... होती है।
   e. 10 वर्ष के बालक को प्रतिदिन ........................................... खिलो कैलोरी अपने आहार में लेनी चाहिए।
4.4 पोषण संबंधी समस्याएं

आज के बच्चे ही कल के युग बनते हैं और देश की प्रगति, सुरक्षा और संरक्षण का दायित्व इनके कंबों पर होता है। इसके लिए आवश्यक है कि ये बच्चे शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ बनते हों। विद्यालयी बालकों की पोषण समस्याओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। नये तन्तुओं के निर्माण, ऊर्जा उत्पादन, क्षीणता की मरम्मत, संक्रमण से बचाव आदि के लिए पोषण तथा आवश्यक होते हैं। अतः विद्यालयी बालकों का आहार नियोजन इस तरह होना चाहिए कि उन्हें सभी आवश्यक पोषण तथा पर्यावरण मात्रा में मिल सके। आमतौर पर विद्यालयी बालकों में निम्नलिखित पोषण या भोजन संबंधी समस्याएं देखने को मिलती हैं:

1. भोजन से इनकार: इस आयु के बालक कोई विशेष भोजन मिलते हैं और उन्हें खाना पसंद करते हैं। जो भोजन उन्हें पसंद नहीं होता उसे वो छू ते तक नहीं खाते। इस आयु के बच्चे हरी पत्ते, सब्जियाँ और अन्य सब्जियाँ जैसे लोही, तोरई, टिंडे, करेला, कदू आदि खाना कम पसंद करते हैं। कई बार वो खेलने में इतने व्यस्त होते हैं कि भोजन को प्राथमिकता नहीं देते। इसी वजह से बच्चे स्कूल में अपना टिफिन भी नहीं खोलते। इन सब की असहनीयता देखने को मिलती है। ऐसे में इन बालकों का आहार से इस भोजन पदार्थ को पूरी तरह से हटाना पड़ता है जो उनके पोषण तथा रोग और स्वास्थ्य सीमाओं में निषिद्ध होता है। यह बालक अपनी आहार की तरह नहीं खाते, उसमें एक या एक से अधिक पोषण तत्व की कमी हो जाती है। ऐसे में हर संभव कोशिश करनी चाहिए कि बालक हर तरह का भोजन अनुकूल करे, जाने वाली खाद्य वस्तु को उन्हें मिलाया जा सके।

2. एलजीबी और खाद्य असहिष्णुता (Food Intolerance): विद्यालयी बालकों में अक्सर कुछ खाद्य पदार्थों खासकर ऐल्लर्ट और मूंगफली के प्रति एलजीबी देखी जाती है। इसके अलावा कुछ बालकों में गेहूं में पाए गए वाला प्रोटीन (एल्टन) और दूध में पाई गई वाली लैंडस्ट र्फरा के प्रति असहनीयता देखी जाती है। ऐसे में इन बालकों के आहार से इन भोजन पदार्थों का पूरा तरह से हटाया जाता है जो उनके पोषण स्तर को प्रभावित कर सकता है। इस स्थिति में जरूरी है कि बालक को जिस खाद्य पदार्थ से बालक को एलजीबी हो उसका खाद्य विकल्प बालक को दिया जाए या डॉक्टर से पूछकर बालक को पूरक दिये जाए।

3. रक्ताल्पता: इस आयु के बालकों में लौह लूह की कमी से होने वाली रक्ताल्पता एक आम समस्या है। यह व्यायाम 2 से 9 वर्ष के बालकों में देखी जाती है जिनका आहार ज्यादातर दूध और दूध से बने व्यायाम या प्रातिभागीता होता है और लौह लूह के सीत सीत कम या न के बराबर आहार में समिलता होती है। रक्ताल्पता से पीड़ित बच्चे स्कूल में अच्छा शैक्षणिक प्रदर्शन नहीं कर पाते और अक्सर कमजोरी और थकान महसूस करते हैं। रक्ताल्पता से बचाव के लिए जरूरी है कि
उनके आहार में लोह लवण और सोडियम के साथ सहज उपचार की आवश्यकता आदि सम्बन्धित किये जाएं।

4. मोटापा: वर्तमान युग में बिदा लायी बालकों में मोटापा एक आम समस्या होती जा रही है। जब से हमारी जीवनशैली में टीवी, इंटरनेट, मोबाइल ने अपनी जगह बनाई है, धीरजी धीरजों यह साधन बच्चों के जीवन में शारीरिक खेल कूद की जगह लेते जा रहे हैं। साथ ही अगर बालक जंग में भोजन जैसे मूडाल, बार, पिज्जा, कोल्ड ड्रिंक आदि का शोकीन है तो वह बहुत ही कम आयु में मोटापे से ग्रस्त हो जाता है। बाल्यास्था में मोटापा, व्यस्त अवस्था में होने वाली कई बीमारियों जैसे मधुमेह, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप आदि का कारण बनता है। मोटापे से बचने के लिए बहुत ही कि बच्चों के जंग फूड के स्थान पर घर का बना साफ, स्वच्छ व पौष्टिक भोजन दिया जाए और उन्हें टीवी, इंटरनेट, मोबाइल के साथ अधिक बक्त बिताने की बजाय शारीरिक खेल कूद के लिए प्रेरित किया जाए।

5. आहार विकार: इस आयु में कुछ बच्चों में ऐनोरिया नवासा, बुलिया नवासा और बिज इंटिग विकार देखने को मिलते हैं। ऐनोरिया नवासा से ग्रस्त बालक अपने शरीर के बजन व आकृति को लेकर संतुलित नहीं होते हैं और बजन घटने के लिए भूखे रहते हैं जो स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्याएं पैदा कर देता है। बुलिया नवासा से ग्रस्त बालक योग्य समय में अधिक और बार-बार खाते हैं और फिर जबरदस्ती उत्पीड़ित करते हैं या अत्यधिक व्यायाम करते हैं। बिज इंटिग विकार से ग्रस्त बालक रोजाना अधिक खाते हैं और भोजन पर नियमन नहीं कर पाते। इसमें बालक भूख न होने पर भी खाते हैं और तब तक खाते रहते हैं जब तक उनको पेट भरने के बाद चेतनी फर्जी हो। यह समस्याएं बालकों की अपेक्षा बालिकाओं में ज्यादा देखी जाती हैं। बच्चों में आहार विकार की रोकथाम के लिए बच्चों के आस-पास डाइटिंग या आहार नियंत्रण की बात न करें और उनमें स्वस्थ शरीर की भावना पैदा करें।

6. दाँतों में सड़न: इस आयु में बच्चों में अक्सर दाँतों की सड़न की समस्या देखी जाती है जिसका मुख्य कारण अधिक मीठे व्यंजन, टॉफी, चॉकलेट, कोल्ड ड्रिंक आदि का सेवन है। इस तरह के भोजन अक्सर दाँतों में चिपक जाते हैं और दाँतों में सड़न को आमंत्रित करते हैं। अगर बच्चा नियमित रूप से अपने दाँतों की सफाई नहीं करता तो उसके दाँत सड़ जाते हैं। इसलिए जरूरी है कि बच्चों को इस तरह के भोजन पदार्थ सीमित मात्रा में दे तथा अपने दाँतों की सफाई और सफाई के प्रति राय सुनाते रहने के लिए प्रेरित करें।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

4.4.4 भोजन सम्बन्धी आदतें

विद्यालयी बालकों में काफी मनोवैज्ञानिक व मानसिक तनाव होता है जिसकी वजह से उनके आहार की आवश्यकताएं बदल जाती हैं। बालक के आहार में विविधता लाने के लिए उसकी थाली में कम से कम एक प्रकार का दृष्ट उत्पाद, एक प्रकार की सब्जी, 1 प्रकार का मांस/मछली/दाल, एक प्रकार का फल और एक प्रकार का अनाज होना चाहिए। बालक को हर तरह का भोजन लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। इसके अलावा बालक में भोजन सम्बन्धी अच्छी आदतों का निर्माण करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:

• बालक को खाद्य पदार्थों के स्वास्थ्य तालमेल और पोषण के महत्त्व के बारे में बताए। क्योंकि यह उसे किसी भोजन को पूर्ण रूप से अपनाने और खुश होकर खाने के लिए तैयार करेगा।
• रात का खाना खाने के बाद सुबह के नाश्ते के लिए एक लंबा अंतराल होता है, इसलिए बच्चे के अधिक भूख होने की संभावना रहती है। किसी समय कम होने के कारण कई बार वो नाश्ता नहीं करते और धीरे-धीरे ये उनकी आदत बन जाती है। नाश्ता करना स्कूल में उनके प्रदर्शन की नकारात्मक तरीके से प्रभावित कर सकता है। इसलिए बच्चों को नाश्ता करने के लिए जरूर प्रोत्साहित करें।
• बच्चे को सुबह जलदी स्कूल जाना होता है। इसलिए सुबह का नाश्ता पूर्ण व पीढ़ी होना चाहिए। जिसे खाने में कम समय लगे। अतः उन्हें दूध, अंडा या इन से बना कोई व्यंजन दे सकते हैं।
• दोपहर का खाना बालक विद्यालय में अपने साथ खाता है। इसलिए जरूरी है कि उसका भोजन देखने में आकर्षक, खाने में स्वादिष्ट और पोषण से भरपूर हो।
• बच्चों के आहार में फल व सब्जी अवश्य सम्मिलित करें ताकि उनकी विटामिन और खनिज लवण की जरूरत पूरी हो सकें।
• भोजन में नवीन भोज्य पदार्थों का समावेश इस तरह से करें कि बच्चे उस भोजन को उत्सुकता एवं प्रसन्नता से ग्रहण करें।
• यदि बालक कोई विवेचन आहार का पसंद नहीं करता तो उसके रूप, आकार एवं पकाने की विधि में परिवर्तन कर उसके सामने प्रस्तुत करें।
• स्नेक्स सहित बच्चों के लिए एक स्वस्थ आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसलिए पीढ़ीता के साथ-साथ उच्च ऊर्जा वाले नाश्ते बच्चे को दें।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

MAHS-06

88
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- बच्चों को भोजन बनाने व भोजन बनाने की योजना में शामिल करें जिससे उनकी सुचि भोजन में बनी रहे।
- बच्चों को भोजन करने के लिए शांत, मधुर व प्रेम भरा वातावरण दें और उनको परिवार के साथ बैठकर भोजन करने के लिए प्रेरित करें।

अभ्यास प्रश्न 4

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।
   a. बच्चों को लेक्ट्रोज असहिष्णुता होने पर भी दूध देना बंद नहीं करना चाहिए, अन्यथा उनमें कैलोडिशम की कमी हो जाएगी।
   b. विद्यालयी बालकों में रक्तात्ल्पता लोह लवण की कमी से होती है।
   c. बुलीयांस से पीड़ते हुए बच्चा वजन कम करने के लिए अपने को भूखा रखना चाहिए।
   d. बाल्यवस्था में मोटापे का कारण अपने आहार में अधिक कैलोरी लेना है।

4.5 सारांश

स्वस्थ रहने के लिए बच्चों को भोजन के समान पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है किन्तु विभिन्न मात्रा में। अधिक सक्रिय होने की वजह से बच्चे के शरीर को अधिक ईंधन की आवश्यकता होती है। बाल्यवस्था के दौरान बच्चों की लम्बाई एवं वजन में भी वृद्धि होती है जिसके लिए उन्हें अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है। इसके यह होता है उन्हें विटामिन और खनिज लवण भी पूरे मात्रा आवश्यक होते हैं क्योंकि इसी अवस्था में उनका मानसिक विकास, रोग प्रतिरोधक क्षमता, रक्त वाहिनियों एवं नाड़ी तन-नाड़ी आदि का विकास भी होता है। आयु बढ़ने के साथ इन पोषक तत्वों के जबरदस्त भी बढ़ती है। यदि आवश्यकता के अनुसार बच्चों को यह पोषक तत्व नहीं मिल पाते तो उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व संवेगात्मक विकास प्रभावित हो सकता है।

उनमें पोषक तत्वों की हिन्दी से संबंधित रोग जैसे रात्रिचर, रक्ततरंग, वेंटिलेशन ऊर्जा क्षुरोषण आदि होने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए बच्चों को सभी पोषक तत्वों से भरपूर आहार देना चाहिए। बाल्यवस्था के दौरान, बच्चों का भोजन पौष्टिक होने के साथ स्वादिष्ट एवं आकर्षक भी होना चाहिए ताकि वो भोजन सहयोग स्वीकार करें।
4.6 पारिभाषिक शब्दावली

• रक्तस्तर: खून में स्वस्थ लाल रक्त कोशिकाएं कम होने की स्थिति।

• रक्तवीं: विटामिन ‘सी’ की कमी से होने वाला रोग जिसमें मसूदों से खून आने लगता है व दांत गिर जाते हैं।

• चेंचु: थायरोइड के नीचे तितली के आकार की प्रक्षिप्ती की असमान्य वृक्ष।

• बुलीनिया नवोसा: बालक थोड़े समय में अधिक और बार-बार खाते हैं और फिर जबरदस्ती उल्टी करते हैं या अत्यधिक व्यायाम करते हैं।

• विज इंट्रो बिकार: बालक रोजनार अधिक खाते हैं और भोजन पर नियंत्रण नहीं कर पाते।

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रित स्थानों की पूर्त करें।
   a. 2-2.5
   b. 90 प्रतिशत
   c. 600
   d. रतींधी
   e. 9

अभ्यास प्रश्न 2

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।
   a. असत्य
   b. सत्य
   c. सत्य
   d. असत्य

अभ्यास प्रश्न 3
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।
   a. सारस
   b. 800
   c. समूह
   d. अधिक
   e. 2010

अभ्यास प्रश्न 4

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।
   a. असत्य
   b. सत्य
   c. असत्य
   d. सत्य
   e. सत्य

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2. सिंह वृंदा, आहार एवं पोषण िवअgदटँान (2016), चौदहवाँ संअgजद4 क
4. इंटेनेट सोट: https://www.who.int>growthref.

4.9 विबंधात्मक प्रश्न

1. शालापूर्व एवं विद्यालयी बालकों में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के बारे में विस्तार से चर्चा करें।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

2. शालापूर्व बालकों की पोषक आवश्यकताओं के बारे में बताए और उनकी कमी व अधिकता से होने वाले रोगों की चर्चा कीजिए।

3. विद्यालयी बालकों की पोषक आवश्यकताओं के बारे में चर्चा करें।

4. विद्यालयी बालकों में किस तरह की पोषण संबंधी समस्याएं देखने को मिलती हैं, चर्चा कीजिए।
इकाई 5: किशोरावस्था एवं प्रोड़ावस्था में पोषण

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 किशोरावस्था
   5.3.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन
   5.3.2 किशोरावस्था में पोषक तत्वों की मांग
   5.3.3 किशोरावस्था में आहार नियोजन
   5.3.4 किशोरावस्था में पोषण सम्बंधी समस्याएं
5.4 प्रोड्डावस्था
   5.4.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन
   5.4.2 प्रोड्डावस्था में पोषक तत्वों की मांग
   5.4.3 प्रोड्डावस्था में आहार नियोजन
   5.4.4 प्रोड्डावस्था में पोषण सम्बंधी समस्याएं
5.5 सारांश
5.6 पारिभाषिक शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.9 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

13-18 वर्ष की अवस्था को किशोरावस्था कहा जाता है। यह परिवर्तन की अवस्था होती है। इस आयु में व्यक्ति के शरीर में कई शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक परिवर्तन होते हैं। 18 वर्ष की आयु तक पहुँचने पर बच्चे का वजन दोगुना हो जाता है। बालक अगर पूर्ण लम्बाई प्राप्त कर लेता है तथा बालक और बालिकाओं के मध्य स्पष्ट शारीरिक परिवर्तन दिखाई देंगे शुरु हो जाते हैं। दोनों ही लिंगों में पूर्ण युग परिपक्वता देखी जाती है। इस अवस्था में शारीरिक वृद्धि की गति अन्तर से तीव्र होती है जिसके अंतर्गत असिद्धों का बढ़ना, मासमेंतों में वृद्धि, लड़कों में कंधों का चोट्ठा होना, शरीर में बालों का उगना, आवाज में भारीपन, लड़कियों में स्तनों का विकास, नितम्भों का बढ़ना,
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

मासिक थर्म की शुरुआत आदि परिवर्तन दिखाई देते हैं। इस आयु में तेजी से हो रहे शारीरिक परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए किशोरों के पोषण पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि उनके समपूर्ण व्यक्तित्व का विकास इसी अवस्था में होता है।

प्रीड़ावस्था किशोरावस्था के पश्चात शुरु होने वाली अवस्था है। यह अवस्था शारीरिक वृद्धि की दृष्टि से जीवन की स्थाई अवस्था है जिसमें शरीर की पूर्ण वृद्धि हो गई होती है। इसलिए इस अवस्था में पोषक तत्त्वों की आवश्यकता शारीरिक वृद्धि के लिए न होकर शरीर की गतिविधियों को सुचारू रूप से चलाने के लिए होती है। यह अवस्था परिश्रम और व्यस्तता की अवस्था होती है। प्रस्तुत इकाई में आप किशोरावस्था एवं प्रीड़ावस्था में पोषण आवश्यकताओं तथा आहार नियोजन के विषय में जानें।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्यायन के उपरांत शिक्षार्थी;

• किशोरावस्था तथा प्रीड़ावस्था की विशेषताएं तथा शारीरिक परिवर्तनों की जानकारी लेने;
• किशोरावस्था तथा प्रीड़ावस्था की पोषण आवश्यकताओं को जानने;
• किशोरावस्था तथा प्रीड़ावस्था में आहार नियोजन की जानकारी प्राप्त करने।

5.3 किशोरावस्था

5.3.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन

किशोरावस्था तीव्र वृद्धि तथा परिवर्तनों की अवस्था है। इस अवस्था में किशोरों में कई विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं जो संख्या में निम्न वर्गित हैं।

शारीरिक परिवर्तन: इस अवस्था में मांसपेशियों तथा हड्डियों का आकार एवं कार्य करने की क्षमता बढ़ जाती है। किशोरावस्था वृद्धि स्पुर्त (Growth Spurt) की अवस्था है जिसके दौरान हदय, फेफड़े, आमाशय, गूंड अपने पूर्ण आकार एवं क्रियाशीलता के स्तर पर पहुँच जाते हैं। इस अवस्था में किशोरों में कई लेगिव ग्रीन परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं:

लड़कों के पूर्ण लम्बाई प्राप्त कर लेते हैं, उनमें दाँत-मुंड़ आना, आवाज़ में भारीपण, मांसपेशियों में दृंता, अस्थियों का पूर्ण विकास, वृद्धि स्पुर्त नारा पुष्टि लेगिव विकास देखा जाता है। सामान्यतः लड़कों की लम्बाई 12 से 13 वर्ष की आयु में धूम होकर 18 से 19 वर्ष की आयु तक
पूर्ण हो जाती है। शारीरिक भार में लम्बाई के अनुश्रूप वृद्धि होती है जो औसत 18 से 22 किलोग्राम तक होती है।

लड़कियों में मस्तिष्क का आरोप विशेष शरीरप्राप्ति का प्रथम एवं अति महत्वपूर्ण लक्षण है। इसके अतिरिक्त लम्बाई में वृद्धि, वक्ष्यस्थल का विकास, नितंबों का चौड़ापन, शारीरिक संदर्भ में वृद्धि आदि देखे जाते हैं। सामान्यतः लड़कियों की लम्बाई 10 से 11 वर्ष की आयु में शुरू होकर 17 से 18 वर्ष की आयु तक पूर्ण हो जाती है। लड़कियों के वजन में वृद्धि समान ही होती है। शरीर के कुछ भागों जैसे नितंबों आदि पर अधिक वसा संग्रहित होती है।

मानसिक परिवर्तन: किशोरावस्था में शारीरिक विकास के साथ मानसिक विकास भी अपने चरम पर होता है। किशोर इस अवस्था में अपने निर्णय स्वयं लेना पसंद करते हैं तथा किसी का दखल नहीं पसंद करते। उन पर अपने साधनों का अत्यधिक प्रभाव होता है। उनके सभी निर्णय तथा भोजन समांधों में सफलता आदि साधियों में श्रवण भवन होती है। किशोरावस्था के मानसिक विकास का एक मुख्य लक्षण है- मानसिक स्वतन्त्रता। वह गुणों, रीति-रिवाजों, अन्यविधासों और पुरानी परम्पराओं को अस्वीकार करके स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता है। किशोरावस्था में मानसिक योग्यताओं का स्वरूप निश्चित हो जाता है। उसमें सोचने, समझने, विचार करने, अन्तर करने और समस्या का समाधान करने की योग्यताएं उत्पन्न हो जाती हैं। इस अवस्था में ध्यान केन्द्रित तथा तर्क करने की क्षमता का पयास विकास हो जाता है। वह तर्क किए जाने की विचार को व्यक्त करने के लिए तैयार नहीं होता है।

कल्पना प्रचुरता की अवस्था: किशोर वास्तविक जगत में रहते हुए भी कल्पना के संसार में विचारण करता है। कल्पना के बाहुल्य के कारण उसमें दिन में ही स्वयं देखने की प्रकृति उत्पन्न हो जाती है। बालकों के अपेक्षा बालिकाओं में कल्पना-शक्ति अधिक होती है। कल्पनिक संसार में वे उन सब बातों को सकार कर लेते हैं जो वास्तविक संसार में सम्भव नहीं हैं। इस कारण से वे शांत और अंतर्मुखी हो जाते हैं।

भावनात्मक अस्थिरता: हामींनाल परिवर्तनों के कारण किशोरों में मिजाज परिवर्तित होता रहता है और अक्सर उनका स्वभाव बदल जाता है। वे बच्चों या बच्चियों की तुलना में अधिक तीव्र और व्यक्तिगत भावनाएं रखते हैं और इसी कारण वे अपनी समस्याओं को भी बढ़ाते हैं। भावनात्मक अस्थिरता भूख या असामान्य अथवा लंबी नींद का कारण भी बन सकती है। भावनात्मक रूप से अस्थिर किशोर के अवसादग्रस्त होने की सम्भावना भी अधिक होती है।
नैदािनिक एवं उपचारात्मक पोषण

किशोर लैगिकता: यह मानव विकास का एक चरण है जिसमें किशोर यौन भावनाओं का अनुभव करते हैं और उनका अन्वेषण करते हैं। तर्कज्ञता की शुरुआत में लैगिकता/कामुकता में रुचि तेज हो जाती है। किशोरों में यौन रुचि बहुत स्थिर हो सकती है जो सांस्कृतिक मानदंडों, यौन शिक्षा, यौन अभिविन्यास और सामाजिक नियंत्रण से प्रभावित होती है।

5.3.2 किशोरावस्था में पोषक तत्वों की मांग

किशोरावस्था में तीन परिवर्तनों तथा संगत के प्रभाव से गलत आहार पद्धतियाँ विकसित हो सकती हैं। किशोरावस्था में उचित पोषण का असर उनके भावी जीवन पर दिखाई देता है। इस अवस्था में किशोर अपने शरीर के प्रति अन्यत्व सजग रहते हैं तथा आक्रोक्ष दिखना उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। किशोरियों में दुबलाएं एवं छाहरा दिखने के प्रति अधिक रक्षा रहता है जिस कारण वे अपने आहार में कभी छुट्टी कर देते हैं। यह उनके पोषण स्तर को विपरीत रूप से प्रभावित करता है। किशोरों की पोषक तत्वों की दैनिक प्रतिष्ठापित मात्रा आई0 सी0 एम0 आर0 द्वारा निर्धारित की गई है जो कि तालिका 5.1 में दर्शाई गई है।

तालिका 5.1: किशोरावस्था में अनुशासित पोषक तत्वों की आवश्यकता
(भारतीय विकिसा अनुसंधान अवलोकन, 2010)

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>लड़के</th>
<th>10-12 वर्ष</th>
<th>13-15 वर्ष</th>
<th>16-17 वर्ष</th>
<th>लड़कियाँ</th>
<th>10-12 वर्ष</th>
<th>13-15 वर्ष</th>
<th>16-17 वर्ष</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>शारीरिक भार (किग्रा)</td>
<td>34.3</td>
<td>47.6</td>
<td>55.4</td>
<td>35.0</td>
<td>46.6</td>
<td>52.1</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>ऊजागर (किलोकैलोरी)</td>
<td>2190</td>
<td>2750</td>
<td>3020</td>
<td>2010</td>
<td>2330</td>
<td>2440</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>प्रोटिन (ग्राम)</td>
<td>39.9</td>
<td>54.3</td>
<td>61.5</td>
<td>40.4</td>
<td>51.9</td>
<td>55.5</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>वसा (ग्राम)</td>
<td>35</td>
<td>45</td>
<td>50</td>
<td>35</td>
<td>40</td>
<td>55</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>क्लीरिक्स (मिग्रा)</td>
<td>800</td>
<td>800</td>
<td>800</td>
<td>800</td>
<td>800</td>
<td>800</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>लौह त्वरण (मिग्रा)</td>
<td>21</td>
<td>32</td>
<td>28</td>
<td>27</td>
<td>27</td>
<td>26</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>वीटामिन ए (रेटीनियल)</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>बीटा कैरोटीन</td>
<td>4800</td>
<td>4800</td>
<td>4800</td>
<td>4800</td>
<td>4800</td>
<td>4800</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>
## नैदालिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>रासायनिक तत्व</th>
<th>न्यायिक अंग</th>
<th>उपचारक</th>
<th>संघायी अंग</th>
<th>सेविक</th>
<th>संसायी अंग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>रसायनोत्सर (मिऄ0)</td>
<td>1.1</td>
<td>1.4</td>
<td>1.5</td>
<td>1.0</td>
<td>1.2</td>
</tr>
<tr>
<td>रसायनोत्सर (मिग्रा0)</td>
<td>1.3</td>
<td>1.6</td>
<td>1.8</td>
<td>1.2</td>
<td>1.4</td>
</tr>
<tr>
<td>निरसिन (मिग्रा0)</td>
<td>15</td>
<td>16</td>
<td>17</td>
<td>13</td>
<td>14</td>
</tr>
<tr>
<td>निरसिन (सिग्रा0)</td>
<td>1.6</td>
<td>2.0</td>
<td>2.0</td>
<td>1.6</td>
<td>2.0</td>
</tr>
<tr>
<td>रीडिमिनिक अम्ल (मिग्रा0)</td>
<td>40</td>
<td>40</td>
<td>40</td>
<td>40</td>
<td>40</td>
</tr>
<tr>
<td>रीडिमिनिक अम्ल (सिग्रा0)</td>
<td>140</td>
<td>150</td>
<td>200</td>
<td>140</td>
<td>150</td>
</tr>
<tr>
<td>राममिशलम (सिग्रा0)</td>
<td>120</td>
<td>165</td>
<td>195</td>
<td>160</td>
<td>210</td>
</tr>
<tr>
<td>राममिशलम (सिग्रा0)</td>
<td>9</td>
<td>11</td>
<td>12</td>
<td>9</td>
<td>11</td>
</tr>
</tbody>
</table>

**ऊर्जा:** किशोरावस्था में शारीरिक लम्बाई, भार, क्रियाशीलता एवं आधारीय चयापचय दर में बढ़ती होने के कारण ऊर्जा की मांग बढ़ जाती है। किशोरों में यह मांग किशोरियों से अधिक होती है क्योंकि उनकी रची बाढ़ खेलती है, ज्यादा आदि में अधिक रहती है।

**प्रोटीन:** इस अवस्था में शारीरिक विकास की गति अल्पत सीध्र होने, मास्पेशियों के निर्माण, कोशिकाओं के क्षय तथा नई कोशिकाओं के निर्माण, हार्मोनों के निर्माण हें प्रोटीनयुक्त भोज्य पदार्थों का सेवन आवश्यक है। आहार में दालों, सोयाबीन, अण्डे, मांस, मछली, दूध एवं दूध उत्पाद आवश्यक रूप से सम्मिलित करने का आवश्यक है।

**वसा:** शारीरिक क्रियाशीलता अधिक होने के कारण इस अवस्था में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है जिस कारण आहार में वसा का होना आवश्यक है। परंतु इसके अधिक सेवन से मोटापा होने का भी खतरा होता है, साथ ही कई अपकारी रोगों जैसे हृदय रोग तथा मधुमेह के होने की सम्भावना भी बढ़ जाती है।

**लोह लवण:** यद्यपि किशोरों एवं किशोरियों दोनों को ही आहारीय लोह लवण की आवश्यकता होती है। परंतु किशोरिों में इस अवस्था में मास्टिक धर्म की शुरुआत होने के कारण शरीर से रक्त की हानि अधिक होती है जिस कारण उन्हें दृष्टांत पाठ संसायी रोग हो सकता है। इसलिए किशोरावस्था

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

MAHS-06
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

में आहार में लील लवण के प्रचुर स्रोत जैसे हरी पनीदार सब्जियाँ, अण्डा, गुड़ आदि होने चाहिए। भारत में किशोरियों में एनीमिया की समस्या आम है जो एक चितनीय विषय है।

केलिशियम: इस खनिज लवण की आवश्यकता हड़कड़ियों एवं दांतों के निर्माण एवं विकास हेतु आवश्यक है जो हमें आहारीय स्रोत जैसे दूध, दुध उत्पादों, हरी पनीदार सब्जियाँ आदि से मिलता है।

विटामिन: आँखे के उत्तम स्वास्थ्य हेतु आहार में विटामिन ए के स्रोत जैसे हरी सब्जियाँ, पीले फल, गाजर, अण्डा, दूध आदि सम्मिलित करने चाहिए। विटामिन राइबोडोफिलस तथा विटामिन की वैकल्पिक अनुशासित मात्रा उर्चु की आवश्यकता पर आधारित होती है। इसलिए उर्चु की आवश्यकता बढ़ने पर बी-विटामिनों की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। विटामिन सी शरीर की लत के उत्तम स्वास्थ्य, घावों के शीर्ष भरने तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता के विकास के लिए आवश्यक है।

इसलिए आहार में खट्टे फलों, ऑवला, अमरूद आदि का समावेश होना चाहिए।

इसके अतिरिक्त भोजन में आयोडीन भी पर्यष्ट मात्रा में होना चाहिए। आयोडीन वाटोरिन हमाम का अवयव है जो शरीर में आधारीय चयापचय दर को नियंत्रित करता है। साथ ही वह शारीरिक तथा मानसिक विकास हेतु भी अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए आहार में आयोडीनयुक्त नमक का प्रयोग करना चाहिए।

5.3.3 किशोराष्ट्र में आहार विशेषज्ञ

इस अवस्था में आहार बहुत विविधतापूर्ण होता है। घर के अतिरिक्त किशोर अपना अधिकांश समय स्कूल तथा दोस्तों के साथ बिताते हैं जो उनकी आहार सम्बंधी आदतों को प्रभावित करता है। किशोर अक्सर अपना निर्विवाद आहार छोड़कर ऐसे खाद्य पदार्थ खाना पसंद करते हैं जिनमें उर्चु की मात्रा अधिकतम पोषक तत्त्व कम होते हैं जैसे नूडल्स, मोमो, पिज्जा, कोल्ड डिंक्स, चॉकलेट आदि। ऐसी स्थिति में घर का आहार पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर तथा संतुलित होना चाहिए किशोरों के लिए आहार नियोजन करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

- आहार में प्रत्येक खाद्य वर्ग से खाद्य पदार्थ सम्मिलित करने चाहिए।
- ऊर्चु, प्रोटीन, लील लवण तथा केलिशियम सम्पन्न स्रोतों पर विशेष बल देना चाहिए।
- किशोरों को अपनी शारीरिक विकासी की सत्ता चिंता रहती है। विशेषकर किशोरियों दूलात तथा आकर्षक दिखने की चाह में आहार बहुत कम या नहीं लेती तथा वजन कम करने के लिए
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

नए और आसान उपाय ढूँढती हैं। ऐसे भोजन कि थोरी क्रियाओं तथा उपायों से किशोरों को बचना चाहिए तथा एक स्वस्थ जीवनशैली तथा संतुलित आहार लेना चाहिए।

- त्वरित वजन कम करने वाले तथा मांसपेशियों को उन्नत करने वाले आहारों से बचना चाहिए।
- वसा, शरकरा तथा परिपक्व कार्बोहाइड्रेट युक्त तैयार एवं संशोधित भोजन से बचना चाहिए क्योंकि ऐसे भोजन पदार्थ आवश्यक पोषकत्व प्रदान नहीं करते। संतुलित भोजन को अधिक महत्व देना चाहिए।
- किशोरों को लोकप्रिय तथा अधिक स्वीकार्य भोजन पर पर ही तैयार कर खाने के लिए त्रिशृंखला चाहिए।

5.3.4 किशोरावस्था में पोषण समंद्री समस्याएँ

- मोटापा: इस अवस्था में अधिक ऊजाएँ के भोजन लेने से मोटापे की समस्या हो सकती है। जिससे शरीर में वसा का शंकु बनने लगता है। फलतः किशोर अन्य चयनपथम वसा से प्रस्त हो सकता है। किशोरावस्था में मोटापे से जीवन के आगमी वषों में हड़प्पा रोगों में जमाता है।
- एनीमिया: किशोरावस्था में मासिक धर्म की शुरुआत होने के कारण शरीर से हर माह रक्त विसर्जित होता है जिससे शरीर की समस्या हो सकती है। साथ ही किशोरियों पतला दिखने की बात में उचित पौष्टिक भोजन प्रणाली हेतु आदेश दिया जाता है। जिससे शरीर में कई पोषक तत्वों की कमी हो जाती है।

किशोरों के लिए एक दिन की आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः काल</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह का नाशा</td>
<td>ब्रेड/ ऑमलेट</td>
<td>2 स्ताजित / एक</td>
</tr>
<tr>
<td>खाच</td>
<td>भरवाँ पराठा</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>लूंध</td>
<td>भीमे हुए बादाम, खजूर</td>
<td>4, 4</td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>फल (सेब/केला) अथवा फलों का रस</td>
<td>1 (मौसम अनुसार)</td>
</tr>
<tr>
<td>----------------</td>
<td>--------------------------------</td>
<td>-------------------------------------------------------------</td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर का खाना</td>
<td>चावल/रोटी मिश्रित दाल आलू पालक की सब्जी दahi अथवा रायता सलाद</td>
<td>1 टीएस/ 2 या 3 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>5 बजे शाम को</td>
<td>वेजीटेबल सेंडविच लस्सी</td>
<td>2 1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>7 बजे शाम को</td>
<td>टमाटर का सूप</td>
<td>1 बड़ी कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>9 बजे रात्रि में</td>
<td>रोटी सब्जी (मटर पनीर) दाल (अरहर/ मूंग) मखाना खीर सलाद</td>
<td>2 1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>10 बजे सोने से पहले</td>
<td>दूध (किसी स्वास्थ्यवर्धक पेय जैसे बोर्नवीटा आदि के साथ)</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>

**अभ्यास प्रश्न 1**

1. सही अथवा गलत बताइए।
   a. किशोरावस्था में वृद्धि एवं परिवर्तन बहुत धीमी गति से होते हैं।
   b. किशोरावस्था वृद्धि स्पुर्त (Growth Spurt) की आवश्यक है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

c. किशोरावस्था के मानसिक विकास का मुख्य लक्षण मानसिक स्वतंत्रता है।
d. बच्चों या वयस्कों की तुलना में किशोर भावनात्मक रूप से अधिक स्थिर होते हैं।
e. किशोरियों में किशोरावस्था में मानसिक धर्म की शुरुआत होने के कारण रक्ताल्पता/एनीमिया रोग हो सकता है।

5.4 प्रौढ़ावस्था

5.4.1 विशेषताएं एवं शारीरिक परिवर्तन

प्रौढ़ावस्था या वयस्कावस्था किशोरावस्था के बाद आने वाली जीवन अवस्था है जिसमें शारीरिक तथा मानसिक स्थिति में दर्शाव आ जाता है। वयस्क व्यक्ति व्यवसाय में लिंग होने तथा पारिवारिक, सामाजिक तथा अन्य दायित्वों के कारण दबाव की स्थिति का अनुभव करता है। इस अवस्था में शारीरिक आकार में पूर्ण वृद्धि हो चुकी होती है। अतः पोषक तत्वों की आवश्यकता केवल शारीरिक क्रियाओं को मुख्य रूप से चलाने के लिए होती है। आयु बढ़ने के साथ-साथ शरीर के उत्तरार्ध की नवीनीकरण की क्षमता उनके टूट-फूट की अपेक्षा कम होती है।

इस अवस्था को दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

1. प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था (20-25 वर्ष): इस अवस्था में उत्तरार्ध की टूट-फूट अधिक नहीं होती तथा शरीर में उनके क्षय की आपूर्ति की पर्याप्त क्षमता होती है।

2. वृद्ध प्रौढ़ावस्था (25-45 वर्ष): यह वयस्कावस्था का अंतिम चरण तथा वृद्धावस्था के शुरुआती चरण के निकट होता है। इसलिए इस चरण में शरीर के ऊतकों का क्षय अधिक होता है तथा इसकी आपूर्ति कम हो रही है।

वयस्कावस्था में शारीरिक वृद्धि पूर्ण हो जाने पर लम्बाई तथा वजन में कोई बदलाव नहीं होता हालांकि शारीरिक वजन व्यक्ति की खान-पान सम्बंधी आदतों तथा शारीरिक क्रियाशीलता पर निर्भर करता है। भारतीय विश्वस्ता अनुसंबंध परिषद द्वारा वयस्कों के लिए पोषक तत्वों की अनुसंधान मात्रा को शरीर क्रियाशीलता के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया गया है:

कम क्रियाशील: इस श्रेणी में अधिक मानसिक कार्य करने वाले वयस्क समिलित हैं जैसे ऑफिस में काम करने वाले व्यक्ति, शिक्षक, सेवानिवृत्त व्यक्ति, गृहणी आदि।

मध्यम क्रियाशील: इस श्रेणी में मध्यम शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्ति जैसे किसान, बढ़ई, कुली, आदिग्रोगिक श्रमिक, पर पर काम करने वाले नौकर आदि समिलित हैं।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अधिक क्रियाशील: इस श्रेणी में अतिरिक्त शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्ति सम्मिलित होते हैं जैसे रिक्शा चालक, पत्थर तोड़ने वाले व्यक्ति, खदानों के श्रमिक, मजदूर आदि।

5.4.2 प्रोड्ड़वस्था में पोषक तत्वों की मांग

जैसा कि उपरोक्त बताया गया है कि वयस्क के कार्य का स्वरूप उसकी पोषक तत्वों की मांग को प्रभावित करता है। आईसीएमआर द्वारा दी गई पोषक तत्वों की देरित्री अनुसंधित भारतीय संदर्भ पुष्कर तथा संदर्भ महिला के आधार पर निर्धारित की जाती है। आईए जाने कि भारतीय संदर्भ पुष्कर तथा संदर्भ खी की परीक्षण क्या है?

भारतीय संदर्भ पुष्कर 20-39 आयु वर्ग का होता है जिसका शारीरिक भार 60 किलो होता है। वह पूर्ण रूप से स्वस्थ, रोग-स्वस्थ तथा शारीरिक कार्यों का करने में सक्षम होता है। वह 8 घण्टे का मध्यम श्रम, 8 घण्टे की नींद, 4-6 घण्टे बेठक तथा 2 घण्टे चलने, सक्रिय मनोरंजन तथा गृह कार्य में विवेकता है।

भारतीय संदर्भ खी 20-39 आयु वर्ग की होती है जिसका शारीरिक भार 55 किलो होता है। वह पूर्ण रूप से स्वस्थ, रोग-स्वस्थ तथा शारीरिक कार्यों का करने में सक्षम होती है। वह 8 घण्टे का मध्यम श्रम अवश्य घर के सामान्य कार्यों में, 8 घण्टे की नींद, 4-6 घण्टे बेठक तथा 2 घण्टे चलने, सक्रिय मनोरंजन तथा गृह कार्य में विवेकता है।

वयस्कावस्था में पोषक तत्वों की देरित्री प्रस्तावित मात्रा आईसीएमआर द्वारा निर्धारित की गई है जो कि तालिका 5.2 में दर्शाई गई है।

तालिका 5.2: वयस्कावस्था में अनुसंधानित पोषक तत्वों की आवश्यकता
(भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, 2010)

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>वयस्क पुष्कर</th>
<th>वयस्क महिला</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>कम चिकित्सील</td>
<td>मध्यम चिकित्सील</td>
<td>अधिक चिकित्सील</td>
</tr>
<tr>
<td>शारीरिक भार (किलोग्राम0)</td>
<td>60</td>
<td>60</td>
</tr>
<tr>
<td>ऊर्जा (किलोकैलोरी)</td>
<td>2320</td>
<td>2730</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

102
<table>
<thead>
<tr>
<th>नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण</th>
<th>MAHS-06</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रोटीन (ग्राम)</td>
<td>60</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा (ग्राम)</td>
<td>25</td>
</tr>
<tr>
<td>कैल्शियम (मिलीग्राम)</td>
<td>600</td>
</tr>
<tr>
<td>लीह लवण (मिलीग्राम)</td>
<td>17</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन ए (रेटीन)</td>
<td>600</td>
</tr>
<tr>
<td>बीटा केरोटीन</td>
<td>25</td>
</tr>
<tr>
<td>थायमिन (मिलीग्राम)</td>
<td>1.2</td>
</tr>
<tr>
<td>राइबोफ्लाविन (मिलीग्राम)</td>
<td>1.4</td>
</tr>
<tr>
<td>नियासिन (मिलीग्राम)</td>
<td>16</td>
</tr>
<tr>
<td>पाइरिडाइसिन (मिलीग्राम)</td>
<td>2.0</td>
</tr>
<tr>
<td>एस्कोर्बिक अम्ल (मिलीग्राम)</td>
<td>40</td>
</tr>
<tr>
<td>फॉलिक अम्ल (माइक्रोग्राम)</td>
<td>200</td>
</tr>
<tr>
<td>मैनीशियम (मिलीग्राम)</td>
<td>340</td>
</tr>
<tr>
<td>जिंक (मिलीग्राम)</td>
<td>12</td>
</tr>
</tbody>
</table>
5.4.3 प्रशास्ता में आहार नियोजन

प्रशास्ता में आहार नियोजन से पूर्व निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

- इस अवस्था में आहार नियोजन आपु, लिंग तथा संक्रियता के आधार पर किया जाता है। इसलिए यह आवश्यक कि आहार नियोजन से पूर्व इन बातों को ध्यान में रखा जाए।
- आहार नियोजन प्रशास्ता के चरण पर आधारित होना चाहिए क्योंकि वृद्ध प्रशास्ता में शरीर के ऊंचाई का क्षय अधिक होने के कारण प्रोटीन की आवश्यकता अधिक होती है।
- कम तथा मध्यम क्रियाशील वयस्क को आहार में वसा की मात्रा सीमित रखनी चाहिए। संतुर वसा के स्थान पर सम्भव हो तो असंतुर वसा का सेवन करना चाहिए। अधिक मात्रा में वसा वजन की वजह से भूख नहीं होती है।
- आहार में फलों तथा सब्जियों का पर्याप्त समावेश होना चाहिए।
- आहारीय रेशा व्यक्ति के पाचन स्वास्थ्य हेतु लाभकारी है। अतः, आहार में रेशे के उचित खोट जैसे साबुत अनाज, साबुत दाल और हरी पत्तेदार सब्जियाँ, फल इत्यादि प्राप्त मात्रा में लेने चाहिए।
- पानी का समुचित सेवन करना चाहिए।

एक मध्यम क्रियाशील वयस्क पुरुष के लिए एक दिन की आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रात: काल 6 बजे</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह का नाशा</td>
<td>मिश्रित अनाज की रोटी</td>
<td>2 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>9:30 बजे</td>
<td>हरी बन्जी</td>
<td>1 कटोरी/1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>मौसमी फल अथवा</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>फलों का रस</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर का खाना</td>
<td>चावल/मक्का रोटी</td>
<td>1 कटोरी/2 या 3</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>सोयाबीन दाल</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>6 बजे शाम को</th>
<th>चाय</th>
<th>1 कप</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td></td>
<td>बिस्कुट/रस</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>9:30 बजे रात्रि में</th>
<th>गोटी</th>
<th>2</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सब्जी (लोही आलू)</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>दाल (अरहर/ मूंग)</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>फ्लूट कस्टड</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>सलाद</td>
<td>1 प्लेट</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

| 10 बजे सोने से पहले | दूध | 1 गिलास |

5.4.4 प्रौढ़वस्था में पोषण सम्बंधी समस्याएं

इस अवस्था में कम क्रियाशीलता तथा अधिक ऊर्जा अभावण के कारण मोटापा एक गम्भीर समस्या बन सकती है जो कई अपथ्यी रोगों जैसे मधुमेह, हदय रोगों का कारण हो सकता है। प्रौढ़वस्था के दूसरे चरण में शरीर के ऊतकों का अधिक क्षय होने लगता है तथा शरीर के विभिन्न टचों की क्रियाशीलता में कमी आ जाती है। इस आयु में शरीर के हड्डियों की समस्या में कमी आने लगती है जिस कारण ओस्टीोपोरोसिस और गठिया रोगों के होने की सम्भावना होती है। इस स्थिति में आहार में कैल्शियम एवं फॉस्फोरस की मात्रा में वृद्धि करनी चाहिए। व्यक्ति का पाचन तनत भी धीरे-धीरे प्रभावित होने लगता है। इसलिए आहार संतुलित तथा रेशे से युक्त होना चाहिए। इस अवस्था में व्यक्तिके आय सूजन में अत्यधिक व्यस्त होने के कारण शारीरिक क्रियाशीलता कम हो जाती है विशेषकर कम क्रियाशील व्यक्तियों में। ऐसी स्थिति में नियमित रूप से व्यायाम किया जाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारान्तक पोषण

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. .................................................. में उतकों की दूसरे भाग में उनके शरीर भरिए।
   b. रिक्त चालक ................................................. व्यक्तियों की श्रेणी में आते हैं।
   c. .................................................. व्यक्ति के पाचन स्वस्थ्य हेतु लाभकारी है।
   d. प्रौढ़वस्था में शरीर की हड्डियों की सघनता में कमी आने लगती है जिस कारण रोगों के होने की संभावना होती है।

5.5 सारांश

किशोरवस्था परिवर्तन की आवश्यकता होती है जिसमें व्यक्ति के शरीर में कई शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक परिवर्तन होते हैं। इस अवस्था में शारीरिक वृद्धि की गति आत्मवादी तीव्र होती है जिसके अनुसार अस्थियों का बढ़ना, मांसपेशियों में वृद्धि, लड़कों में खेलों का चौड़ा होना, शरीर में बालों का उगना, आयु में भारीन, लड़कियों में स्तनों का विकास, नित्यानंद का बढ़ना, मानसिक धर्म की शुरुआत आदि परिवर्तन दिखाई देते हैं। इस आयु में तेजी से हो रहे शारीरिक परिवर्तनों को ध्यान में रखने पर किशोरों के विकास पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि उनकी समस्त शरीर का विकास इसी अवस्था में होता है। किशोरवस्था में शारीरिक विकास के साथ मानसिक विकास भी अपने ही प्रमाण पर होता है। किशोर इस अवस्था में अपने प्रतिशत स्वयं लेना पसंद करते हैं तथा किसी का दखल नहीं पसंद करते। उन पर अपने साथीयों का अत्यधिक प्रभाव होता है। किशोर वास्तविक जगत में रहते हुए भी कल्पना के संसार में विचारण करता है। कल्पना के बाहुल्य के कारण उसमें दिन में ही स्वयं देखने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। किशोरवस्था में तीव्र परिवर्तनों तथा संगत के प्रभाव से गलत आहार पद्धतियां विकसित हो सकती हैं। यह के अतिरिक्त किशोर अपना अधिक भीगी समय स्वास्थ्य तथा दौसाओं के साथ बिताते हैं जो उनकी आहार समस्याओं को प्रभावित करता है। किशोर अस्तित्व अपना नियमित आहार छोड़कर ऐसे खाई पदार्थों खाना पसंद करते हैं जिनमें प्रीजा की मात्रा अधिक तथा पोषक तत्त्व कम होते हैं। ऐसे स्थिति में घर का आहार पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर तथा संस्कृति होना चाहिए। किशोरवस्था में मोटापा तथा एनर्जी मजबूती जैसी पोषण समस्याएं समस्ताएं देखी जाती हैं।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रोडायब्ला वीडियोव्यासा के पश्चात शुरू होने वाली अवस्था है। यह अवस्था शारीरिक वृद्धि की दृष्टि से जीवन की स्थाई अवस्था है जिसमें शरीर की पूर्ण वृद्धि हो गई होती है। इसलिए इस अवस्था में पोषक तत्वों की आवश्यकता शारीरिक वृद्धि के लिए न होकर शरीर की गतिविधियों को सुचारू रूप से चलाने के लिए होती है। यह अवस्था शरीर की विभाजित क्रियाएं जा सकता है; प्रारंभिक प्रोडायब्ला वीडियोव्यासा तथा वृद्ध प्रोडायब्ला वीडियोव्यासा। इस अवस्था में आहार नियोजन आयु, लिंग तथा संक्रियता के आधार पर किया जाता है। कम तथा मध्यम क्रियाशील व्यस्क को आहार में वसा की मात्रा सीमित रखनी चाहिए। आहार में फलों तथा सब्जियों का पयाल समावेश होना चाहिए तथा पानी का समुचित सेवन करना चाहिए।

5.6 पारिखारिक शब्दावली

- बुद्धि स्कुरण (Growth Spurt): कम समय में तीन एवं अचानक बुद्धि होना।
- रक्ताल्पता/एनामिया (Anaemia): रक्त में हीमोग्लोबिन का स्तर कम होने की स्थिति।
- ओस्टीपोरोसिस (Osteoporosis): एक स्थिति जिसमें हड्डियां कमजोर और भंगुर हो जाती है।
- गठबंधन (Arthritis): हड्डियों के जोड़ों की सूजन जिसमें दर्द और कठोरता हो सकती है। ये स्थिति आयु के साथ सम्बन्धित हो सकती है।

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही अथवा गलत बताइए।
   a. गलत
   b. सही
   c. सही
   d. गलत
   e. सही

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

a. प्रारंभिक प्रौढ़वस्था
b. अधिक क्रियाशील
c. आहारीय रेशा
d. ऑस्ट्रियोपोरोसिस और गठिया

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6. वृंदा सिंह, आहार एवं पोषण विज्ञान (2016), चौदहवाँ संस्करण, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
7. डॉ. रीना खनूजा, आहार एवं पोषण विज्ञान (2016/17), अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

5.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. किशोरवस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों की व्याख्या कीजिए।
2. किशोरवस्था में पोषक तत्वों की मांगों के बारे में चर्चा कीजिए।
3. किशोरों हेतु आहार नियोजन से पूर्व किन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है?
4. प्रौढ़वस्था में पोषक तत्वों की मांगों का उल्लेख कीजिए।


**इकाई 6: वृद्धावस्था में पोषण**

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तन

6.4 वृद्धावस्था में पोषक तत्त्वों की मांग

6.5 वृद्ध व्यक्तियों के आहार में संशोधन

6.6 वृद्धावस्था के दौरान पोषण संबंधी समस्याएं

6.7 सारांश

6.8 पारिभाषिक शब्दावली

6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.10 सन्दर्भ प्रत्येक सूची

6.11 निर्देशात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत अध्याय में आप वृद्धावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तनों एवं पोषक तत्त्वों की मांग के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। वृद्धावस्था जीवन का सबसे आखिरी पड़ाव है जो प्रोड्डावस्था के बाद आता है। भारत में वृद्धावस्था का प्रारम्भ 60 वर्ष के पश्चात माना जाता है। इस अवस्था तक आगे-आगे मानव शरीर चकने लगता है। शारीरिक क्रियाएं आयु के साथ शरीर को शिक्षित करने लगती हैं जो दूरीयों के रूप में स्पष्ट होने लगती हैं। अधेढ़ अवस्था आने तक व्यक्ति अनेक बीमारियों से प्रभावित हो जाता है। वृद्धावस्था में स्वास्थ्य बहुत हद तक प्रोड्डावस्था के स्वास्थ्य, भोजन, व्यायाम, क्रियाशीलता आदि पर निर्भर करता है। यदि व्यक्ति प्रोड्डावस्था में चुस्त, फुर्तीला एवं स्वस्थ रहता है तो निश्चित ही वह व्यक्ति वृद्धावस्था में भी स्वस्थ रहेगा। अर्थात् एक स्वस्थ प्रोड्ड ही एक स्वस्थ वृद्ध बनता है। वृद्धावस्था में स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले केवल शारीरिक कारक ही नहीं बल्कि आधिक, मानसिक, सामाजिक, संबंधात्मक आदि कारकों के द्वारा भी वृद्ध का स्वास्थ्य प्रभावित होता है। इस अध्याय में हम वृद्धावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तन के बारे में जानने और ये जानने कि कैसे वो व्यक्ति के पोषण स्तर को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त वृद्धावस्था के दौरान विभिन्न पोषक तत्त्वों की मांग और आहार में जड़ी संसोधनों के बारे में भी जानकारी प्राप्त करेंगे।
6.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

- वृद्धावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तनों के बारे में जानकारी प्राप्त करना;
- वृद्धावस्था में पोषक तत्त्वों की मांग के बारे में जानना;
- वृद्ध व्यक्तियों के आहार में संसोधनों के तरीके जानना; तथा
- वृद्धावस्था के दौरान होने वाली पोषण संबंधी समस्याओं की जानकारी प्राप्त करना।

6.3 वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तन

वृद्धावस्था में शरीर में निम्न परिवर्तन देखे जाते हैं:

1. आधारीय चयापचय दर में कमी होना: वृद्धावस्था में शरीर में निरीक्षणात्मक कार्य नहीं होता है और न ही नये कोषों एवं तन्तुओं का निर्माण होता है। साथ ही वृद्धावस्था में शारीरिक क्रियाशीलता में भी कमी हो जाती है। इन सभी कारणों से आधारीय चयापचय दर में कमी हो जाती है। परिणामवश वृद्धावस्था में ऊर्जा की मांग अन्य अवस्थाओं की अपेक्षा कम होती है।

2. अन्त: सावधानी से कम मात्रा में हामोन का स्वाभाविक: वृद्धावस्था में अन्त: सावधानी से निकलने वाले हामोन की क्रियाशीलता में कमी होने के कारण शरीर में हामोन असंतुलन हो जाता है। हामोन में 45-50 वर्ष की आयु में मासिक घर्षण रुक जाता है तथा रजोविन्धान हो जाती है। वृद्धावस्था में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते हैं जैसे चिल्म में मनुष्य, शरीर की शिथिलता, निद्रा न आना, छिय में तथा शरीर के अन्य भाग में दर रहना, बेचैनी होना, मानसिक तनाव, पाचन शक्ति कमजोर होना, स्वभाव में चिकित्सक आ जाना आदि। थाइरोइड तथा पराथाइरोइड प्रभावों से निकलने वाले हामोन के असंतुलन से कैलिशम का चयापचय थीक से नहीं हो पाता जिसके कारण बुझों में अस्थिर विकृति रोग (ऑस्ट्रोपोरोसिस) हो जाता है जिसमें हड्डियां कमजोर और नाजुक हो जाती हैं। शरीर लगातार हड्डी के ऊतकों का अवशोषण कर उनको बदलता रहता है। किन्तु ऑस्ट्रोपोरोसिस में नई हड्डी उत्तरी तेजी से नहीं बन पाती जितनी तेजी से पुरानी नष्ट हो जाती है। थाइरोइड प्रभाव की क्रियाशीलता में कमी के कारण भी वृद्धावस्था में कैलोरी की मांग में कमी हो जाती है।
3. नाड़ी संस्थान में परिवर्तन: आयु बढ़ने के साथ मस्तिष्क एवं नाड़ियों दर्द दर्द के प्रमुख कारणों से गुजरता है। तंत्रिका कोशिकाएं कमजोर हो जाती हैं जो इंद्रियों को प्रभावित करती हैं जिसके कारण लाठी कोशमा, श्रवण कष्ट का और सूखने की कष्ट में कमी आ जाती है। सोचने और सीखने की कष्ट में काफी कमी आ जाती है जिसके कारण बुद्ध नई चीजों को सीखने से करताएं हैं।

4. स्वभाव में परिवर्तन: वृों शयन में स्वभाव में भी परिवर्तन देखने की मिलते हैं। अधिकांश बुद्ध चिविचिवि, क्रोधी, एवं गुप्तता हो जाते हैं। वे बात बात पर रुख जाते हैं तथा मनाने की अपेक्षा रखते हैं। उनका व्यवहार जिठी बालकों की भांति हो जाता है। इसका प्रमुख कारण तंत्रिका तंत्र में अन्यत्रमा, हार्मोन असतुलन, आर्थिक विपत्ता, संबंधाकाम तनाव, सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आदि हो सकते हैं। साथ ही उनके स्वास्थ्य और सूखने की शक्ति कम हो जाती है जिसकी वजह से उन्हें भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है। उनकी चाल में अनातर आ जाता है और वो धीरे-धीरे चलने लगते हैं। पीट वकर हो जाती है और वे धोड़ा आगे की ओर झुककर चलने लगते हैं।

5. कंकाल तंत्र तथा दांतों में परिवर्तन: बुद्धिशास्त्र में अश्लील विकृति रोग (ऑस्टेटोपोपोसिस) हो जाता है। इस रोग में अस्थिों से कैपिलरी एवं फॉस्फोरस लवण निकलने लगते हैं। परिणामतः अस्थिों कमजोर और भंगुर हो जाती हैं और जरा सा गिरने अथवा चोट लगने से टूट जाती हैं। बुद्धि में हटी हुई हड्डियों की असामान्यता से जुड़ी भी नहीं हैं। इन साथ कारणों से बुद्धि का दर्द तथा परेशानी होती है। इसलिए बुद्ध लोग मुलायम या कुचला खाना व तरल भोजन ज्यादा पसंद करते हैं।
6. पाचन अंगों में परिवर्तन: वृद्धावस्था में पाचन तंत्र में काफी बदलाव आते हैं जैसे उदर पहले के
मुकाबले आकार में छोटा हो जाता है। भोजन को ड्रूडिग्म में पहुँचने में अधिक समय लगता है
जिससे पेट में एक भारीपन का अहसास और असुविधा सी महसूस होती है। आमाशय से
आमाशयिक रस का साधन कम होने लगता है। जिसके कारण भोजन का पाचन ठीक प्रकार से नहीं
हो पाता है। पाचन रसों के सही से कम न कर पाने के कारण कैलिशम तथा लोह लवण का
अवशोषण भी ऊचत प्रकार से नहीं हो पाता है। आँतों की क्रमांकुं चन गति में विस्थिताद आ जाती
है जिसके कारण रज की शिकायत रहने लगती है। छोटी आँतों की दीवारें क्षयग्रस्त और कमजोर
हो जाती हैं जिसके कारण भोजन का अवशोषण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है। अतः शरीर में
आवश्यक पौष्टिक तत्त्व नहीं पहुँच पाते हैं तथा कई पौष्टिक तत्त्वों की गरीबी में कमी हो जाती है।

7. हड़प्पा एवं रक्त परिसंचरण तंत्र में परिवर्तन: वृद्धावस्था में हड़प्पा तथा रक्त परिसंचरण तंत्र में भी
परिवर्तन हो जाता है। बढ़ती आयु के साथ हड़प्पा और रक्त तथा कोशिकाओं से जुड़े कुछ भाग जैसे
शराएं और धमनी में रेसीपोर उत्कर्ष तथा वसा जमाने हो जाते हैं जिसकी वजह से धमनियाँ कठोर हो
जाती हैं। जब इसके माध्यम से अधिक रक्त पंप किया जाता है तो वे इसके अनुरूप फैल नहीं पाते।
परिणामस्वरूप, युवावस्था की तुलना में डिल बहुत धीमी गति से रक्त भर पाता है। वृद्धावस्था में
दूसरे अंगों की तरह हड़प्पा की कुछ कोशिकाएं भी नष्ट होने लगती हैं जिसकी वजह से हड़प्पा इस
समय युवावस्था की भांति रक्त पंप नहीं कर पाता। रक्त निलकाओं की दीवारों में वसा जमाने के
कारण इसका त्यौहार छोटा हो जाता है जिसकी वजह से ऐथेरोस्केरलेरोसिस एवं हड़प्पा से संबंधित
अन्य रोग भी व्यक्ति को पहर लेते हैं।

8. त्वचा में परिवर्तन: वृद्धावस्था में त्वचा, बालों एवं नाखूनों में भी परिवर्तन हो जाता है। त्वचा
रूखी सूखी, बेजान, कोटीपीन पंप दुर्गुंडार हो जाती है क्योंकि कोशिकाओं के जीवनस्वरूप के संगठन
में अन्तर आ जाता है। कोशिकाओं का विनाश अधिक होने लगता है। त्वचा मासमेंटिया और
अस्थियों से अलग होकर झुरियों के रूप में लटकी हुई नजर आने लगती है। त्वचा का लंधीलापन
मसाल बन जाता है। वृद्धावस्था में युवावस्था में विभिन्न तथा कम तेल का उपयोग करती है जो
त्वचा को नम रखने के लिए कठिन बना सकता है जिसके परिणामस्वरूप त्वचा सूखा पड़ते हैं। नाखून
से आँतों की रूखी सूखी, बेजान, कंपन, गर्मी और ठंड का एहसास करने की क्षमता कम हो जाती है। बाल झुकने
की क्षमता हो जाते हैं। नाखून कड़े एवं चमकहीन हो जाते हैं।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

9. उत्सर्जन संस्थान में परिवर्तन: बृद्धवस्था में उत्सर्जन संस्थान में भी परिवर्तन हो जाता है। गुरू भूत्र प्रणाली का हिस्सा है जिसमें मूर्तवाहिनी, मूर्तशाय और मूर्तमार्ग भी शामिल हैं। बृद्धवस्था में गुरू में उत्तरकी की मात्रा में कमी आ जाती है। नेफ्रोन की संख्या घट जाती है जो रक्त से अपशिष्ट पदार्थ को छानने का कार्य करते हैं और गुरू की आपूर्ति करने वाली रक्त वाहिकाएं कठोर हो जाती हैं जिसकी बजह से गुरू, धीरे-धीरे रक्त को छानते हैं। मूर्तशाय की दीवार में बदलाव आते हैं जैसे लोपदार उत्तक कठोर हो जाते हैं और मूर्तशाय कम खंचाव बाहर हो जाता है जिसकी बजह से मूर्तशाय पहले की तरह अधिक मूत्र संचय नहीं रख सकता। मूर्तशाय की मांसपेशियों कमजोर हो जाती हैं। इस बजह से बुढ व्यक्तियों के रिसाव या मूत्र असंयं (मूत्र को रोकने में सक्षम नहीं होना) या मूत्र प्रतिघात (मूर्तशाय को पूरी तरह से खाली करने में सक्षम नहीं होना) जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

10. सजर्वत्र तनुओं की संख्या में कमी: बृद्धवस्था में सजर्वत्र कोशियों, तनुओं एवं उत्तरकी की संख्या में काफी कमी हो जाती है। विशेषकर हहत, मस्तिष्क, गुरू तथा अस्थियों के कोशियों की काफी कमी हो जाती है और इनका पुन: निर्माण भी नहीं होता।

11. रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी: बृद्धवस्था में बीटा लिम्फोसाइट्स की संख्या में कमी होने के कारण, रोगों को लड़ने का शक्ति का हास हो जाता है। इस कारण बुढ व्यक्ति सर्दी, जुकाम तथा अन्य संक्रामक बीमारियों से जल्दी प्रस्त हो जाते हैं। प्रतिरक्षा प्रणाली की कोशिका दोषों का पता लगाने और सही करने की क्षमता भी कम हो जाती है। इससे कैंसर का खतरा भी बढ़ जाता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।

a. बृद्धवस्था में ऊजा की मांग अन्य अवस्थाओं की अपेक्षा अधिक होती है।
b. बृद्धवस्था में ऑस्ट्रोपॉरोसिस रोगों से बचाव हेतु कैल्सियम लवण की मांग बढ़ जाती है।
c. मूर्तशाय को पूरी तरह से खाली करने में सक्षम नहीं होने की स्थिति को ‘मूत्रअसंयं’ कहा जाता है।
d. बृद्धवस्था में रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी होने का कारण बीटा लिम्फोसाइट्स की संख्या में कमी है।
6.4 वृद्धावस्था में पोषक तत्वों की मांग

वृद्धावस्था में शारीरिक, मानसिक तथा हार्मोन सम्बन्धी कई परिवर्तन होते हैं। वृद्धावस्था में शारीरिक क्रियाशीलता के कम होने के कारण कैलोरी की मांग 20 से 30 प्रतिशत तक कम हो जाती है। परन्तु प्रोटीन, लौह लवण, कैल्शियम एवं अन्य विटामिनों की मांग बढ़ जाती है। आई0सी0एम0आर0 द्वारा पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा निर्धारित करने के लिए वृद्धावस्था को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है जो तालिका 6.1 में दिखाया गया है।

तालिका 6.1: वृद्धों के लिए पोषक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा (आई0सी0एम0आर, 2000)

<table>
<thead>
<tr>
<th>पोषक तत्व</th>
<th>पुरुष</th>
<th>महिलाएं</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td></td>
<td>60-69 वर्ष</td>
<td>70 से अधिक वर्ष</td>
</tr>
<tr>
<td>कैलोरी (किलो कैलोरी)</td>
<td>1940</td>
<td>1697</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रोटीन (ग्राम)</td>
<td>60</td>
<td>60</td>
</tr>
<tr>
<td>कैल्शियम (मिलीग्राम)</td>
<td>400</td>
<td>400</td>
</tr>
<tr>
<td>लौह लवण (मिलीग्राम)</td>
<td>28</td>
<td>28</td>
</tr>
<tr>
<td>विटामिन ए (माइक्रोग्राम)</td>
<td>600</td>
<td>600</td>
</tr>
<tr>
<td>थायमिन (मिलीग्राम)</td>
<td>0.9</td>
<td>0.8</td>
</tr>
<tr>
<td>राइबोफ्लाविन (मिलीग्राम)</td>
<td>1.1</td>
<td>0.9</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

114
केलेट्री: वृद्धावस्था में शरीर के कोषों, तन्तुओं एवं ऊतकों की क्षति अधिक होती है तथा निर्माण कार्य नहीं के बराबर होता है। आधारी चयापचय व शारीरिक क्रियाशीलता में भी काफी कमी हो जाती है। इसलिए कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अतः वृद्धावस्था में साधारण परिश्रम करने वाले ग्रीढ़ व्यक्तियों की केलेट्री मांग की तुलना में 20 से 30 प्रतिशत कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है। आहार में केलेट्री की मात्रा बढ़ने से वजन बढ़ता है जो इस आयु के व्यक्ति के लिए बहुत नुकसानदायक होता है क्योंकि मोटापा स्वयं में एक बीमारी होने के साथ साथ कई अन्य बीमारियों को भी जन्म देता है।

प्रोटीन: वृद्धावस्था में शरीर के तन्तुओं में टूट फूट की क्रिया अधिक होती है। अतः तन्तुओं की टूट फूट की मरम्मत हेतु आहार में प्रोटीन का होना अत्यन्त आवश्यक है। इस आयु में पाचन तन्त्र में विकार उत्पन्न हो जाते हैं और मांस जैसे भोजन को पचाने में काफी मुश्किल होती है। इसलिए वृद्ध व्यक्तियों के लिए प्रोटीन यदि प्राणिज स्रोत जैसे दाल, सोयाबीन आदि से लिया जाए तो बेहतर होता है।

वसा: वृद्धावस्था में वसा का योग कम किया जाना चाहिए क्योंकि वसा के अधिक सेवन से मोटापा बढ़ता है। मोटापे से कई बीमारियों जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप आदि उत्पन्न होते हैं। अधिक वसा के सेवन से अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है जो शरीर में वस्त्रीय ऊतकों के रूप में जमा होकर वजन
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

बढ़ाती है। वृङ्गवलस्था में पचांत तंत्र कमजोर होने की वजह से बसायुक्त भोजन दे से पचता है जिससे बदहजमी, गैस, उल्टी, खड़ी डकार्ट आदि रोगाश्रयों का सामना करना पड़ता है।

कैलिशयम: वृङ्गवलस्था में आमाशय से जठर रस का सायन कम होता है जिसके कारण लीह लवण एवं कैलिशयम का अवशोषण कम हो पाता है तथा ये पोषक तत्त्व बिना अवशोषित हुए ही सहीर से निष्काशित हो जाते हैं। वृङ्गवलस्था में अस्थियाँ भी कमजोर एवं भूरभूरी हो जाती हैं जिससे अस्थिविकृति रोग हो जाता है। अत: वृङ्ग व्यक्तियों के आहार में पर्याप्त मात्रा में कैलिशयम अत्यन्त आवश्यक है। दूध, दही, छाछ, पनीर, हरी पत्ताएं कैलिशयम के अच्छे स्रोत हैं इसलिए इन वृङ्ग व्यक्तियों के आहार में इन्हें अवश्य समीक्षित किया जाना चाहिए।

लीह लवण: वृङ्गवलस्था में अभाव का अवशोषण प्रभावित होने की वजह से व्यक्ति में लीह तत्त्व की कमी हो जाती है जिससे रक्त अत्यन्त परेशान हो जाता है। अत: आहार में लीह लवण अवस्था को अवश्य ही समीक्षित किया जाना चाहिए।

विटामिन ए: वृङ्गवलस्था में आँखों की रोशनी कम हो जाती है जिसके कारण व्यक्ति में लीह आँख और आँख वाले अंश के लिए आहार में विटामिन ए लेने बहुत आवश्यक है। विटामिन ए की पर्याप्त मात्रा लेने के लिए आहार में पत्तेदार सज्जियाँ, पीले फल, दूध, अंडा, मक्खन आदि शामिल किया जाना चाहिए।

विटामिन बी समूह: वृङ्गवलस्था में इन समस्याओं की कमी हो जाती है। इस कारण वृङ्ग व्यक्तियों की भ्रांत क्षमता, दूर्घटना, अस्थियाँ तथा स्वास्थ्य क्षमता में अभाव कर जाती है और साथ ही भूलने की ओसियारिया भी हो जाती है। वृङ्गवलस्था में इन समस्याओं से बचने के लिए आहार में पर्याप्त मात्रा में विटामिन बी समूह लेना चाहिए। तात्कालिक 6.1 में देखा जा सकता है कि पाइरियडिस्किन, फोलिक अम्ल तथा विटामिन बी12 की दैनिक मांग वृङ्ग पुरुषों एवं महिलाओं के दोनों उपाय के लिए समान हैं जबकि नान्यसिन की दैनिक मांग पर आलू का प्रभाव नहीं है किंतु पुरुषों और महिलाओं में इसकी आवश्यकता में धोखाड़ा अंतर है। थायमिन और राइबोफलोविन की दैनिक आवश्यकता वृङ्ग पुरुषों एवं महिलाओं के लिए भिन्न है और 70 वर्ष के पश्चात इनकी दैनिक मांग भी पुरुषों एवं महिलाओं में कम होती है।

विटामिन सी: मसूढ़ों एवं दींगों के स्वास्थ्य, त्वचा के स्वास्थ्य, रोग रोधक क्षमता में वृङ्ग के लिए आहार में विटामिन सी का होना अति आवश्यक है। विटामिन सी के अभाव में वृङ्गों की रोगरोधक क्षमता में कमी आ जाती है जिसकी वजह से उन्हें सदी, जुकाम, बुखार और संक्रमण से
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

होने वाली बीमारियाँ जल्दी घेर लेती हैं। इस कारण पोषक तत्वों का अवशोषण ठीक से नहीं हो पाता और व्यक्ति का पोषण स्तर और अधिक गिर जाता है। इसलिए इन बीमारियों से बचाव के लिए, आहार में विटामिन सी का पर्याप्त मात्रा में होना अति आवश्यक है। इसकी पूर्ति के लिए आहार में नौसू, संतरा, अमाजी, आंवला आदि फलों का समावेश करना चाहिए।

विटामिन डी: कैलिशियम एवं फॉस्फरस के अवशोषण हेतु आहार में पर्याप्त मात्रा में विटामिन डी होना चाहिए। सूर्य की प्राय: कालीन किरणें विटामिन डी का अच्छा स्रोत हैं किंतु यदि वृद्ध व्यक्ति चलने में असमर्थ है तो आहार के माध्यम से पर्याप्त विटामिन डी दिया जाना चाहिए।

जल: वृद्धावस्था में जल भी अत्यन्त आवश्यक है। शरीर की विभिन्न क्रियाओं के समुचित सम्पादन के लिए जल की जरूरत होती है। अतः जल पर्याप्त मात्रा में लेना चाहिए। जल की पूर्ति हेतु आहार में दूध, फलों का रस, सूपों का सूप, शिकंजी आदि का समावेश करना चाहिए।

आहारीय रेशा: वृद्धावस्था में आईटी की पेशियाँ कमजोर होने की वजह से प्रायः कन्ज की शिकार होती है। कन्ज की एवं स्थिति से बचने के लिए वृद्ध व्यक्ति में भी कन्ज का अवशोषण घटने के कारण एवं संबंधित रोग आदि से बचने के लिए आहार में आईटी का समावेश करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 2

1. दिन के स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. वृद्धावस्था में आमाशय से जटर रस का स्रोत घटने की वजह से स्थानों में अवशोषण कम हो जाता है।
   b. वृद्ध व्यक्तियों में प्रतिदिन माइक्रो ग्राम विटामिन ऐ की आवश्यकता होती है।
   c. वृद्धावस्था में अनुपस्थित व्यक्तियों के लिए प्रतिदिन मिश्रण विटामिन सी का सेवन करना चाहिए।
6.5 वृद्ध व्यक्तियों के आहार में संशोधन

वृद्धव्यक्ति में शारीरिक व मानसिक विकास थम जाता है एवं शारीरिक क्रियाएं धीमी पड़ जाती हैं। बुढ़ापे में कम मात्रा में किन्तु पीठकता से परिपूर्ण भोजन उनकी धीमी शारीरिक क्रियाओं को निष्पादित करने में सहायक सिद्ध होता है। वृद्ध व्यक्तियों के लिए आहार नियोजन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:

• वृद्धों का भोजन आसानी से चबाने योग्य होना चाहिए ताकि वे उसे अच्छी तरह चबाकर खा सकें और साथ ही भोजन सुपारी हो जिससे उन्हें खाना खाने के परस्पर बदहस्ती की शिकायत न रहे। उसके लिए जरूरी है कि उनका भोजन तला भुना व अधिक मिर्च मसालेदार न हो।

• आहार नियोजन करते समय कैलोरी मूल्य पर विशेष ध्यान दिए जाना चाहिए। अतः आहार नियोजन इस तरह का हो जिससे वृद्ध को उतनी ही कैलोरी मिले जितने की उन्हें आवश्यकता हो। अतः तले हुए या ज्यादा तेल से बने हुए खाद्य पदार्थ कम लेने चाहिए। इसके अलावा मिठाई, गुड़ व शक्कर के सेवन में कमी करनी चाहिए ताकि शरीर का भार न बढ़े किंतु साथ ही यह भी ध्यान रहे कि उस भोजन से बाकी पीठक तत्वों की पूर्ति हो रही हो।

• वृद्धों में कब्ज की शिकायत न हो इसके लिए रेसीपर भोजन पदार्थों जैसे नरम सब्जियों और फलों का प्रयोग किया जाना चाहिए। ये रक्त में शरकरा के स्तर को तेजी से बढ़ने नहीं देते और कोलेस्ट्रॉल को भी नियंत्रित रखते हैं। इसके साथ ही ताल तथा अर्ध ढोंग भोजन पदार्थों जैसे सूप, फलों का रस, दलिया, खिचड़ी आदि को भी आहार में सम्मिलित करना चाहिए।

• वृद्धव्यक्ति में अस्थि विकृति व रक्ताल्पता होने की अधिक संभावना होती है। अतः उनके आहार में पर्याप्त मात्रा में दूध, दूध से बने व्यंजन, वकृत, मांस एवं हरी पत्तेदार सब्जियाँ होनी चाहिए।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

• वृद्धों में प्रोटीन की पूर्ति हेतु आहार में पर्याप्त मात्रा में प्राणिज भोज्य पदार्थ जैसे दूध, मांस, मछली, अंडा तथा दालों का समावेश होना चाहिए। यह प्रोटीन कोशिकाओं की टूट फूट की मारमथ करता है।

• विटामिन सी की पूर्ति हेतु आहार में नींबू, संतरा, अमरूद, आँवला तथा अन्य खुश्त फलों को समस्मित करना चाहिए।

• वृद्धों की रूचि को ध्यान में रखते हुए उनके लिए आहार नियोजन करना चाहिए ताकि वो प्रसन्नता पूर्वक अपने भोजन का आनंद ले सकें। उनके आहार में विविधता लाने के लिए, बदल बदलकर व्यंजन देने चाहिए। इससे उनकी खाने में रूचि भी बनी रहती है।

• वृद्धों में ग्री: कई प्रकार के विटामिनों की कमी हो जाती है। इसलिए यह सुनिश्चित करें कि उनके भोजन में सभी आवश्यक विटामिनों की समुचित मात्रा रहे। वह उनके भोजन शुरू के साथ ध्यान देने चाहिए।

• विदिक एक समय में वृद्ध व्यक्ति पूरा आहार नहीं ले पाता है। इसलिए छोटे आहार कम समय के अन्तराल पर दिये जाने चाहिए।

6.6 वृद्धावस्था के दौरान पोषण संबंधी समस्याएं

वृद्धावस्था के दौरान व्यक्ति को कई तरह की बीमारियाँ घेर लेती हैं। कुछ बीमारियाँ खराब पोषण की वजह से होती हैं जबकि कुछ बीमारियाँ की वजह से पोषण स्तर खराब हो जाता है। एक बार रोग हो जाने पर व्यक्ति में बहुत समय लगता है और अनावश्यक रूप से खराब होता है।

इसलिए कहा जाता है कि पहले सबसे अच्छा उपचार है। तो आइए वृद्धावस्था में होने वाली बीमारियाँ और उनके निवारण के बारे में जानते हैं।

1) गठना और अस्थिविकृति: 55 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति में गठना (जोड़ों का दर्द) की शिकायत अक्सर देखी जाती है और इसकी वजह से उन्हें चलने फिरने में परेशानी का सामना करना पड़ता है। कई बार अपने भोजन के लिए उन्हें दसरों पर आश्रित रहना पड़ता है जिसकी वजह में उनका पोषण स्तर काफी गिर जाता है। अस्थिविकृति में हड्डियों से कैल्शियम तथा फोस्फोस खुरचक निकलने लगता है जिसकी वजह से हड्डियाँ कमजोर ओर भंगुर हो जाती हैं। इसलिए वृद्ध व्यक्तियों के आहार में पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम शामिल किया जाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अवशोषण में विटामिन डी की महत्वपूण भूमिका होती है इसलिए उनके आहार में विटामिन डी की भी पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए।

2) मधुमेह: वृंदावस्था में मधुमेह एक आम समस्या होती है। खासतौर पर यदि परिवार में कोई इस बीमारी से प्रभावित होता है तो इसके होने की संभावना और भी बढ़ जाती है। मधुमेह में रक्त में शरकरा की मात्रा बढ़ जाती है। मधुमेह रोग को साइलेट किर्ल के नाम से भी जाना जाता है। इससे हदद, आँख, गुद्दू और पैरों को नुकसान सहित कई जटिलताएं हो सकती हैं। वृंदावस्था में मधुमेह को नियंत्रण में रखने के लिए पूरे दिन नियमित समय पर सही आहार लेना आवश्यक है। आहार में वसा, चीनी, मीठी चीजें और देहानी आहार का साथ नहीं लिया जाना चाहिए।

2) मधुमेह: वृंदावस्था में मधुमेह एक आम समस्या होती है। खासतौर पर यदि परिवार में कोई इस बीमारी से प्रभावित होता है तो इसके होने की संभावना और भी बढ़ जाती है। मधुमेह में रक्त में शरकरा की मात्रा बढ़ जाती है। मधुमेह रोग को साइलेट किर्ल के नाम से भी जाना जाता है। इससे हदद, आँख, गुद्दू और पैरों को नुकसान सहित कई जटिलताएं हो सकती हैं। वृंदावस्था में मधुमेह को नियंत्रण में रखने के लिए पूरे दिन नियमित समय पर सही आहार लेना आवश्यक है। आहार में वसा, चीनी, मीठी चीजें और देहानी आहार का साथ नहीं लिया जाना चाहिए।

3) रक्तचाप एवं हदद संबंधी रोग: रक्त के परिसंचरण से रक्त बाहिकाओं की दीवारों पर पड़ने वाले दबाव को रक्तचाप कहते हैं जो सामान्य आस्था में 120/80 mm Hg होता है। वृंदावस्था में रक्तचाप के रूप में भारी उतार चढ़ाव देखा जाता है जो कई बार उनके लिए घातक साबित हो सकता है। उदाहरण के लिए ज्वाडातार ताजे फल और सैंडबर्ज (आलू और तरबूज को छोड़कर), चोकर समेत गेहु, रोटियाँ, मोटे अनाज, साबुत दाल और दूध, दही, फिल्में आदि कम लाइसेंट में दिनचर्या में शामिल करना चाहिए।

3) रक्तचाप एवं हदद संबंधी रोग: रक्त के परिसंचरण से रक्त बाहिकाओं की दीवारों पर पड़ने वाले दबाव को रक्तचाप कहते हैं जो सामान्य आस्था में 120/80 mm Hg होता है। वृंदावस्था में रक्तचाप के रूप में भारी उतार चढ़ाव देखा जाता है जो कई बार उनके लिए घातक साबित हो सकता है। उदाहरण के लिए ज्वाडातार ताजे फल और सैंडबर्ज (आलू और तरबूज को छोड़कर), चोकर समेत गेहु, रोटियाँ, मोटे अनाज, साबुत दाल और दूध, दही, फिल्में आदि कम लाइसेंट में दिनचर्या में शामिल करना चाहिए।
रेशेयुअजर त फल एवं सिब जल, अल्प वसा दूध एवं दूध से बने खाद्य पदार्थों पर जोर दिया जाए।

4) अल्जाइमर रोग: अल्जाइमर धीरे धीरे पनपने वाला रोग है जो मस्तिष्क के उस भाग में शुरू होता है जो स्मरण शक्ति को नियंत्रित करता है। इस रोग में बुद्धि, भावों और व्यवहार की क्षमता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। कई बार या खाना खाकर भूल जाता है और कई बार बोलकर प्रभाव करना ही भूल जाता है जिसकी वजह से या का पोषण और बिगड़ जाता है। इस रोग से बचने के लिए जरूरी है कि व्यक्ति स्वयं को मानसिक रूप से व्यस्त रखें। वो अपना समय अपनी रुचि की चित्रा जैसे नृत्य, गाना, योग, पूजा, खेलना, लोग से बात करना आदि में व्यस्त रखे। साथ ही संतुलित पौष्ठिक आहार लें और अल्जाइमर और धूर्मपान से बचें।

5) गुदण रोग: 60 वर्ष के पश्चात गुदण की बीमारी होने की संभावना अधिक होती है। अधिक आयु के अलावा, गुदण के रोग के अन्य प्रमुख कारक हैं—मधुमेह, उच्च रक्तचाप एवं गुदण की विफलता का पारिस्थितिक इतिहास। इस रोग में गुदण खराब होने, हदय धमनी रोग होने तथा मृत्यु होने का जोखिम रहता है। गुदण के रोगों की रोकथाम के लिए जरूरी है कि जोन को नियंत्रण में रखा जाए। यात्रा का आहार नियोजन इस तरह किया जाए जिससे रक्तचाप तथा रक्त में शरीर, कोलेस्टरोल व ट्राइलिसाइस्ट्रोल का स्तर नियंत्रण में रहे। बृहदें को धूर्मपान और तम्बाकू आदि का केवल भी नहीं लेना चाहिए।

6) नेन्न का रोग: बुद्धावस्था में शरीर के अन्य शारीरिक कार्यों की तरह, आँखों की रोगों के अपनी भी प्रभावित होती है और या की सूची आकर, मोतियाबिंद और वृद्धि की हानि आदि परेशानियों का सामना करना पड़ता है। जो बृहद या मधुमेह रोग से प्रस्त होते हैं उन्हें डायबिटिक रेटिनॉप्राइकी के समय का सामना करना पड़ता है। जीवनशैली का जूती पर सीधा भाव पड़ता है। संतुलित आहार खाने से खास तौर पर वह आहार जिसमें विटामिन ए की पर्याप्त मात्रा होती है, आँखों की कई बीमारियों को रोकने में मदद मिलती है। कई अध्ययनों से पता चलता है कि ओमेगा 3 वैशिष्ट्य अम्ल और एंटीऑक्सिडेंट से भरपूर आहार मोतियाबिंद के जोखिम को कम करता है। आँखों के कई रोगों के लिए धूर्मपान एक प्रमुख जोखिम कारक है। अत: इससे बचना चाहिए।
1. सत्य अथवा असत्य बताए।
   a. वृद्धावस्था में अलजाइमर रोग होने से स्मरण शक्ति की क्षीण हो जाती है।
   b. मधुमेह रोग को साइलेंट किलर के नाम से भी जाना जाता है।
   c. वृद्धावस्था में नेत्र संबंधित विकारों से दूर रहने के लिए, आहार में विटामिन डी लेने की सिफारिश की जाती है।
   d. उत्तर रक्तचाप से पीड़ित वृद्धों को कम नमक वाला भोजन लेना चाहिए।
   e. मधुमेह से अधिक जलाइमर इंडेक्स वाले भोजन अपने आहार में सम्मिलित करने चाहिए।

6.7 सारांश

वृद्धावस्था में शरीर में कई तरह के परिवर्तन होते हैं जो पोषक तत्वों की मांग को भी प्रभावित करते हैं। साथ की आयु के बाद रक्तचाप बढ़ जाता है। प्रतिक्रिया प्रणाली को संक्रमण व अन्य रोगों से लड़ने में अधिक कठिनाई होने लगती है, स्मरण शक्ति की क्षीण होने लगती है, हर्द्वियों कमजोर हो जाती हैं जिसकी बजह से चलने फिरते में पेशानी का सामना करना पडता है। स्वाद प्रेक्षियाँ प्रभावित होती हैं जिसकी बजह से भोजन में रूचि कम हो जाती है। पाचन तंत्र भी कमजोर हो जाता है। इसके अलावा कई लोगों को गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं जैसे हड़प्पा रोग और मधुमेह रोग आदि घेर लेते हैं। वृद्धों का आहार नियोजन करते समय उनकी स्वास्थ्य स्थिति एवं पोषक जरूरतों का विशेष ध्यान रखना चाहिए। वृद्धावस्था में व्यस्तों की तुलना में कम ऊर्जा की जरूरत होती है। जबकि सूक्ष्म पोषक तत्वों में वृद्ध इस जीवन अवस्था के दौरान स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करती है। उनके आहार में जल एवं रेशा को भी भरपूर मात्रा में सम्मिलित करना चाहिए। साथ ही वह भी ध्यान देने योग्य बात है कि वृद्धों का भोजन उनकी रूचि के अनुसार, आसानी से चबाया जाने वाला, सुपारी हो और छोटे छोटे अंतराल पर उन्हें दिया जाए। एक सुंगलित आहार, बुढ़ापे में बीमारियों को दूर रखने में विशेष योगदान दे सकता है।

6.8 पारिभाषिक शब्दावली

• आई0 सी0 एम0 आर0: इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च/ भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- आधारीय चिकित्सा दर: शरीर के माध्यम से रक्त पंप करने, शरीर के तापमान को बनाए रखने, भोजन को पचानने और सांस लेने जैसी आजारभूत शारीरिक क्रियाओं को करने के लिए आवश्यक कैलोरी की संख्या।

- डायबिटीक रैटिनोपैथी: एक बीमारी, जिसमें मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति की आँखों के रेटिना को रक्त फुंछाने वाली महीन नलिकाएं क्षतिग्रस्त हो जाती हैं।

- एंटीऑक्सिडेंट: वह पदार्थ जो ऑक्सीजन या पेरोक्साइड द्वारा प्रोत्साहित प्रतिक्रियाओं को रोकता है।

- एथेरोस्क्लेरोसिस: एक बीमारी जिसमें धमनियों के अंदर वसा, कोलेस्ट्रॉल, कैलिशियम और रक्त में पाए जाने वाले अन्य पदार्थ, प्लांक के रूप में जमने लगते हैं और धमनियों को कठोर बना देते हैं।

- कणुनुन: वह जिसमें अनुभूत अनुभव जो अनुभव का मल बहाने डर पड़ जाता है और मल अनुभव की बहाने ली जाती है।

6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।
   a. असत्य
   b. सत्य
   c. असत्य
   d. सत्य
   e. असत्य

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   a. लौह लवण, कैलिशियम
   b. 600
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

c. 40
d. 1697
e. रेशे

अभ्यास प्रश्न 3

1. सत्य अथवा असत्य बताइए।
   a. सत्य
   b. असत्य
c. असत्य
d. सत्य
e. असत्य

6.10 सन्दर्भ गर्भ सूची

2. वृद्ध सिंह, आहार एवं पोषण विज्ञान (2016) चौदहवां संस्करण, पंचशील प्रकाशन, जयपुर।

6.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के बारे में विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. वृद्धावस्था के दौरान शारीरिक रहने हेतु विभिन्न पोषक तत्त्वों की मांग के बारे में बताइए।
3. वृद्ध व्यक्तियों के लिए आहार नियोजन करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
4. वृद्धावस्था में किन बीमारियों के होने का खतरा रहता है और कैसे वे व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर को प्रभावित करती हैं?
खण्ड २:
उपचारात्मक पोषण एवं आहार चिकित्सा- I
इकाई 7: उपचारात्मक आहार

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 उपचारात्मक आहार: परिभाषा

7.4 आहारीय चिकित्सा के सिद्धांत

7.5 सामान्य आहार का उपचारात्मक उद्देश्य हेतु रूपांतरण

7.6 अस्तमात में रोगियों के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले आहार के प्रकार

7.7 विशेष आहार विधियाँ

7.7.1 पैरेंटरल पोषण (Parenteral Nutrition)

7.7.2 एंटरल पोषण (Enteral Nutrition)

7.8 सारांश

7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.10 निवन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

उपचारात्मक आहार का अर्थ है एक ऐसा आहार जिसे एक विशेष बीमारी की स्थिति के लिए विशिष्ट रूप से योजनाबद्ध और अनुकूलित किया जाता है। रोगियों के चिकित्सकीय उपचार को ध्यान में रखते हुए इस आहार की योजना बनाई जाती है। इस इकाई में हम एक सामान्य व्यक्ति के नियमित आहार के संशोधनों और अनुकूलन के विभिन्न तरीकों के बारे में तथा विशेष रोग स्थिति के लिए विशेष रूप से नियोजित उपचारात्मक आहार के बारे में चर्चा करेंगे।

प्रत्येक आहार जो एक आहार विशेषज्ञ द्वारा उपचारात्मक आहार के रूप में निर्धारित किया जाता है, उसका एक औचित्य और उद्देश्य होता है। इस इकाई में हम उपचारात्मक आहार की परिभाषा और इसकी प्रासंगिकता, उपचारात्मक आहार में सामान्य या नियमित आहार को संशोधित करने के तरीके, विभिन्न प्रकार के आहार और विशेष रोग स्थितियों में भोजन के विभिन्न तरीकों के बारे में चर्चा करेंगे।
7.2 उद्देश्य
इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप:
• उपचारात्मक आहार अनुकूलन के उद्देश्य को जानेंगे;
• वे विश्वास जिनके द्वारा सामाजिक आहार को उपचारात्मक आवश्यकताओं के लिए संशोधित किया जा सकता है, के बारे में जानेंगे;
• विश्वसन प्रकार के आहारों (सामान्य, तरल, नरम आहार आदि) के बारे में चर्चा करेंगे, तथा
• पोषण की विशेष आहार विधियों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

7.3 उपचारात्मक आहार: परिभाषा
उपचारात्मक आहार एक सामान्य या एक नियमित आहार के रूपांतरण होते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि उपचारात्मक आहार रोग की स्थिति के लिए होते हैं, इसलिए सामान्य आहार को विशेष रूप से संशोधित किया जाता है और वे संशोधन रोगियों की पोषण स्थिति, रोग की गंभीरता, रोगियों की आहार का उपभोग करने की स्थिति और शरीर में चयनचय के परिवर्तन अनुसार भी होते हैं। कुछ स्थितियों में केवल रोगी के रूप में परिवर्तन की आवश्यकता होती है, कुछ मामलों में आहार की स्थिति में तथा आहार की ऊर्जा में कमी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार सामान्य / नियमित आहार को संशोधित करने के प्रयोजन और उद्देश्य विविध हैं।
उपचारात्मक आहार की निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है:
“एक मूल पीठिक आहार का मानकोपक्ष गुणात्मक रूप से संशोधित संरचना जो रोगी की बदलती पोषण आवश्यकताओं तथा रोग की स्थितियों के अनुसार रूपांतरित किया गया है”।
एक उपचारात्मक आहार की परिभाषा जानने के बाद, आइए हम नियमित आहार के संशोधनों के बहु उद्देश्यों को सूचीबद्ध करें:
• पोषण की स्थिति बनाए रखने के लिए,
• शरीर प्रणाली और प्रभावित अंग (जैसे गैस्ट्राइटिस की स्थिति में नरम या तरल आहार) को सहायता प्रदान करने के लिए,
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- विशेष स्थिति में विशेष आहार प्रदान करना जैसे वसा कुख्यातिशिक्षण की दशा में पाचन, अवशोषण, चयापचय और उपचार को सुविधाजनक बनाने के लिए कम वसा वाला आहार देना,

- आहार की स्थिति के अनुसार आहार को संशोधित करने के लिए जैसे प्रासननली के कैसर के रोगियों के लिए नतीजा द्वारा पोषण,

- दांतों की समस्या (यांत्रिक कठिनाइयाँ) के रोगियों द्वारा भोजन अंतर्गत को सुविधाजनक बनाने के लिए और

- शरीर के वजन को बढ़ाने या घटाने के लिए उच्च कैलोरी और कम कैलोरी आहार।

रोग की स्थिति के लिए सामान्य आहार के संशोधन के उद्देश्यों को जानने के बाद आप सोच होंगे कि वे परिवर्तन रोगियों को कैसे लाभ पहुँचाते हैं और इसका क्या महत्व है? एक साधारण आहारीय संशोधन नीम्नवर्ती और लक्षणों की प्राप्ति पर निम्नवर्ती रहता है जो अन्यथा हानिकारक हो सकता है। रोग प्रक्रिया आहार की गुणवत्ता और मात्रा दोनों को प्रभावित करती है, जिससे न केवल शरीर में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता प्रभावित होती है, बल्कि भूख कम होने या अधिक भूख लगने जैसे लक्षण भी प्रभावित होते हैं। साथ ही किसी विशिष्ट पोषक तत्त्व के चालने, निगलने, पाचन, अवशोषण में भी समस्या होती है जिससे शरीर द्वारा सहनीय भोजन के प्रकारों तथा खिलाए जाने की आवश्यकता में परिवर्तन हो सकता है।

उदाहरण के लिए, मधुमेह में दिन भर में समान रूप से कार्बोहाइड्रेट का वितरण करके लक्षणों को कम किया जा सकता है और मधुमेह के दीर्घकालिक परिणामों में विलम्ब भी किया जा सकता है। इसी तरह, आनुवंशिक विकारों में आहार में परिवर्तन से लक्षणों से राहत मिल सकती है और रोग प्रक्रिया में देरी हो सकती है। इस प्रकार, संशोधित आहार लक्षणों को कम कर सकता है तथा रोगी के जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है।

अब तक आप इस तथ्य से परिचित होंगे कि सामान्य पोषण उपचारात्मक संशोधन का आधार है। आहार और पोषण चिकित्सा का प्राथमिक सिद्धांत रोगियों की सामान्य पोषण आवश्यकताओं पर आधारित होता है। कोई भी उपचारात्मक आहार किसी विशिष्ट स्थायित्व स्थिति में व्यक्ति की सामान्य पोषण संबंधी जरूरतों का केवल एक संशोधन होता है। अनुशंसित आहारीय भंडा (Recommended Dietary Allowances) का उपयोग अक्सर उपचारात्मक आहार की पर्याप्तता के मूल्यांकन के लिए एक आधार के रूप में किया जाता है। किसी विशेष रोग के लिए आहार की
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

योजना बनाते समय रोग की स्थिति या विकार के लिए विशिष्ट पोषक आवश्यकताओं, जीवन शैली, आय, ज्ञान, स्वाद की प्राथमिकताएं, धार्मिक विश्वास और विविध अन्य सामाजिक सांस्कृतिक कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

आइए, अब हम उपचारात्मक आहार के इस भाग में जो हमने अध्ययन किया है, उसका पुनर्ध्वार करें।

अभ्यास प्रश्न 1

1. उपचारात्मक आहार को परिभाषित करें। उपचारात्मक आहार के महत्व की व्याख्या कीजिए।

2. उपचारात्मक आहार की योजना के उद्देश्यों की चर्चा करें।

3. बताइए कि उपचारात्मक आहार सामान्य आहार पर कैसे आधारित है?

7.4 आहारीय चिकित्सा के सिद्धांत

रोगियों के आहार की योजना बनाते समय कुछ विशेष बिंदुओं पर विचार किया जाना चाहिए यदि इनका पालन नहीं किया जाता है, तो आहार को निर्धारित करना व्यवहारिक और वैज्ञानिक नहीं होगा और उपचारात्मक आहार का उद्देश्य प्राप्त नहीं हो पाएगा। आहार नियोजन के सिद्धांत निम्न दिए गए हैं:

- भोजन और पोषण (आहार विशेषज्ञ) के विशेषज्ञ द्वारा आहार नियोजन किया जाना चाहिए,
- आहार अनुशंसित आहारीय बहते के अनुसार होना चाहिए,
- आहार रोगियों की शारीरिक स्थिति के अनुसार होना चाहिए,
- आहार विशेषज्ञ को रोगियों की मनोवैज्ञानिक स्थिति का यथार्थ होना चाहिए,
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- आहार आवास, आहारीय स्वरूप, व्यवसाय और रोगी की आर्थिक स्थिति के अनुसार होना चाहिए,
- आहार की योजना बनाने में विकल्पक की सलाह भी ली जानी चाहिए,
- आहार विशेषज्ञ को रोगियों के रोग के इतिहास के बारे में जानने चाहिए जैसे रोग की अवधि और एल्जी की स्थिति,
- नियोजित आहार व्यवहारिक, अच्छी तरह से पकाया हुआ और आकृतिक होना चाहिए ताकि आहार न केवल पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा करे बल्कि रोगियों के मानस को भी संतुलित करे।
- स्वीकारिता आहार आपत्ति और आहारीय स्वस्थ रखते हुए, आहार में विभिन्न उपचारात्मक संशोधनों की आवश्यकता होती है। आइए इन पर चर्चा करें।

7.5 सामान्य आहार का उपचारात्मक उद्देश्यों हेतु रूपांतरण

सामान्य आहार रोजगार, उन्नति और संविधान के लिए परिवर्तनीय किया जाता है जो रोग के लक्षणों, उपायपति और जब रासायनिक परिवर्तन, रोगियों की शारीरिक स्थिति, रोगियों की आवश्यकता (ऊर्जा और अन्य पोषक तत्वों के लिए) और उपचार के स्तर पर निर्भर करता है। आहार के अनुकूलन में पोषक तत्व संशोधन और बनावट संशोधन शामिल हैं। पोषक तत्वों के संशोधनों में मिठाई में बदलाव, कम संदियम आहार, कम वसा वाले आहार और/या कम कोलेस्ट्रॉल आहार, उच्च रेशेय आहार आदि शामिल हो सकते हैं। आहार में बनावट संशोधन वातिक नर्म आहार और प्यूरी आहार बनाने के लिए किया जाता है।

उपचारात्मक आहार में जो आधारभूत बदलाव किए जाते हैं, वे निम्न हैं:
- खाद्य पदार्थों की संख्या में वृद्धि या कमी,
- आहार के ऊर्जा मूल्य में वृद्धि या कमी,
- विशिष्ट पोषक तत्वों या उपभोग किए गए भोजन के प्रकार में वृद्धि या कमी,
- आहारीय रेशों में संशोधन,
- मसालों का उन्मूलन,
- विशिष्ट खाद्य पदार्थों को शामिल न करना/उन्मूलन आहार,
- प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट के अनुपात और संतुलन में समायोजन,
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- भोजन की संख्या और आवृत्ति की पुनर्व्यवस्था,
- परीक्षण आहार,
- खिलाने के तरीकों में बदलाव।

आइए इन सभी परिवर्तनों की विस्तृत चर्चा करें।

खाद्य पदार्थों की सचनता में परिवर्तन

आहार की सचनता को बदलकर हम आहार को नरम, तरल या सामान्य बनाते हैं। विभिन्न रोग स्थितियों में जड़तात्व पथ प्रभावित होता है और कई बार विभिन्न कारणों से मरीज सामान्य आहार नहीं ले पाते हैं। जैसे अंतिमय, ज्वर, शारीरिक चिकित्सा के पश्चात्, मुंह में अल्सर, वेदिक अल्सर आदि के मामले में। उदाहरण के लिए, मुंह के अल्सर होने की स्थिति में रोगी द्वारा सामान्य थोस आहार नहीं चाही जा सकता है और उसके द्वारा केवल तरल आहार को ही सहन किया जा सकता है।

जबकि उच्च रक्तचाप में मधुमेह के मामले में सामान्य आहार सहन किया जाता है और इसे अनुशंसित किया जाता है। ये आहार बहुत कम अवशेष आहार से लेकर उच्च रेशोबुक्क आहार तक हो सकते हैं।

आहार के ऊजाण मूल्य में वृद्धि या कमी

रोगी की आवश्यकताओं के आधार पर, आहार की ऊजां बढ़ाई या कम की जाती है। यह चयापचय परिवर्तन और रोगियों के गतिविधि स्वरूप में संशोधन के कारण होता है। हद्ध रोग और मधुमेह के मामलों में, बढ़ रोगी मोटे या अधिक वजन वाले हैं, तो उन्हें कम ऊजां वाले आहार की सलाह दी जाती है। उच्च कैलॉरी युक्त आहार कम वजन वाले रोगियों, तपेडिक के रोगियों, ज्वर, अंतिगलाप्र्यथिता (hyperthyroidism) और जलने के रोगियों के लिए निरंतर है।

विशिष्ट पोषक तत्वों या उपभोग किए गए भोजन के प्रकार में वृद्धि या कमी

कुछ रोग स्थितियों में एक या कुछ पोषक तत्वों के संयोजन को संशोधित किया जाता है। वस्त्रपंति और प्राणिज्ञ प्रोटीन में उच्च आहार कुपोषण के उपचार या मांसपेशियों को बढ़ाने के लिए अनुशंसित हैं। ज्वर, अंतिगलाप्र्यथिता, जलने, शारीरिक चिकित्सा के पश्चात्, अंतिसर, बुझीं तथा मदिरा का सेवन करने वाले व्यक्तियों हेतु उच्च प्रोटीन आहार निर्धारित किया जा सकता है। दूसरी ओर हेपेटिक एसफेलोपेथी, तींत्र और दीर्घकालीन लोमेलोन्फ्राइटिस, तींत्र और दीर्घकालीन गुरद के विफलता आदि के लिए कम प्रोटीन आहार निर्धारित किया जाता है। उच्च रक्तचाप में सोडियम प्रतिबंधित तथा बकृत रोग में वसा प्रतिबंधित आहार अनुशंसित किया जाता है।

उत्तराखण्ड युक्त विश्वविद्यालय

उन्नत विश्वविद्यालय
नैदानिक एवं उपचारात्मक पॉशन

आहारीय रेशों में संशोधन

जठरांत्रीय विकारों में आमतौर पर आहारीय रेशों में संशोधन की आवश्यकता होती है। आमतौर पर गंभीर अतिसार, तीत्र विपुलितिस (acute diverticulitis), शाल्य चिकित्सा के उपाय कम रेशोजुक आहार का उपयोग किया जाता है। उच्च रेशोजुक आहार शरीर के अपशिष्टों के उत्सर्जन में मदद करता है और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करता है। इसलिए यह कमजोर हेमोड रोगों में लाभकारी होता है। जई, बीस्नस, माटर और फल एवं सज्जिया (जैसे संतरा, नाशपाती, हरी सज्जिया, गाजर आदि) रेशों के समूह सोते हैं।

मसालों का उपाय

कुछ आहार रसायनिक तथा यांत्रिक बनावट एवं ऊष्णता को ध्यान में रखते हुए नम मथा फ़ीके बनाए जाते हैं जिस पाचन पथ की जलन से बचा जा सके। इससे पेंटिक अल्सर, दाह आंत्र रोग आदि में उत्तेजक और स्वास्थ्य में दुःख मसालों एवं सुगंधित फलों और सज्जियों से पहेज़ किया जाता है।

विशिष्ट खाद्य पदार्थों को शामिल न करना/उन्मूलन आहार

कुछ ऐसी स्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें रोगियों को कुछ खाद्य पदार्थों से एल्टी जोड़नी होती है। इसलिए, खाद्य एल्टी अथवा असहिष्णुता का पता लगाने के लिए भोजन या खाद्य पदार्थों के छोटे समूह को निकाल के एक आहार बनाया जाता है। सभी संविध खाद्य पदार्थों के लिए यह किया जाना आवश्यक होता है। आमतौर पर प्रोटीन खाद्य पदार्थ जैसे दूध, अंडे, मूंगफली, समुद्री खाद्य पदार्थ आदि का परीक्षण रोगियों की एल्टी की स्थिति में इनकी भूमिका के लिए किया जाता है। सीलिकए रोग में, जठरांत्रीय मूकोसा गेहूँ के प्रोटीन ग्लूटन के प्रति बहुत संवेदनशील हो जाता है। सीलिकए रोग के रोगियों के आहार से गेहूँ और उसके उत्पादों को पूरी तरह से हटाया जाता है।

प्रोटीन, वसा और काम्बोड्डेट्रे के अनुपात और संतुलन में समायोजन

मधुमेह जैसे विकारों में, रोग की स्थिति का ध्यान रखने के लिए काम्बोड्डेट्रे, वसा और प्रोटीन की मात्रा को संतुलित करना पड़ता है। प्रोटीन का समायोजन कीटोजेनिक आहार में किया जाता है।

भोजन की संख्या और आवृत्ति की पुनर्व्यवस्था

मधुमेह, ज्वर, पेंटिक अल्सर, अतिसार जैसी बीमारी की स्थितियों में रोगी एक समय में बड़ी मात्रा में खाद्य पदार्थों का उपभोग करने में सक्षम नहीं होते हैं। रोग के संकेत और लक्षणों को दूर करने के लिए लगातार अंतराल पर कम मात्रा में खाद्य पदार्थ का अंतर्ग्रहण आवश्यक है।
परीक्षण आहार

ये एकल भोजन या आहार होते हैं जो एक या कुछ दिनों तक चलते हैं, कुछ परीक्षणों के लिए रोगियों को दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, वसा अवशोषण परीक्षण का उपयोग यह निर्धारित करने के लिए किया जाता है कि क्या स्टोटोरिया (मल में अंतिरिक्त वसा की उपस्थिति) मौजूद है या नहीं।

खिलाने के तरीकों में बदलाव

कभी-कभी आहार मौखिक रूप से नहीं दिया जाता है या रोगी मौखिक रूप से आहार लेने में सक्षम नहीं होते हैं। इस स्थिति में खिलाने के अन्य मार्गों का उपयोग किया जाता है जैसे कि नली द्वारा आहार जिसे एंटरल फीडिंग (enteral feeding) भी कहा जाता है और अंतःशरीर पोषण जिसे पैरेन्टरल फीडिंग (parenteral feeding) भी कहा जाता है।

सामान्य आहार के रूपांतरण का जो भी तरीका हो, यह सूचित किया जाना आवश्यक है कि रोग की स्थिति में सुधार के लिए रोगियों को सामान्य अनुशंसित आहार उपलब्ध किया गया हो। इस प्रकार, उपचारस्तम्क आहार एक ऐसा आहार है जिसे विशेष रूप से रोग की विशिष्ट स्थितियों के लिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग-अलग तैयार किया जाता है। संशोधन में आहार के शारीरिक, यांत्रिक, मात्रात्मक या गुणात्मक पहलू हो सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. आहार योजना के सिद्धांतों के बारे में चर्चा करें।

2. सामान्य आहार के उपचारस्तम्क संशोधनों से आप क्या समझते हैं? उपचारस्तम्क आहार में किए गए आधारभूत परिवर्तनों को सूचीबद्ध करें।

3. उन्मूलन आहार और रोगियों आहार से आप क्या समझते हैं?

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
7.6 अस्पताल में रोगियों के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले आहार के प्रकार

अस्पताल में विभिन्न प्रकार के आहार का उपयोग किया जाता है। अस्पतालों में जिन आहारों को परोसा जाता है, उन्हें उपचारात्मक आहार कहा जाता है और इन्हें मुख्य रूप से सामान्य या नियमित आहार और संशोधित आहार के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। संशोधित आहारों को तरल आहार और नरम आहार के रूप में वर्गीकृत किया गया है। तरल आहार पुनः दो प्रकार के होते हैं: स्पष्ट तरल और पूर्ण तरल आहार। यह नीचे दिए गए आरेख से अधिक स्पष्ट हो सकता है। (चित्र 7.1)

चित्र 7.1: आहार के प्रकार

जैसा कि आप जानते हैं कि आहार में संशोधन रोगियों की शारीरिक और नैदानिक स्थिति के अनुसार होना आवश्यक है, जिनके बारे में पिछले अनुभाग में विस्तृत चर्चा की गई है। आइए अब यह समझें कि उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

उपचारात्मक आहार की योजना बनाते समय आहार में गुणात्मक संशोधनों का अर्थ है आहार को न्यायिक पसंद के आधार पर संशोधित करना, स्पष्ट दिशानिर्देश, भोजन सूची मार्गदर्शन और उपयुक्त निर्मित उत्पादों पर सलाह जैसी सहायक जानकारी उपलब्ध कराना। रोगी को प्रोत्साहित किया जाता है और उसे भोजन और आहार के बीच संबंध, भोजन का पोषणीय मूल्य तथा भोजन की आवृत्ति से अवगत कराया जाता है। विभिन्न गुणात्मक विश्वासों में निम्न सम्मिलित हैं:

- भारतीय के लिए स्वस्थ भोजन के लिए भोजन आधार दिशा
- खाद्य गाइड चित्रित
- वांछनीय खाद्य विकल्पों की सूची, और
- उन्मूलन आहार

मात्रात्मक तरीके मूल रूप से उपचारात्मक आहार के निर्माण के लिए दो तरीकों का उपयोग करते हैं। वे निम्न हैं:

1. **खाद्य विनिमय प्रणाली**: इस पद्धति में आहार का निर्माण एक विनिमय सूची से किया जाता है, जिसमें पोषक तत्वों के लिए समान खाद्य पदावरों के प्रकार का आदान-प्रदान करने और रोगियों द्वारा आवश्यकतानुसार पूरे दिन वितरित करने का लाभ होता है। खाद्य विनिमय प्रणाली के बारे में आप प्रथम सेमेस्टर के खाद्य विज्ञान एवं पोषण विषय में विस्तारपूर्वक अध्ययन कर चुके हैं। यह प्रति खाद्य भाग पोषक तत्वों की एक निश्चित मात्रा वितरित करता है। उदाहरण के लिए, कार्बोहाइड्रेट विनिमय प्रणाली का उपयोग इंसुलिन निम्बर मधुमेह रोगियों के लिए आहार की योजना बनाने में किया जाता है। सेवन का वांछित स्तर प्रत्येक भोजन के लिए निर्दिष्ट किया जाता है और तदनुसार आहार में विभिन्न देने के लिए विभिन्न खाद्य पदावरों को चुना जाता है।

2. **खाद्य पदावरों के भाग के आकार और आवृत्ति को निर्धारित करना**: इस आहार का निर्माण खाद्य पदावरों के सामान्य आकार के भागों से किया जाता है, लेकिन उन खाद्य पदावरों, जिनमें प्रति भाग एक विशेष पोषक तत्व की उच्चतम मात्रा होती है, को आहार से बाहर रखा जाता है। जैसे सोडियम में समृद्ध खाद्य पदावर उच्च रक्तचाप से प्रस्त रोगियों के आहार में शामिल नहीं किये जाते हैं। जब एक आहार रोग की स्थिति के लिए योजना बनाई जाती है जो मूल रूप में बहुक्रियात्मक होती है तब विभिन्न प्रकार के खाद्य पदावरों के सेवन की आवश्यकता पर विचार किया जाता है। उदाहरण हृदय ध्रुवीय रोग।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रत्येक मामले में आहार का नियोजन पोषक तत्वों के अनुशंसित आहारीय भंडार (RDA) के अनुरूप और खाद्य समूहों पर आधारित होता है। यह आमतौर पर क्षेत्र, अस्पताल के प्रकार और प्राप्तकृत प्रांगण के अनुसार नियोजित चक्रीय मेन्यू पर आधारित होता है। पोषण की पर्यासता रोगी के भोजन के चयन तथा रोगी के भोजन के सेवन पर निर्भर करती है। पर्यास पोषण का सेवन सुनिश्चित करने के लिए भोजन के चयन और भोजन के सेवन की निगरानी करना उपचारात्मक आहार विशेषज्ञ की जिम्मेदारी होती है।

प्रकार के आहार और आहार के निर्माण के विभिन्न पहलुओं और तरीकों को जानने के बाद, आइए अब विभिन्न प्रकार के आहारों के बारे में विस्तार से चर्चा करें।

I. सामान्य आहार / नियमित आहार: यह अस्पताल में भर्ती उन सभी रोगियों के लिए उपयोग किया जाने वाला आहार है, जिन्हें किसी प्रकार का आहार प्रतिबंध नहीं है। प्रतिबंध खाद्य पदार्थों के प्रकार, मात्रा और स्थिरता के संदर्भ में हो सकते हैं। सामान्य आहार को पूर्ण आहार या सामान्य आहार भी कहा जाता है।

"एक सामान्य आहार को उस आहार के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें एक स्वस्थ व्यक्ति द्वारा खाया गया कोई भी और सभी खाद्य पदार्थों की प्रति दी गई रोजगार समूहों और RDA के अनुसार की जाती है, ताकि सभी पोषक तत्वों की इकार बाहर मात्रा प्रदान की जा सके। इसमें किसी भी तरह के भोजन का कोई प्रतिबंध नहीं होता है और यह अच्छी तरह से संतुलित और पौरोषिक रूप से पर्याप्त होता है"।

सामान्य आहार अस्पताल में भर्ती उन रोगियों के लिए होता है जिनकी उपचारात्मक स्थिति आहार में किसी भी उपचारात्मक संशोधन को प्रस्तावित नहीं करती है। ऐसे आहार ऊर्जा में 10 प्रतिशत की कमी की जानी चाहिए क्योंकि रोगी अस्पताल में बिस्तर पर आरामदायक स्थिति में होता है। एक नकारात्मक नाइट्रोजन संतुलन के प्रबंधन के लिए प्रोटीन को धोड़ा बढ़ाया जाता है। अन्य सभी पोषक तत्व अनुशंसित आहारीय भंडार के अनुसार होते हैं। अस्पताल में सामान्य आहार आमतौर पर 1600-2000 किलोकैलोरी ऊर्जा और 60-80 ग्राम प्रोटीन प्रदान करता है। यह सभी रोगियों की पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा करता है।

अस्पताल में भर्ती रोगियों को सामान्य आहार/नियमित आहार देने के निम्न लाभ हैं:

• विशेष आहार पर नहीं होने से यह रोगी को मनोवैज्ञानिक संतुलित देता है।
• पोषण में संतुलित होता है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण  

- आहार की योजना बनाने में ज्यादा प्रयास नहीं करने होते हैं।
- रोगियों की पसंद और नापसंद के अनुसार संशोधित करने में आसान होते हैं।

अनुमय खाद्य पदार्थ

- वे सभी खाद्य पदार्थ जो किसी व्यक्ति द्वारा सामान्य स्वास्थ्य में खाए जाते हैं।

प्रतिबंधित खाद्य पदार्थ

- तले हुए खाद्य पदार्थ जैसे समोसा, पकौड़े, पूरी आदि।
- बस्सा से भरपूर खाद्य पदार्थ जैसे हलवा, केक, पेस्ट्री आदि।
- मसालेदार भोजन
- सुगंधित खाद्य पदार्थ।

II. तरल आहार: जब भी रोगी कई कारण जैसे कि ज्वर की स्थिति, शल्य चिकित्सा के बाद की स्थिति में ठोस खाद्य पदार्थों को सहन करने में असमर्थ होते हैं, तब उन्हें तरल आहार दिया जाता है। तरल आहार ऊपर प्रकार के होते हैं; स्पष्ट तरल आहार और पूर्ण तरल आहार।

स्पष्ट तरल आहार: स्पष्ट तरल आहार खाद्य पदार्थ और तरल पदार्थ प्रदान करता है जो कमरे के तापमान पर स्पष्ट और तरल होते हैं। रोगी के नैदानिक स्थिति के आधार पर प्रदान किए गए तरल का प्रकार भिन्न हो सकता है। यह तीव्र अतिसार, दीर्घकालीन रोग, सर्जरी और मतली, उद्दर्दी और एनोरियसिया के रोगियों को दिया जाता है। स्पष्ट तरल आहार का उद्देश्य निर्जनीकरण को रोकने के लिए तरल पदार्थ और इलेक्ट्रोलॉजिक्स प्रदान करना है। आहार, कैलोरी और आवश्यक पोषकता में अपर्याप्त होता है। स्पष्ट तरल आहार का उपयोग के लिए पोषण का एकमात्र स्रोत नहीं होना चाहिए।

स्पष्ट तरल आहार जटांत्र मार्ग में न्यूनतम अवशेष छोड़ता है। यह जटांत्र मार्ग की उपजना को भी कम करता है। यह कम अवशेष सामग्री बाले खाद्य पदार्थों से बना होता है जो आंतों में पाचन की आवश्यकता वाले भोजन के भार को कम करने में मदद करते हैं।

स्पष्ट तरल आहार का उपयोग अंत:शिशु पोषण और एक पूर्ण तरल या ठोस आहार के बीच अस्थायी परिवर्तनकालिक चरण (transitional phase) में किया जाता है। यह जटांत्र कार्य के तीव्र गड़बड़ी के समय भी उपयोगी होता है। एक स्पष्ट तरल आहार पानी, कार्बोहाइड्रेट और कुछ
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

इलेक्ट्रोलाइट्स से निर्मित होता है। यह आम तौर पर एक दिन में 400-500 किलो कैलोरी और 5 ग्राम प्रोटीन, नगण्य बस्ता और 100-120 ग्राम कार्बोहाइड्रेट प्रदान करता है।

अनुशंसित खाद्य पदार्थों में सम्मिलित हैं:
- स्पष्ट, बस्ता रहित सूप / शोरबा
- क्षीण कॉफी, चाय (बिना दूध या मलाई)
- छाना हुआ फलों का रस
- नारियल पानी, मद्रा, जो का पानी
- चीनी और नमक मिलाए हुए तरल पदार्थ
- कार्बोएंटेड पेय जो सहीनी हों
- प्यूकोज का पानी, चूने का पानी, शहद

इन तरल पदार्थों (30 से 60 मिलीलीटर) की छोटी मात्रा को नियमित अंतराल पर द्रव और इलेक्ट्रोलाइट्स हानि के लिए दिया जाता है।

पूर्ण तरल आहार: यह आहार मौखिक आहार को पुनः आरंभ करने का दूसरा चरण है। एक बार रोगी को स्पष्ट तरल पदार्थ सहीनी हो जाएं, सामान्य स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आहार के पोषकत्वों की मात्रा को बढ़ाने के लिए गाढ़े तरल पदार्थ दिए जाते हैं। पूर्ण तरल आहार एक सप्त तरल आहार और अधिक तथा गाढ़े तरल पदार्थ में सम्मिलित सभी तरल पदार्थों जैसे दूध, हलवा और बनामी के रस सम्मिलित हैं।

आहार का उद्देश्य उन व्यक्तियों को तरल पदार्थों का एक मौखिक स्रोत प्रदान करना है जो ठोस भोजन चबाने, निगलने या पचाने में असमर्थ होते हैं। इसका उपयोग पैंटरल पोषण के साथ या चबाने और निगलने की समस्या जैसे जबड़े में तार जैसी कुछ प्रक्रियाओं की उपस्थिति में किया जाता है।

यह ग्रास्तलीय या जठरांगीय अवक्षेप (gastrointestinal strictures), मध्यम जठरांत्र सूजन और गर्मीज रूप से बीमार रोगियों के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है। यह आहार उन लोगों के लिए उपयोग किया जाता है जो एक याचिका नम आहार को बदलने की सप्ताह कर सकते हैं। पूर्ण तरल आहार लगभग 1500-2000 किलो कैलोरी, 55 से 65 ग्राम प्रोटीन और पर्याप्त खान और विटामिन प्रदान करता है लेकिन कोई रेशा नहीं प्रदान करता। यह आहार बिस्तारित अवधि के लिए उपयोग
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन स्पष्ट तरल आहार की तुलना में अधिक समय तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

अनुमान खाद्य पदार्थों के कुछ उदाहरण हैं:
- तरल पदार्थ जो मलाईसी होते हैं,
- आइसक्रीम, हलवा, कस्टड,
- छाने हुए क्रीम सूप, और खाद्य पदार्थ,
- मिश्रित और छाने हुआ अनाज और दाल का दलिया,
- चाय, कॉफी और कावामेंटेड पेय,
- मक्खन और क्रीम मिश्रित भोजन,
- चीनी, शहद, नमक और छाना गंध युक्त खाद्य

III. नरम आहार: यह पूर्ण तरल और सामान्य आहार के बीच एक अवस्थापरिवर्तनकालिक आहार है। यह पौधी रूप से पर्याप्त आहार है और बनावट और स्थिरता में नरम तथा पिच्छन में आसान होता है। नरम आहार पूर्ण नरम भोजन प्रदान करता है जो हल्के मसालेयुक्त होते हैं, कम रेशायुक्त होते हैं और इसमें अत्यधिक स्वाद एवं गंध वाले खाद्य पदार्थ शामिल नहीं होते हैं। इस आहार को छोटी मात्रा में रोगी को तब तक दिया जाता है जब तक रोगी की ठोस भोजन के प्रति सहनशीलता स्थापित नहीं हो जाती।

यह आहार रोगी के बाद के मामलों, तीव्र संक्रमण वाले रोगियों, जटरंग संबंधी स्थितियों या चबाने की समस्याओं के लिए योग्य आहार है। रोगी की भूख, शल्य चिकित्सा, रोगी की भूख, भोजन की सहनशीलता, पिछली पोषण स्थिति और चबाने और निगलने की क्षमता के अनुसार नरम आहार का उपयोग किया जाना चाहिए। क्रियाशीलता, आयु, ऊँचाई, वजन, लिंग और रोग की स्थिति और यथार्थता रोगी की पोषण संबंधी जरुरतों के आधार पर नरम आहार 1800-2000 किलो कैलोरी और 55-65 ग्राम प्रोटीन और पवार मात्रा में विटामिन और खनिज प्रदान करता है। यह आहार विस्तारित अवधि के लिए उपयोग किया जा सकता है क्योंकि यह सामान्य स्वास्थ्य के लिए पोषणीय रूप से उपयुक्त होता है।

नरम आहार में शामिल खाद्य पदार्थों में निम्न शामिल हैं:
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- नरम पके हुए परिष्कृत अनाज जैसे पके हुए चावल और इसके उत्पाद जैसे पास्ता, ब्रेड, बिस्कुट, सूजी, दलिया, आदि।
- नरम पकी हुई धुली दालें और उनके सूप,
- नरम पके हुए अनाज और धुली हुई दालें जैसे खिचड़ी,
- दूध और दूध से बने पदाथ जैसे दली, पनीर आदि,
- नमकीन और मांस, मछली या चितन, अंडे,
- नरम, पकी हुई सब्जियां जैसे आलू, पालक, लौंग।
- तपीता, बना बिंगकेला, बिना छिलके और बीज वाले आम और नरम फल,
- कस्टड, आइसक्रीम, जेली, बिना मेवे वाली पुडिंग
- चीनी, शहद, केक (पंज), बिना मेवे वाली पुडिंग,
- सूप, हल्के स्वाद वाले शोरबा और क्रीम सूप, फलों के रस आदि,
- मक्खन, क्रीम, तेल, सलाद इत्यादि।

वर्जित खाद्य पदाथों में निम्न सम्मिलित हैं:
- बेली को सीमित करने के लिए साबुत अनाज और दालें जैसे दलिया,
- तले हुए खाद्य पदाथ जैसे प्यूरी, पराटे, पकौड़े और मेें,
- पेस्ट्री और डेस्ट्री,
- सलाद में कच्ची सब्जियां जैसे टमाटर, ककडी आदि,
- भारी मसालेदार और भरपूर मसाले वाले घूमन और सॉस, अचार।

यांत्रिक नर्म आहार: यांत्रिक रूप से नर्म आहार का उपयोग तब किया जाता है जब व्यक्ति को चबाने और निगलने में समस्या होती है। इस प्रकार के आहार का उपयोग खबाब वर्तन स्थितियों, दांतों का ना होना या शरी चिकित्सा की स्थिति में किया जाता है। यांत्रिक नर्म आहार एक सामान्य आहार है जिसे चबाने में आसानी के लिए केवल बनावट में संशोधित किया जाता है। इसमें कटा हुआ या पिसा हुआ मांस या कटे हुए कच्चे फल और सब्जियां, बहुत नर्म संभवता वाले खाद्य पदाथ शामिल हैं। तीखे स्वाद और तले हुए खाद्य पदाथों को इस आहार में वर्जित किया जाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

आए अगले खान्द के अध्ययन के पूर्व हम कुछ अभ्यास प्रश्नों के समाधान दूंगे।

अभ्यास प्रश्न 3

1. सामान्य आहार से क्या आप समझते हैं? इसका महत्व समझाएं।

2. नर्म आहार के बारे में चर्चा करें और इसमें अनुस्मरण और वर्तमान खाद्य पदार्थों को सूचीबद्ध करें।

3. यात्रिक नर्म आहार क्या होता हैं? सामान्य आहार को यात्रिक नर्म आहार में कैसे परिवर्तित किया जा सकता है?

बिभिन्न अस्पताल आहारों की समीक्षा करने के बाद, हम अब उपचारात्मक उद्देश्य के लिए उपयोग किए जाने वाले आहार के बिभिन्न तरीकों का अध्ययन करेंगे।

7.7 विशेष आहार विधियाँ

सामान्य रूप से अस्पताल में मरीजों को मौखिक मार्ग से भोजन दिया जाता है जो खाद्य पदार्थों और पोषक तत्वों के अंतर्गत का सामान्य मार्ग है। हालांकि, दुर्भाग्यवश विभिन्न कारणों से कुछ रोगी खाद्य पदार्थों का मौखिक रूप से सेवन नहीं कर पाते हैं। इस स्थिति में, नैदािनक आहार विशेषज्ञों और डॉक्टरों को गोरियों को खिलाने के अन्य तरीके निर्धारित करने होते हैं। गंभीर देखभाल में अधिकांश रोगियों के अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए पोषण सहायता के वैकल्पिक साधनों की आवश्यकता होती है।

गंभीर रूप से बीमार रोगियों की पोषण सहायता प्रदान करने के लिए पैरेटल और एंटरल पोषण के दो महत्वपूर्ण तरीके हैं। दोनों पैरेटल और एंटरल पोषण का उपयोग तब किया जाता है जब उदर आशिक रूप से काम कर रहा हो, लेकिन व्यक्ति स्वस्थ रहने के लिए पर्याप्त पोषक तत्वों का सेवन नहीं कर सकता या उन्हें पर्याप्त रूप से अवशोषित नहीं कर सकता है। स्वास्थ्य को बनाए रखने के
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

लिए, पैरेटरल और एंटेरल पोषण दोनों ही तत्त्व आहार का उपयोग करते हैं। पैरेटरल पोषण में एक फीडिंग ट्रूब अथवा आहार नली के माध्यम से आहार सीधे पेट या आंतों में पहुँचाया जाता है। पैरेटरल पोषण में पोषक तत्वों को अंत:शिरा माध्यम से दिया जाता है और जटरांत्र संबंधी मार्ग को पूरी तरह से बाईपास किया जाता है। पैरेटरल पोषण एक कैटेटर के माध्यम से दिया जाता है, जो तरल को सीधे रक्तप्रवाह में ले जाता है, जहां शरीर इसे अवशोषित करता है।

आइए अब हम पैरेटरल और एंटेरल पोषण विधियों के बारे में विस्तार से चर्चा करें।

7.7.1 पैरेटरल पोषण (Parenteral Nutrition)

जब जटरांत्र संबंधी मार्ग स्वास्थ्य और बृद्धि को बनाए रखने के लिए पर्याप्त सूक्ष्म पोषक तत्व और/या जल और इलेक्ट्रोलाइट्स के अंतर्गत, पाचनऔर अवशोषण में असमर्थ होता है, तो पोषक तत्वों को पहुँचाने के पैरेटरल तरीके का उपयोग किया जाता है। पैरेटरल पोषण को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है:

"खाने और पाचन की सामान्य प्रक्रिया को बाईपास करते हुए, ज्वक्ति को अंत:शिरा माध्यम से पोषण देना पैरेटरल पोषण कहलाता है।"

अंत:शिरा पोषण पैरेटरल पोषण प्रदान करने की एक विधि है। डेक्स्ट्रोज़, अमीनो अम्ल, विटामिन, खनिज त्वचा और वसा के विलयन नसों के माध्यम से रोगी को दिए जाते हैं। लेकिन इस विधि के अन्य पोषक तत्व और ऊर्जा का सेवन सीमित होता है और इसका उपयोग केवल कुछ दिनों के लिए किया जा सकता है।

पैरेटरल पोषण को प्रकार के होते हैं:

1. अमूर्त पैरेटरल पोषण (Total parenteral nutrition)- जब शरीर, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज और तरल पदार्थ सहित सभी पोषक तत्वों की आपूर्ति अंत:शिरा मार्ग से की जाती है।

2. अंशिक पैरेटरल पोषण (Partial parenteral nutrition)- जब केवल कुछ पोषक तत्व जैसे डेक्स्ट्रोज़ या त्वचा लयनकु त्विच किया जाता है।

पैरेटरल पोषण की सिफारिश केवल गंभीर स्थिति में की जाती है जब बाहरी मार्ग से पर्याप्त पोषक तत्व उपलब्ध नहीं कारण या जब बाहरी रूप से पोषण अपर्याप्त, अप्रभावी, अवांछनीय या असंभव हो। आघात, जलने, गंभीर अवशोषण सिंद्रोम, आंतों की रक्तवर्ध, अनिवंशति अवसार,
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

कोमा की स्थिति, जटांत्र संबंधी सर्जरी, तीन्र हेपाटाइटिस आदि के मामले में पैरेण्टल पोषण का उपयोग किया जाता है।

पैरेण्टल पोषण विलयन की संरचना

इसमें शर्करा (ऊर्जा के लिए), प्रोटीन (मांसपेशियों की ताकत के लिए), वसा, विटामिन, इलेक्ट्रोलाइट्स और सूक्ष्म तत्वों के संयोजन शामिल हैं। पैरेण्टल पोषण की पोषण संबंधी सर्चना करते समय निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए:

• लक्ष्य वृद्धि के संबंध में वजन की वृद्धि
• नैदािनक मापदंडों के अनुसार पोषण संरचना
• विभिन्न सूक्ष्म पोषक तत्वों का अनुशासित सेवन
• विशेष स्थिति अंतिमितित रोग, रोग की गंभीता और दुःखता और वर्तमान पोषण स्थिति।

पैरेण्टल पोषण की जटिलताएं: इनमें चयापचयी और आंपिस संबंधी जटिलताएं सबसे आम हैं। केयेटर संबंधित समस्याओं और गणना हुटियों को निरंतर नियंत्रण की आवश्यकता होती है। लंबे समय तक पैरेण्टल पोषण के उपयोग में पित्रसंग्रह (cholestasis) जैसी समस्याओं को देखा जाता है। पैरेण्टल पोषण की कुछ सामान्य जटिलताओं को नीचे मूलबद्ध किया गया है:

• केयेटर का गलत विश्लेषण
• हत्य में छेद होना (Cardiac perforation)
• वक्ष नलिकां (Thoracic duct) में चोट
• केयेटर प्रवेश स्थल पर संक्रमण
• प्रविष्टि के दौरान संसूचना
• विलयन संसूचना
• इलेक्ट्रोलाइट्स असंतुलन
• निम्न तथा उच्च कैल्सिमिया और फॉसफेटिमिया
• सूक्ष्म खनिज और आवश्यक वसीय अम्ल की कमी आदि।

पैरेण्टल पोषण के बारे में विस्तार से चर्चा करने के बाद आइए अब एंटरल पोषण के बारे में जानें।

7.7.2 एंटरल पोषण (Enteral Nutrition)
आत्मनिर्भर एवं उपचारात्मक पोषण

यह पोषण उन रोगियों को पर्याप्त पोषण प्रदान करने की एक विधि है जो मौखिक रूप से पर्याप्त पोषण प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। एन्टरल पोषण की शुरुआत तब की जाती है जब आत्म आंशिक रूप से काम कर रही हो। शारीरिक या चयापचयी रूप की अपेक्षा जटांत्र मार्ग शरीर को पोषण प्रदान करने का अधिक उचित मार्ग है। यह पोषण प्रदान करने का सबसे अधिक अधिमानित तरीका है जब रोगी मौखिक रूप से भोजन लेने में सक्षम नहीं है। इसके दुष्प्रभाव पैन्ठरल पोषण की तुलना में कम गंभीर और सीमित हैं। एनरेशिया, निगलने और च्यांच्यांचे विकार, तीन चयापचय तनाव, समयपूर्वता, कोमा, ढोंटी आंत आदि ऐसी स्थितियां हैं जिनमें पैन्ठरल पोषण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार पैन्ठरल पोषण को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है:

"जटांत्र संबंधी मार्ग या आतं तक पहुंच के माध्यम द्वारा पोषण सहायता का प्रावधान"

पैन्ठरल पोषण को आमतौर पर ट्रूब फीडिंग के रूप में जाना जाता है। एन्टरल पोषण को प्रदान करने के कई तरीके हैं। यह ट्रास ऑर्टर (भोजन का मौखिक अंतग्रहण), ट्रास नेशल (नाक के माध्यम से फीडिंग ट्रूब का निवेश) या परस्पूटेनियस ट्रास्टेंसियस्टिक मार्ग (पेट के माध्यम से) आदि। पैन्ठरल पोषण के कुछ निम्न लाभ हैं:

- निवेशन में आसान,
- कम चयापचयी और संक्रामक जटिलताएं,
- आंतों की समग्रता और गतिशीलता का संरक्षण,
- पेट की गुहा या परसंचरण में बैक्टीरिया के व्यापन में कमी,
- यह अधिक पूर्ण पोषक तत्व, सूक्ष्म तत्व और लघु श्रृंखला वसीय अम्ल तथा रेशा प्रदान करता है,
- अनोखास और चंद राव को बढ़ावा देता है,
- अंत-वाती कारों और तंत्रिका कारों को बढ़ावा देता है, जो बढ़ते में जटांत्र संबंधी मार्ग की शारीरिक और प्रतिक्रियात्मक असंत्तान को बढ़ावा देने में मदद करता है।

एन्टरल पोषण सूत्र: एन्टरल पोषण सूत्र का चयन हमेशा रोगी की व्यक्तिगत शारीरिक स्थिति के अनुसार होता है। सूत्र का चयन निम्नलिखित बिंदुओं पर निर्भर करता है:

- रोगियों की चयापचय संबंधी आवश्यकताएं
- रोगियों के जटांत्र पथ की स्थिति
- एन्टरल पोषण सूत्र की विशेषताएं
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

• एन्टरल पोषण सूत्र की पोषक संरचना
• लागत प्रभावशीलता

एन्टरल पोषण की जटिलताएँ: एन्टरल पोषण के उपयोग से जुड़ी सामान्य जटिलताएं निम्न हैं:

• ट्यूब में रक्तचाव, रिसाव, ब्रणोपत्ति (ulceration) आदि जैसी समस्याएं
• निवेशन की समस्याएं जैसे ट्यूब का विस्थापन, संदूषण आदि
• जठरांत्रीय जटिलताएं जैसे दस्त, उल्टी, कब्ज, सूजन आदि
• चयापचय संबंधी जटिलताएं जैसे अधिकममजलशोजन/निर्यमलकरण, उच्च तथा निम्न रक्त शरकरास्तर।

## 7.8 सारांश

इस सुविधा में आपने आहार के विभिन्न पहलुओं के बारे में जाना जो कि अस्पताल में निर्धारित किए जाते हैं। इस सुविधा में आहार चिकित्सा, इसकी परिभाषा, सिद्धांत और रोगी की देखभाल के लिए आहार के अनुसूचक के विभिन्न तरीकों पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई। हमने पैरेन्टरल और एन्टरल पोषण के बारे में विस्तृत से चर्चा की, जो गंभीर रूप से बीमार रोगियों को दी जा रही एक विशेष आहार विधि है। एन्टरल पोषण में आहार सीधे या तो पेट या आंत में कीडिंग ट्यूब के माध्यम से पहुंचाया जाता है, जबकि पैरेन्टरल पोषण में, पोषक तत्वों को अंत:शिरा रूप से पहुंचाया जाता है और इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब विभिन्न कारणों से जठरांत्र संबंधी मार्ग को बाईपास करना पड़ता है।

## 7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

**अभ्यास प्रश्न 1**

इकाई का मूल भाग देखें।

**अभ्यास प्रश्न 1**

इकाई का मूल भाग देखें।

**अभ्यास प्रश्न 1**

इकाई का मूल भाग देखें।
7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उपचारात्मक आहार को परिभाषित कीजिए। आहारीय चिकित्सा के सिद्धांतों की समस्तार चर्चा कीजिए।

2. अस्पताल में रोगियों के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले आहार के प्रकारों की व्याख्या कीजिए।

3. विशेष आहार विधियाँ क्या हैं? बिस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
इकाई 8: जटरांत्रिक रोगों में आहार

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 अपच/बदहजमी (Indigestion/dyspepsia)
8.4 आंत्र गैस और उदर स्फीति (Intestinal gas and flatulence)
8.5 कूल (Constipation)
8.6 पैटिक अल्सर (Peptic Ulcer)
8.7 अंतिसर (Diarrhoea)
8.8 उदर का कूलसर (Carcinoma of the stomach)
8.9 गैस्ट्रिक सर्करी/आमाशयिक शत्य चिकित्सा (Gastric surgery/Gastrectomy)
8.10 लैक्टोज असहिष्णुता (Lactose intolerance)
8.11 क्षीरी आंत्र विकार (Irritable bowel syndrome)
8.12 सारांश
8.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.14 अवधारत्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम जटरांत्रिक पथ के रोगों और विकारों के बारे में चर्चा करेंगे। ये विकार पेट की परेशानी, सूजन, फुलाव, मतली और एनोरेिअज़ा जैसे हल्के लक्षणों के साथ अपच/बदहजमी जैसे सरल विकार हो सकते हैं। दूसरी ओर ये हल्के से तीव्र लक्षण जैसे पेट में दर्द, गैस, फुलाव, आमाशय का दरी से खाली होना युक्त गम्भीर विकार जैसे कुआशोषण सिंड्रोम, पैटिक अल्सर, कूलसर आदि भी हो सकते हैं। इस इकाई में हम कुछ सामान्य जटरांत्रिक विकारों और रोगों के कारणों, महत्वपूर्ण संकेतों और लक्षणों और आहार प्रबंधन के बारे में अभ्यास करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप:

• रोगों की स्थिति और उनके कारणों के बारे में जानेंगे;
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• जठरांत्र संबंधी मार्ग के कारण पर रोगों के प्रभाव को समझ पाएंगे;
• इन रोग स्थितियों के अनुरूप नियमित या सामान्य आहार के संशोधन को जानेंगे; तथा
• जठरांत्र संबंधी मार्ग के विकारों के आहार और पोषण प्रबंधन के सिद्धांतों की जानकारी ले पाएंगे।

8.3 अपच/बदहजमी (Indigestion/dyspepsia)

हम में से अधिकांश द्वारा मतली, हदाह, अधिजटर दर्द, बेचैनी और फुलाव जैसे जठरांत्रिय लक्षणों को अनुभव किया जाता है जो आम तौर पर खाद्य पदार्थों के सेवन से जुड़ा होते हैं। किसी के लिए यह अल्पकालीन और कम दर्दनाक हो सकता है और जबकि कुछ के लिए बार-बार और बहुत दर्दनाक हो सकता है। ये लक्षण आमतौर पर लंभे एक चौथाई वयस्कों द्वारा सूचित किए जाते हैं। यह आम तौर पर खाद्य पदार्थों के अपच के कारण होता है और इसे आमतौर पर अपच और डिस्पेसिया के रूप में जाना जाता है। यदि अपच के लक्षण बहुत लंबे समय तक बने रहते हैं तो यह गैस्ट्राइटिस (पैडिटिक म्यूकोसा की सूजन), पैडिटिक अल्सर, पिताशय की बीमारी या कैंसर आदि जैसी कुछ समस्याओं से संबंधित हो सकता है।

अपच के दो प्रकार की होती है: कार्यात्मक (functional) और आंगिक (organic).

कार्यात्मक अपच में आहार नली के किसी भी हिस्से में कोई सूचनात्मक परिवर्तन नहीं होता है। मूल रूप से यह मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक लक्षणों के कारण हो सकती है।

आंगिक अपच गुरु और हद रोग के कारण होती है।

अपच के निम्न कारक हैं:

• पाचन तंत्र में उचित पाचन और भोजन के अवशोषण में विफलता,
• पेट का अल्सर, अन्तर प्रतिवाह (acid reflux) रोग, गैस्ट्राइटिस, पैडिटिक अल्सर, पिताशय की बीमारी या कैंसर,
• लैक्टोज असहिष्णुता की तरह कुअवशोषण सिंड्रोम,
• आहार, दोषपूर्ण भोजन की आदतें, कुछ खाद्य पदार्थों की असहिष्णुता, तनाव और अन्य जीवन शैली के कारक।

संकेत और लक्षण: अपच दीघकालीन या तीन घंटे तक अधिक हो सकता है और लक्षणों में हदाह, भोजन के संबंधित ऊपरी पेट की प्रेशनी, सूजन, फुलाव, मतली और एनोसिसिया शामिल हैं। ऐसे लक्षण
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

गैस्ट्रोइंसोफेगल फिल्क्स, पेटिक अल्सर और पेट या अन्यायत्व और पित्प पथरी के केसर में भी आम हैं। अपच की सामान्य जटिलताओं में वजन में कमी और सामाजिक न्यवहार में बदलाव शामिल हैं। अपच के लक्षणों और असुविधाओं के कारण लोग अक्सर भोजन छोड़ देते हैं जिससे वजन कम हो सकता है।

अहार प्रविधि: अपच के आहार प्रविधि में तत्वों या खाद्य पदार्थों की आवश्यकता के लिए भी बहुत ही परिवर्तन के कारण आवश्यकता नहीं होती है। भोजन के स्वरूप को बदलना और खुच्च खाद्य पदार्थों के निर्माल से कभी-कभी लक्षणों को कम करने में मदद मिल सकती है। अपच की स्थिति में सामान्य और मीठा आहार निर्धारित हैं। खाद्य पदार्थ जो कभी-कभी गैस के अधिक उत्पादन के लिए जिम्मेदार होते हैं जैसे साबुत दाल, राजमा, छोले, काली मसूर और दूध के पदार्थ जो कभी गैस को निर्धारित बना जाता है यह उबकाई का कारण बन सकती है। मूली, फूलगोभी, पताकोभी और ब्रॉकोली का कुछ खाद्य इनके संबंध में मदद कर सकता है।

लैक्टेज असहिष्णुता बालों के लिए भोजन का सेवन करने पर अपच की संभावना हो सकती है। इनमें भी के मामलों में लैक्टेज का प्रतिबंध (लैक्टेज युक्त दूध और दूध उत्पादों का उन्मूलन) संकेतों और लक्षणों में सुधार करता है। अहार, खिलाने के स्वरूप और जीवन शैली संशोधनों से संबंधित कुछ निर्धारित बिंदु हैं जिन्हें ध्यान में रखना चाहिए:

• नियमित समय पर भोजन करें, शराब और ऐसे खाद्य पदार्थों से बचें जो असुविधा का कारण बनते हैं,
• भूख लगने पर भोजन का सेवन करें, जब भोजन न चाहिए।
• खाद्य पदार्थों को चमड़े के लिए कुछ समय दें, खाद्य पदार्थों को केवल निगलने नहीं।
• सोचे से ठीक पहले खाना न खाएं, बिस्तर पर जाने से 1-2 घंटे पहले भोजन करें।
• कार्य अनुसूची को निर्धारित करें और तनाव को कम करने का प्रयास करें।
• धूम्रपान करने से बचें और ऐसी दवाओं से सेवन से बचें जो आहार नली में जलन करती हों।

जटांत्र संबंधी मार्ग के विकार अपच के बारे में बिस्तर से चर्चा करने के बाद, आईए आंतों की गैस और पेट फूलने के बारे में जानें।
8.4 आंत्र गैस और उदर स्फीति (Intestinal gas and flatulence)

जटरांत्र संबंधी माग में भोजन विभिन्न पोषक तत्वों के पाचन और अवशोषण के लिए एक भाग से दूसरे भाग में जाता है। पाचन और अवशोषण के दौरान कुछ गैस पाचन नली में उत्पन्न होती है। इन आंत्र गैसों में आमतौर पर नायट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड और कुछ मामलों में मीथेन शामिल होती हैं। अधिकांश समय वह एक सामान्य क्रिया है और पाचन तंत्र में प्रवाह के दौरान यह गैस रक्त में अवशोषित हो सकती है और पेफड़ों, मुंह तथा मल द्वारा निष्काशित हो सकती है। 

आम तौर पर 200 मिलीलीटर गैस जटरांत्र माग में मौजूद होती है और मानव आम तौर पर हर दिन 700 मिलीलीटर गैस उत्सर्जित करता है। कुछ मामलों में पाचन नली में उत्पन्न गैस जमी हो जाती है और असुस्थिता पैदा करती है। बढ़ी हुई मात्रा और गैस के पारित होने की आवश्यकता (पेट फूलना) के कारण मरीजों को अत्यधिक गैस की शिकायत होती है। आंत्र गैस और उदर स्फीति के लक्षणों में निम्न शामिल हैं:

- पेट में मरोड़,
- ऐंठन और फुलाव,
- अत्यधिक गैस और पेट फूलने की शिकायत

पाचन नली में गैस की उपस्थिति के कई कारण हो सकते हैं। वे हैं:

- निष्क्रियता,
- जटरांत्र माग की घटी गतिशीलता,
- एरोफेजिया (Aerophagia) - खाद्य पदार्थ सेवन के दौरान हवा को निगलना,
- खाद्य पदार्थों का पाचन,
- जटरांत्र विकार,
- पेट और आंत में कलीहाइड्रेट खाद्य पदार्थों का बैक्टीरिया द्वारा क्रियान,
- क्रियान योग स्वस्थीटर का कु आवशोषण,
- भोजन करने की दोषपूर्ण आदतें जैसे जल्दी खाना, कम चबाना, भोजन करते समय मुंह खुला रखना।
उपरी आंत में गैस मुख्य रूप से एफेजिया और कुछ हद तक खाद्य पदार्थों के पा चन के दौरान रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण होती है। आम तौर पर ये गैसें भोजन में पृथक होते हैं और बुखार के तौर पर उपचार को करती है। कभी-कभी पेट और छोटी आंत में ब्रेक्टोरियल अतिवृद्धि होती है, जो कभी ही मात्रा में गैस का उपयोग करती है। उत्पादित गैसों की मात्रा और प्रकार बुखार में सूक्ष्मजियों के प्रकार और मिश्रण पर निर्भर करती है। बड़ी मात्रा में आहारीय रेशा, प्रतिरोधी स्टार्च, फ्रूक्टोज या अल्कोहोल शर्करा और लैक्टोज असहीन्यता के परिणामस्वरूप गैस उत्पादित हो सकती है।

आंत गैस और उदर स्विंगति का प्रबंध

गैस के उत्पादन या पाचन नली के माध्यम से गैस को पारित करने में कठिनाई के आधार पर इसका प्रबंधन किया जाता है। यदि गैस के पारित होने में कठिनाई तथा एंडन की है तो व्यायाम द्वारा डकार या मलाशय के माध्यम से गैसों के निष्कासन में मदद मिल सकती है। यदि समस्या अत्यधिक गैस के उत्पादन से सम्बंधित है तो निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है:

- काफीहाइडेट युक्त खाद्य पदार्थ जैसे फलियां, पुलचन्द रेशा, प्रतिरोधी स्टार्च, फ्रूक्टोज और अल्कोहोल जैसे सबरल शर्करा का कम सेवन किया जाना चाहिए।
- ऐसी दालें जिनमें स्टेक्ट्रेज और रैफिनेज की मात्रा अधिक होती है, उनसे बचना चाहिए।
- आहार में ब्रेड, बेकरी उत्पाद, स्टार्च वाली सब्जियां की मात्रा कम होनी चाहिए, व्याख्या कि कभी-कभी हजार नहीं होती हैं और किष्किष होकर समस्या पैदा कर सकते हैं।

अब, हम जटांत्र संबंधी मार्ग की एक बहुत ही आम समस्या के बारे में चर्चा करेंगे जो कब्ज की है।

8.5 कब्ज (Constipation)

अच्छे स्वास्थ्य के लिए मल का निष्कासन प्रतिदिन होना आवश्यक है। कब्ज की स्थिति में मल का निष्कासन ठीक प्रकार से नहीं होता। इसमें मल बहुत कम मात्रा में एवं कभी-कभी कठिनाई से होता है। यह कभी-कभी 2-3 दिन बाद भी होता है।

कब्ज का प्रकार का होता है:

- एटॉनिक (Atonic) कब्ज
- स्पास्टिक (Spastic) कब्ज

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 151
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

एटॉिनक कब्ज

इसमें मलाशय की संवेदनशीलता कम होने के कारण मलाशय मल पदार्थों से पूर्ण होने पर भी मल उत्सर्जन की कमी का अभाव देखा जाता है। इसका मुख्य कारण आंतों की संकुचन शक्ति, जो सामान्यतः तीनों होती है, कब्ज में कमजोर हो जाती है। ऐसा कब्ज प्रायः वृद्धि, मोटे व्यक्तियों, बुखार, गर्भावस्था तथा शल्य चिकित्सा के पश्चात् देखा जाता है। भोजन सम्बन्धी गलत आदतें और मल उत्सर्जन की अनियमित आदतें एटॉिनक कब्ज का सर्वाधिक प्रमुख कारण है।

स्पास्टिक कब्ज

इसमें बड़ी आंत की दीवार की रचना में ऐसा परिवर्तन आ जाता है कि जिससे आंत अत्यधिक क्रियाशील हो जाती है और मल आगे बढ़कर नहीं निकल पाता। यह कब्ज मानसिक तनाव, अत्यधिक चाय, काफी, मंदिरा आदि तथा दवाइयों के प्रयोग के कारण हो जाता है।

कब्ज के लक्षण

• बैचेनी
• झिर दर्द
• कार्य करने में असुविधा
• जीभ पर सफेद पर्चा जमना
• पेट में गैस बनाना
• शरीर का तापमान बढ़ना
• भूख न लगना
• मुंह से बदबू आना

कब्ज के कारण

कब्ज के सामान्य लक्षण निम्न हैं-

• शौच जाने की अनियमित आदत का होना।
• अप्याय मात्रा में फल शब्दिजों व रेइश्यार पदार्थों का अभाव दीर्घकाल में कब्ज की स्थिति उत्पन्न कर सकता है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

• उचित मात्रा में व्यायाम न करने से या क्रियाशीलता में अत्यधिक कमी के कारण आंतों की मसामूरों की क्रियाशीलता ठीक प्रकार से नहीं हो पाती है जिससे मल का निष्कासन सही रूप से नहीं हो पाता।
• अनियमित आदतें जैसे हर समय जलदी में रहने से, जलदबाजी का जीवन व्यतीत करने से, अनियमित रूप से भोजन करने से और पर्याय विश्राम न मिलने के कारण भी कब्ज हो जाता है।
• पेय या इत्य पदाथों का कम मात्रा में लेना भी कब्ज का महत्वपूर्ण कारण है।
• मानसिक तनाव, चिंता, घबराहट, अस्थिरता भी कब्ज उत्पन्न करते हैं।
• अत्यधिक चाय, कॉफी, शराब या तम्बाकू का सेवन कब्ज को बढ़ावा देता है।
• आंतों का कैन्सर भी कब्ज का कारण हो सकता है।
• वीमारी में दवाइयों के प्रयोग से भी कब्ज हो सकता है।
• कुछ पदाथ पदाथ को भार प्रदान कर निष्कासन में सहायता करते हैं, इन्हें रेचक (laxative) कहते हैं। जैसे- इसबगोल। इनका अत्यधिक बन सहित प्रयोग भी कब्ज उत्पन्न करता है।

कब्ज में आहारीय उपचार

कब्ज में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकताओं में समानत: कोई अन्तर नहीं आता है। अतः कब्ज में रोगी को सामान्य आहार ही देते हैं। सिर्फ आहार में रेशा व इत्य पदाथों की मात्रा को बढ़ा दिया जाता है।

रेशा

उच्च रेशों वाले भोज्य पदाथों का ज्यादा सेवन करना चाहिए जैसे-साबुत अनाज, साबुत दालें, हरी पत्तेदार सब्जियां व फल। रेशयुक्त भोज्य पदाथ पानी को अवशोषित कर मल को निकलने में सहायता प्रदान करते हैं।

इत्य

रोगी को अधिक से अधिक पेय/इत्य पदाथों का सेवन करना चाहिए जिससे मल कड़ न हो। सामान्यत: 8 से 10 गिलास पानी प्रतिदिन पीना चाहिए। पीने के पानी के अलावा इत्य पदाथ नीबू पानी, शरबत आदि के रूप में भी लिया जा सकता है। प्रत: काल हल्के गर्म पानी में नीबू का रस डालकर पीने से कब्ज में लाभ होता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

इसके अलावा रोजाना घूमने व नियमित व्यायाम से भी कमज़ोर दूर होता है।

8.6 पैप्टिक अल्सर (Peptic Ulcer)

आमाशयक तंत्र (Alimentary Tract) के वह भाग जो आमाशयक अम्ल के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आते हैं, की श्रृंखलिक हँसी या पाये जाने वाले खुले घावों को पैप्टिक अल्सर कहते हैं।

पैप्टिक अल्सर के प्रकार

आमाशय तंत्र के पथ पर उपस्थिति के आधार पर दो प्रकार के अल्सर देखे जाते हैं -

• आमाशय का पैप्टिक अल्सर (Gastric Ulcer)- यह आमाशय में अथवा आहार नलिका के निचले सिरे पर पाया जाता है। इस प्रकार के अल्सर में आमाशय की अन्तः त्वचा अम्ल के प्रति प्रतिरोधक क्षमता खो देती है जिससे आमाशय की श्रृंखलिक हँसी अम्ल की क्रिया के फलस्वरूप गलत जाती है। फलस्वरूप आमाशय की दीवारों पर गड्डे व छेद बन जाते हैं।

• पक्वाशय का पैप्टिक अल्सर (Duodenal Ulcer)- यह पक्वाशय (छोटी आंत के अग्रभाग) में उत्पन एवं विकसित होता है। कोशिकाओं में अम्ल उत्पादन तथा उत्पन अम्ल की मात्रा में वृद्धि के कारण यह अल्सर होता है।

पैप्टिक अल्सर के लक्षण

• आमाशय के पैप्टिक अल्सर में भोजन के पश्चात तथा पक्वाशय के पैप्टिक अल्सर में आमाशय के खाली होने पर पेट में अत्यधिक दर्द होना। आहार नली में जलन व दर्द का अनुभव होता है।

• वजन कम होना

• अतिसार वाला मुंह में आना

• गर्भीर ब्याह (उल्टी) आना। कभी-कभी व्याह में रक्त का आना भी देखा जाता है (आमाशय के पैप्टिक अल्सर की स्थिति में)।

• मल का काला होना, जो कि मल में रक्त की उपस्थिति को दर्शाता है (पक्वाशय के पैप्टिक अल्सर की स्थिति में)।

पैप्टिक अल्सर की जटिलताएं
पैदानक अल्सर काफी कठिनाई एवं दर्दनाक रोग है। इसका तुरचन्न निवारण करना चाहिए, परन्तु यदि यह लम्बे समय तक चले तो आमाशय की दीवारों में बड़े व आर-पार छेद हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में भोजन ग्रहण करने पर भोजन पदार्थ आमाशय में पहुँचकर छेदों द्वारा निकल जाता है व शरीर के अन्य आंतरिक अंगों आदि में पहुँच जाता है। यह अत्यन्त कठिनाई व खतरनाक होता है। ऐसे में तुरचन्न शारीरिक चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

पैदानक अल्सर के कारण

पैदानक अल्सर किसी भी उम्र में हो सकता है परन्तु यह सबसे अधिक 45-55 वर्ष की उम्र में पाया जाता है। महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों में पैदानक अल्सर अधिक देखा जाता है। आमाशय के पैदानक अल्सर में आमाशय की दीवार की अम्ल के त्रित परिवर्तनक तत्वों की वृद्धि हो जाती है तथा पक्षावश्य के पैदानक अल्सर में अम्ल के स्वास्थ्य में वृद्धि हो जाती है। अतः अम्ल के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले निम्न कारण पैदानक अल्सर के कारक हैं-

<table>
<thead>
<tr>
<th>अम्ल के खाब को बढ़ाने वाले कारक</th>
<th>अम्ल के खाब को घटाने वाले कारक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>• रासायनिक उत्तेजक (Chemical Stimulants) - मिर्च, मसाले, मंदिरा, अम्लीय भोजन पदार्थ</td>
<td>• अधिक मात्रा में वसायु क व तले भोजन पदार्थ, मेवे आदि</td>
</tr>
<tr>
<td>• आकर्षक व पसंदीदा भोजन पदार्थ</td>
<td>• ज्यादा मात्रा में भोजन करना तथा भोजन को वर्तमान करना</td>
</tr>
<tr>
<td>• प्रसन्नता व सन्तुष्टि की स्थिति</td>
<td>• स्वाद व देखने में अनाकर्षक भोजन पदार्थ</td>
</tr>
<tr>
<td>• भोजन करते समय अनुकूल वातावरण</td>
<td>• बिना पसंद वाले भोजन पदार्थ</td>
</tr>
</tbody>
</table>

इसके अलावा कुछ अन्य प्रमुख कारण निम्न हैं-

• वंशानुक्रम - प्रायः पैदानक अल्सर के रोगी के परिवार अथवा निकट सम्बन्धियों में पैदानक अल्सर देखा गया है। ’O’ रक्त समूह वाले व्यक्तियों में प्रायः पक्षावश्य का पैदानक अल्सर देखा जाता है।

• व्यवसाय - कुछ व्यवसाय/पेशे जैसे डॉक्टर, व्यवसायी, तथा ऊँचे पदों पर पदासीन व्यक्तियों की जिम्मेदारियों अधिक होने से तनावग्रस्तता व भोजन सहजाती आदतों में अनियमितता के कारण पैदानक अल्सर देखा जाता है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- **व्यक्तित्व-** बहुत अधिक संवेदनशील, अधिक गुप्सा करने वाले व्यक्ति पैपिटिक अल्सर से जल्दी प्रभावित होते हैं। इसके अलावा तनाव, चिंता, डर, व अस्थिरता भी पैपिटिक अल्सर को बढ़ावा देते हैं।

- अत्यधिक चाय, कॉफी, शराब, धूम्रपान व तम्बाकू का प्रयोग भी आमाशय की श्रृंखलिक झिल्ली को क्षतिग्रस्त करते हैं। फलस्वरूप पैपिटिक अल्सर की समाधानाएं बढ़ जाती हैं।

- **भोजन सम्बन्धी आदेश-** जल्दी-जल्दी खाना, कम चबाकर खाना, लम्बे समय तक उपवास करने पर या दो भोजनों के मध्य अधिक अन्तर पैपिटिक अल्सर उत्पन्न कर करता है।

- **हैलिकोब्यूक्टर पाइलोरी संक्रमण (Helico bector pylori infection)-** इस संक्रमण में आमाशय की श्रृंखलिक झिल्ली की प्रतिरोधक क्षमता घटती है। अतः इस संक्रमण से प्रभावित होने पर पैपिटिक अल्सर प्राप्त देखा जाता है।

**पैपिटिक अल्सर का आहारिय उपचार**

पैपिटिक अल्सर में आहारिय उपचार की अत्यधिक आवश्यकता होती है। पहले इसके आहारिय उपचार में सिर्फ़ फीका भोजन ही दिया जाता था। परन्तु चर्चा में काफी संशोधन के बाद पैपिटिक अल्सर के आहारिय उपचार में भोजन पदार्थों को वर्जित करने से अधिक रोगी की पोषक तत्व की पूर्ति करने पर बल ज्यादा दिया जाता है।

**ऋजु**

पैपिटिक अल्सर की अवस्था में रोगी कुपोषित हो जाता है। इसलिए ऋजु की आवश्यकता बढ़ जाती है। हालांकि ऋजु यह स्थिति में बिस्तर पर लेंटा रहता है। अतঃ इस के बाद शारीरिक स्वास्थ्य भी सामान्य ऋजु द्वारा ही बढ़ी हुई आवश्यकता को पूरा कर लेता है।

**प्रोटीन**

यान्त्रिक भरने के लिए रोगी को उच्च प्रोटीन वाला आहार देना चाहिए। प्रोटीन की मात्रा 50 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है। मासहारी प्रोटीन स्रोतों को कम देना चाहिए क्योंकि इससे भी अम्ल ज्यादा बनता है। दूध देने से रोगी को कुछ देर के लिए राहत मिलती है परन्तु दूध में मौजूद उच्च कैल्शियम की मात्रा अम्ल के साथ को बढ़ावा देती है अतः ज्यादा दूध का सेवन विपरीत स्थितियां उत्पन्न करता है। अण्डे तथा अन्य प्रोटीन के स्रोत रोगी के आहार में पर्याप्त मात्रा में चाहिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 156
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

काबोहाइड्रेट

काबोहाइड्रेट की अधिक मात्रा देने से ऊर्जा की बढ़ी हुई आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। अतः काबोहाइड्रेट अधिक मात्रा में देने चाहिए।

वसा

वसा आमाशय को देर तक भरा रखती है अतः वसा की अधिक मात्रा देना पैटिक अल्सर में उपयोगी होता है। आसानी से पचने वाले वसा के स्रोत जैसे मस्खन आदि रोगी को जरूरत मात्रा में देने चाहिए।

विटामिन

पात्रों के जलदी भरने तेल रोगी को विटामिन सी देना चाहिए। इसके अलावा रक्तसार की स्थिति में लौह लवण के उचित अवशोषण के लिए भी विटामिन सी की आवश्यकता होती है।

खनिज लवण

पैटिक अल्सर में रोगी को कॉल्ल लवण उचित मात्रा में देना चाहिए।

पैटिक अल्सर में रोग उत्पन्न होने से लेकर पूर्णतः स्वस्थ होने तक की अवस्था को तीन भागों में बांटा गया है।

- पहली अवस्था- जब रोगी को तीव्र पीड़ा होती है।
- दूसरी अवस्था- इसमें रोग के लक्षणों में कमी तथा स्थिति में सुधार देखा जाता है परन्तु रोगी अभी भी अस्थित पर होता है।
- तीसरी अवस्था- इसमें रोगी पूर्णतः स्वस्थ हो जाता है परन्तु भोजन के लिए कुछ सावधानियां तथा आहार सम्बन्धी परहेज करता है।

पैटिक अल्सर की तीन अवस्थाओं में आहार

<table>
<thead>
<tr>
<th>पहली व दूसरी अवस्था</th>
<th>तीसरी अवस्था</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध पदार्थ जैसे दूध व फलों का रस</td>
<td>पहली व दूसरी अवस्था के सभी भोजन पदार्थ</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध पदार्थ जैसे दही,लास्सी आदि</td>
<td>अच्छी तरह से पके हुए अनाज से बने भोजन पदार्थ</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दूध व अण्डे से बने सभी भोजन पदार्थ</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
<table>
<thead>
<tr>
<th>रिफाइन्ड अनाज और उनसे बनी चीजें</th>
<th>सहसंबंधित के अनुसार कच्ची सब्जियाँ व फल</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>धुली दाल</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>पका हुआ अण्डा</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>अच्छी तरह पकी हुई सब्जियाँ व फल</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य हल्का आहार जैसे - पतली खिचड़ी</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

स्रोत: Textbook of Nutrition and Dietetics, कुमुद खना द्वारा लिखा गया।

पैंटिक अल्सर रोगियों के लिए भोजन सम्बन्धी सुझाव

- थोड़ा -थोड़ा भोजन समय-समय पर ता।
- भोजन धीरे-धीरे करें।
- भोजन शांत वातावरण में करें।
- अत्यधिक चाय, काफी, शराब न लें।
- धूसपान न करें।
- अत्यधिक मिर्च मसाले का सेवन न करें।

बर्जित भोज्य पदार्थ

- अत्यधिक मिर्च मसाले
- अचार, पापड़, चटनी
- तेज चाय, कॉफी
- तेज गन्ध वाली सब्जियां जैसे प्याज, तहसुन, पत्तांभी आदि।

8.7 अतिसार (Diarrhoea)

मल का अधिक मात्रा में अधिक पत्ता तथा बार-बार निकलने की अवस्था को अतिसार कहते हैं।
इसमें मल पदार्थ बड़ी अंत बाले भाग में इतनी शीर्षता से आगे बढ़ते हैं कि रुचिव पदार्थों को अवशोषित होने का मौका ही नहीं मिल पाता जिससे पूर्णतः न बना हुआ मल ही उत्पादित हो जाता।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

है। अतिसार में उचित देखभाल न होने पर तीन रोगी में जल की कमी हो जाती है जिसके कारण रोगी खासकर नवजात शिशुओं तथा छोटे बालकों की मृत्यु हो सकती है।

तीन अतिसार (Acute Diarrhoea)

तीन अतिसार अचानक आरंभ होता है इसमें दस्त बहुत तेजी से होते हैं। मल उत्सर्जन की आवृत्ति इतनी अधिक होती है कि रोगी एक घण्टे में ही कई बार मल निकालता कर देता है। यद्यपि यह अवस्था कम देर अथवा 24-48 घण्टे तक हो रहती है परंतु इसमें जल की अत्यधिक कमी हो जाती है जिससे रोगी का शरीर अति शिथिल व कमजोर पड़ जाता है।

लक्षण (Symptoms)

• बहुत तेजी से पानी की तरह पतला मल बार-बार आना।
• पेट में दर्द व मरोड़ होना।
• शायरिक कमजोरी
• वमन
• बुखार

कारण (Causes)

तीन अतिसार के निम्न प्रमुख कारण हैं-:
• अधिक मसाले युक्त आहार
• कीटाणुओं के संक्रमण द्वारा (गन्धों, बासी व अन्य भोज्य पदार्थों द्वारा)
• भोज्य पदार्थों से एल्जार्जी हो जाने पर
• कुपोषण के द्वारा
• भोज्य विषाक्तता (Food poisoning) द्वारा
• भोज्य संदूषण (Food contamination) द्वारा
• कुछ दवाइयों के प्रभाव द्वारा
• अन्य रोगों के लक्षण के रूप में
• मनोवैज्ञानिक कारण जैसे- चिंता, डर, तनाव, अस्थिरता आदि।
नैदािनक एवं उपचारामय पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>पाचन-संस्थान में संक्रमण</th>
<th>वैक्टीरिया अथवा पैरासाइट द्वारा संदृष्ट खाना व पानी</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>खाद्य जनित कारण</td>
<td>खाद्य एलजिया या भोजन सम्बन्धी खराब आदतें जैसे- अत्यधिक भोजन कर लेना। बार-बार खाना आदि</td>
</tr>
<tr>
<td>कुपोषण</td>
<td>क्वाशियोकर, मरामस, विटामिन ए व विटामिन बी समूह की कमी।</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य संक्रमण</td>
<td>हैजा, टायफाइड आदि</td>
</tr>
<tr>
<td>दवाईयों व अन्य रसायनों द्वारा</td>
<td>आसेंसिक, सीसा, मरकरी द्वारा</td>
</tr>
<tr>
<td>मानसिक कारण</td>
<td>तनाव, डर, चिंता, अस्थिरता आदि</td>
</tr>
</tbody>
</table>

जटिलताएं (Complications)

तीत्र अतिसार की अवधि कम होती है परन्तु इसमें शारीरिक जल की कमी बहुत तेजी से उत्पन्न हो जाती है। अगर इस स्थिति में जल व लवणों की तुलना पूर्व न की जाये तो रोगी की हालत और गम्भीर हो जाती है। फलस्वरूप मृत्यु की सम्भावनाएं काफी बढ़ जाती हैं।

आहारीय उपचार (Dietary Treatment)

तीत्र अतिसार में आहारीय उपचार का प्राथमिक उद्देश्य जल व लवणों की पूर्ति करना होता है। इसमें रोगी की अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति का उद्देश्य गौण हो जाता है क्योंकि जल की पूर्ति समय पर न होने से प्राण पात्र स्थिति पैदा हो सकती है। तीत्र अतिसार का उपचार ओरल रीहार्डशेन थेरेपी (Oral rehydration therapy) यानी मुख द्वारा जल के पुर्णस्थापन की चिकित्सा द्वारा होता है।

ओरल रीहार्डशेन थेरेपी (ओआरटी)

यह एक सरल, सस्ती तथा प्रभावशाली चिकित्सा है इसमें उबले पानी, नमक, चीनी का घोल रोगी को देते हैं ताकि जल व खनिज लवणों की कमी जल्द से जल्द से पूरी हो। विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization) द्वारा इसकी विधि भी दी गई है।

- सोडियम क्लोराइड नमक: 3.5 ग्राम
- सोडियम बाइकार्बोनेट: 2.5 ग्राम
पोटेशियम क्लोराइड 1.5 ग्राम
ग्लूकोज 20 ग्राम

उक्त चार लवणों को पीने के साथ 1 लीटर पानी में घोलें। इस घोल को ओरल रीहार्ड्जियन सील्फूराइड (ओ0आर00टी0) कहते हैं। यह घोल रोगी को प्रत्येक दस्त के बाद एक गिलास देना चाहिए। सरकार द्वारा प्रत्येक प्रावधान सिक्का अग्रणी में अतिसार के उपचार के रूप में ओ0आर0एस0 के लवणों का मिश्रण (विश्व स्वास्थ्य संगठन की विधि के अनुसार) उपलब्ध होता है।

प्रचुर मात्रा में देने योग्य आहार
- पचास मात्रा में ओ0आर0एस0 को पीने के साथ पानी में घोलकर दें।
- नारियल पानी
- जू जा पानी
- दाल व अनाज का पानी
- छात्र, मटिया
- हल्की चाय

दीघकालीन अतिसार (Chronic Diarrhoea)

तीव्र अतिसार के विपरीत दीघ कालीन अतिसार लम्बे समय (कुछ दिनों से कुछ हफ्तों) तक रहता है। इसमें रोगी दिन में 4-6 बार मल उत्सर्जित कर सकता है। खाद्य पदार्थ का आंतों से जल्दी-जल्दी निक्षासन होने पर वह अवशोषित नहीं हो पाता। इस स्थिति के लम्बे समय तक रहने पर रोगी में जल के साथ साथ पोषक तत्वों की भारी कमी हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)

दीघ कालीन अतिसार के लक्षण दीघ अतिसार की तरह ही होते हैं जैसे चेहरे दांव, भूखें सर्दी। परन्तु इसमें मल उत्सर्जन की आवृति उतनी अधिक नहीं होती है। प्रायः रोगी द्वारा दिन में 4-6 बार उनपर फलता मल निक्षासित देखा जाता है।

कारण (Causes)

दीघ कालीन अतिसार के कारण निम्न हैं-
- लम्बे समय तक अत्यधिक मसाले-भोजन।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- बेकटीरिया संक्रमण
- अवशोषण सम्बन्धी बिकार
- लम्बे समय तक शराब का सेवन।
- बड़ी आंत में कोई बिकार जैसे कैंसर अथवा शल्य चिकित्सा के परिणामस्वरूप।

जटिलताएं (Complications)

दीघ कालीन अतिसार की अवधि लम्बी होने के कारण रोगी पर्याप्त पोषक तत्वों से काफी समय तक वंचित रह जाता है। इस स्थिति में रोगी कुपोषित हो सकता है एवं कुपोषण जनित किसी रोग से प्रस्त भी हो सकता है। अतिसार किसी भयावह रोग जैसे- कैंसर आदि का लक्षण है तो समय से उपचार ही एकमात्र निवारण है।

आहारीय उपचार (Dietary Treatment)

दीघ कालीन अतिसार के आहारीय उपचार का प्रमुख उद्देश्य जल और लवणों के साथ-साथ पोषक तत्वों की पूर्ति करना है।

ऊर्जा

ऊर्जा की आवश्यकता को 10-20 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है ताकि शारीरिक दुर्भलता एवं घटते वजन पर रोक लगाई जा सके।

प्रोटीन

पोषक तत्वों की कमी के कारण भारी मात्रा में प्रोटीन की कमी हो जाती है अत: मांसपेशियों के उचित निर्माण एवं कोशिकाओं के क्षय की आपूर्ति लिए प्रोटीन को 50 प्रतिशत तक बढ़ाया जाता है।

कार्बोहाइड्रेट

आंतों की बड़ी हुई क्रियाशीलता के कारण वसा का पाचन व अवशोषण नहीं हो पाता। अत: आहार में वसा वर्जित करनी चाहिए। पर्याप्त शारीरिक अवस्था के अनुसार बड़ी हुई ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए वसा की जरूरत होती है। अत: रोगी को सरल व आसानी से पचने वाली वसा देनी चाहिए। जैसे- मक्खन व नारियल तेल।

विटामिन
नैदायक एवं उपचारात्मक पोषण

लल में जल के निष्कासन के साथ जल में धूल शील विटामिन (विटामिन बी समूह, विटामिन सी) उत्सर्जित हो जाते हैं, अतः इनको पर्वत मात्रा में देना चाहिए। इसके अलावा वसा के अवशोषण नहीं होने के कारण वसा में धूल शील विटामिन (विटामिन ए, डी, ई, के) मुख्यतः विटामिन ए की कमी भी हो जाती है। इसलिए इसके भी स्रोतों को आहार में शामिल करना चाहिए।

खाने लायक

बार-बार मल के उन्नत्जन से शरीर में कैल्शियम व लोह लवण का अवशोषण नहीं हो पाता, अतः कैल्शियम व लोह लवण के अवशेष को आहार में लेना चाहिए।

रेशा

रोगी को कम से कम रेशे वाला आहार देना चाहिए। यज्ञ रेशा रोगी के आंत को अधिक तकलीफ देता है। अतः रेशे का प्रयोग बर्जित करना चाहिए।

द्रव्य

अतिसार में द्रव्य की मात्रा भरपूर देनी चाहिए। सादा पानी, नींव पानी, ओ0 आर0 एस0 गोल, सूप, फलों का रस आदि विभिन्न रूपों में द्रव्यों का सेवन किया जा सकता है।

अवशेष

अवशेष उत्पन्न करने वाले भोज्य पदार्थों का प्रयोग सीमित रूप से करना चाहिए क्योंकि वह मल की मात्रा को बढ़ाते हैं।

प्रचुर मात्रा में लेने योग्य भोज्य पदार्थ

• धुली दालें
• रिफाइन्ड अनाज
• अच्छी तरह से पकी व कोमल सब्जियां
• फल जैसे बेला, पपीता
• दूध से बनी चीजें जैसे- दही, पनीर
• अण्डा, मछली, चिकन

वर्जित भोज्य पदार्थ

• साबुत अनाज व दालें
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- कच्ची सब्जियां व फल
- तले भोज्य पदार्थ
- मेवे

उच्च व कम रेशे बाले भोज्य पदार्थ

<table>
<thead>
<tr>
<th>उच्च रेशा</th>
<th>कम रेशा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>साबुत अनाज जैसे- गेहूँ, दलिया, साबुत अनाजों का आटा</td>
<td>दूध व दूध से बनी चीजें</td>
</tr>
<tr>
<td>साबुत दालें, छिलके बाली दालें</td>
<td>धुली दालें, अण्डा, मछली, चिकन</td>
</tr>
<tr>
<td>सब्जियां जैसे- मटर, फलियां आदि</td>
<td>सब्जियां जैसे- आलू, तोकी, पालक आदि</td>
</tr>
<tr>
<td>फल जैसे- सेब, आड़, अमरूद आदि</td>
<td>फल व फलों का रस जैसे- केला, पपीता</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उच्च व कम अवशेष (Residue) बाले भोज्य पदार्थ

<table>
<thead>
<tr>
<th>उच्च रेशा</th>
<th>कम अवशेष</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>सूप</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध से बने पदार्थ</td>
<td>दही, पनीर</td>
</tr>
<tr>
<td>साबुत अनाज व उनसे बनी चीजें</td>
<td>रिफाइन्ड अनाज व उनसे बनी चीजें</td>
</tr>
<tr>
<td>कच्चे फल व सब्जियां</td>
<td>उबली व मसली हुई सब्जियां व फल</td>
</tr>
<tr>
<td>मेवे, अचार आदि</td>
<td>मछली, चिकन</td>
</tr>
</tbody>
</table>

स्रोत: Textbook of Nutrition and Dietetics, कुमुद खन्ना द्वारा लिखा गया
8.8 उदर का कैंसर (Carcinoma of the stomach)

कैंसर शरीर के कोशिकाओं की एक बीमारी है। कैंसर एक विकार है जिसमें शरीर के किसी भी हिस्से में कोशिकाएं असामान्य रूप से बढ़ने लगती हैं। जब पेट की उपकला परत में कोशिकाएं बढ़ने लगती हैं और असामान्य रूप से विभाजित होती हैं, तो इस स्थिति को पेट का कैंसर/ गैस्ट्रिक कैंसर या उदर का कार्सिनोमा कहा जाता है। कैंसर अब दुनिया भर में मृत्यु का एक प्रमुख कारण बन गया है और गैस्ट्रिक कैंसर दुनिया में कैंसर से संबंधित मृत्यु का चौथा सबसे आम कारण है।

यह अभी तक ज्ञात नहीं है कि पेट में कैंसर कोशिकाएं किस कारण बढ़ने लगती हैं। लेकिन कुछ ऐसे कारक हैं जो पेट के कैंसर के लिए खतरा बढ़ा सकते हैं। उनमें से कुछ हैं जैसे हेलीकोबैक्टर पाइलोरी बैक्टीरिया से संक्रमण, जो अल्सर का कारण बनता है, आंत की सूजन जिसे गैस्ट्राइटिस कहते हैं, विटामिन बी 12 और फोलिक अम्ल की कमी के कारण उत्पन्न पर्निशियस एनीमिया और ऊतक वृद्धि के कारण कार्सिनोमा।

कार्सिनोजेनेसिस अथवा कैंसरजनन, एक जैविक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सामान्य कोशिकाएं कैंसरग्रस्त दूरों की कोशिकाओं में बदल जाती हैं। यह प्रक्रिया कई कारकों द्वारा शुरू और बढ़ाई जा सकती है।

उदर कैंसर के जोखिम कारक निम्न हैं:

- हेलीकोबैक्टर पाइलोरी द्वारा दीर्घकालीन संक्रमण,
- धूपमाप, भारी मात्रा में शराब का सेवन,
- अधिक वजन या मोटापा,
- मसालेदार खाद्य पदार्थों में उच्च आहार,
- कम रेशेदार खाद्य पदार्थ, आहार में अपयाप सूख्स्म पोषक तत्व,
- अल्सर के लिए पेट की सर्जरी,
- कोयला, धातु, लकड़ी या रबर उद्योगों में काम करना,
- एस्ट्रेर्स, नाइट्रॉज्युस, नाइट्रॉज्युस और नाइट्रोसमीन्स से संपर्क।

उदर कैंसर के लक्षण
नैदािनक एवं उपचारामय पोषण

उदर केंसर के लक्षण घीमी गति से प्रकट होते हैं और शुरुआती लक्षण आम तौर पर अपच, गैस्ट्रोइटिस आदि जैसे सामान्य लक्षण होते हैं जिनकी अन्यथा कर दी जाती है। पेट के कार्निनोमा की सभी शारीरिक जिलितताएं दे से शुरु होने की कारण इनका इलाज दे से शुरू होता है। उदर केंसर के शुरुआती संकेतों और लक्षणों में निम्नलिखित शामिल हैं:

- अपच, मतलब या उल्टी
- डिस्केलिया, भूख न लगना
- मेलेना (काला मल) या एनीमिया के कारण पीलापन, ताकत और वजन में कमी
- स्पष्टगोचर बढ़ा हुआ पेट और लिम्फ नोड्स

उदर केंसर की दे से उत्पन्न जिलितताओं में निम्न शामिल हैं:

- गैस्ट्रिक निकास, गैस्ट्रोइटिसोफेगल जंत्मण या छोटे आंत्र में स्क्राबन,
- एंट में रक्तक्ष,
- एपेटेमेगाली (बढ़ा हुआ बकरी) के कारण पीलिया
- पित की निकासी में रक्तक्ष के कारण पीलिया (प्रतिरोधी पीलिया),
- ट्यूमर मूल कैशेंसिया (शरीर का क्षय).

उदर केंसर हेतु पोषण प्रवंधन

उदर केंसर के लिए चिकित्सीय धेरी में तीन प्रमुख प्रकार के रस्ते की आवश्यकता हो सकती है; सार्वजनिक, विकल्प चिकित्सा या कीमोधेरी और पोषण संबंधी सहायता। उदर केंसर के लिए आहार का निर्धारण केंसर के स्थान, कार्निनोम क्षुद्रता की प्रकृति और शरीर के अंतर के चरण और हस्तक्षेपों के प्रकार से निर्धारित होता है। उदर केंसर में आहार संशोधनों के उद्देश्य हैं:

1. उचित पोषण के लिए पर्याप्त आहार प्रदान करना।
2. पोषण हीनता का ध्यान रखना।
3. लीन शरीर मात्रमान (lean body mass) को संरक्षित रखना।
4. पोषण संबंधी दुष्प्रभावों को कम करना।

पोषण प्रवंधन: ऊर्जा भंडार और ऊर्जाई के लिए उचित वजन बनाए रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा प्रदान की जानी चाहिए। एक सामान्य वजन के व्यस्त को 25 से 30 किलोकॅलोरी प्रति
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

किलोग्राम शारीरिक वजन प्रतिदिन की आवश्यकता होती है। एक कुपोषित वयस्क एवं कुपोषण के स्तर के आधार पर 35 से 40 किलोग्राम प्रति दिन की आवश्यकता होती है। उत्कृष्ट वजन वाले व्यक्ति के लिए 80 से 100 ग्राम प्रति प्रोटीन का सेवन आवश्यक है और कुपोषित व्यक्ति के लिए प्रति दिन 100 से 150 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। 15 से 20 ग्राम प्रोटीन प्रति 24 घंटे आवश्यक है।

आहारीय स्वरूप

• भोजन की आवृत्ति बढ़ाई जानी चाहिए,
• मसालों का उपयोग स्वाद बढ़ाने में सहायक हो सकता है,
• आहार में लाल मांस से बचें,
• अन्य विटामिन और खाद्य पदाथर के माध्यम से नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण की होती है। ऊतकों के पुनरीर्गमण के लिए चिकित्सा की आवश्यकता भी बढ़ जाती है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. अतिसार के प्रकार बताइए। तीव्र अतिसार के कारणों को सूचीबद्ध करें और ओ0आर0एस0 के महत्व पर प्रकाश डालें।

2. पेटिटिक अल्सर की जटिलताओं और लक्षणों को सूचीबद्ध करें। पेटिटिक अल्सर के पोषण प्रबंधन के बारे में विस्तृत से बताएं।
8.9 गैस्ट्रिक सर्जरी/आमाशयिक शल्य चिकित्सा (Gastric surgery/gastrectomy)

गैस्ट्रिक सर्जरी की आवश्यकता तब होती है जब पेट में सामान्य पाचन प्रक्रिया नहीं होती है या सामान्य पाचन और अवशोषण पर्याय रूप से नहीं होता है। मोटापे के मामले में कभी-कभी जानवृद्धि के प्रमाण को सीमित कर दिया जाता है। पेट के कुछ हिस्सों में पाचन को छोड़ने के लिए गैस्ट्रिक सर्जरी की जाती है जहां खाबा या सूजन सामान्य पाचन प्रक्रिया को बाधित करते हैं। गैस्ट्रिक सर्जरी पेट के पूर्व या कुछ हिस्सों का सर्जिकल निष्कासन है। आम तौर पर इसमें पेट के निचले आधे को हटा दिया जाता है। पूरे पेट को हटाने की प्रक्रिया को पूर्ण गैस्ट्रेक्टोमी कहते हैं। यह आमतौर पर गैस्ट्रॉइटिस, पेप्टिक अल्सर, केसर आदि के कुछ उन्नत रूपों में शामिल है। पेप्टिक अल्सर के साथ रक्षाबंधन होने पर, यदि उदर की उपकला पर तांबा हो, किसी प्रकार की स्कावट हो अथवा रोगी चिकित्सीय उपचार का पालन करने में सक्षम नहीं हो तब कुल और अशिक्षा गैस्ट्रेक्टोमी आवश्यक हो सकती है।

पोषण चिकित्सा: क्योंकि इस प्रक्रिया में शल्य चिकित्सा शामिल है और उदर कार्यशील नहीं होता है, इसलिए जटिल संबंधी कार्यों के फिर से शुरू होने तक खाद्य पदावरों का मौखिक सेवन बंद कर दिया जाता है। गैस्ट्रिक सर्जरी के बाद निम्न चरणों पर विचार किया जाता है:
1. यदि रोगी की स्थिति अधिक होती है, तो अंतःशिया पोषण की आवश्यकता होती है।
2. जब रोगी की हालत में सुधार होता है, तब उसे स्वस्थ दिखाए और अधिक समय लगता है, अंतःशिया पोषण के स्थान पर उपजूब के माध्यम से मध्यांश (jejunum) में पोषण दिया जाता है।
3. एक बार उदर कार्यशील हो जाने पर, तरल पदावर मौखिक रूप से शुरू किए जाते हैं।
4. रोगी की शारीरिक स्थिति और खाद्य पदावरों के प्रति सहिष्णुता के आधार पर, खाद्य पदावरों की मिलता और खाते को मुलायम से ठोस खाते की ओर बढ़ाया जा सकता है।

गैस्ट्रेक्टोमी के गोरियों के लिए मुंह द्वारा अनुभूत पहला तथा आमतौर पर बर्फ के रूप में पानी होता है जो मुंह में रखने पर पियल जाता है। पानी का तापमान रोगियों की सहनशीलता के अनुसार होना
8.10 लैटॉज असहिष्णुता (Lactose intolerance)

लैटॉज एक एंजाइम होता है जो दूध में पाई जाने वाली लैटॉज श्वेत और गैलेज होता है। यह एंजाइम मध्यम (ऊपरी छोटी आंत) में मौजूद होता है। लैटॉज असहिष्णुता इस लैटॉज एंजाइम की कमी के कारण होती है। लैटॉज एंजाइम की कमी का स्तर व्यक्तिगत होता है जिससे व्यक्ति में लैटॉज असहिष्णुता की गतिविधि का पता चलता है।

जब लैटॉज एंजाइम की कमी होती है, तो अंतर्ग्रह लैटॉज बिना पाचन के बड़ी आंत में प्रवेश कर जाता है और यहाँ यह आंतों के माइक्रोफ्लोरा द्वारा लैक्टिक एसिड में परिवर्तित हो जाता है जो अतिसार और लैटॉज असहिष्णुता के अन्य लक्षणों का कारण बनता है। यह समस्या शिशुओं और छोटे बच्चों में आम और उत्पत्ति में आनुवंशिक होती है लेकिन वयस्कों में भी यह मौजूद हो सकती है। लैटॉज असहिष्णुता के सामान्य लक्षणों में एनोरिक्सिया और मतली, आंतों में फुलाव, पेट में ऐंठन, कोलाइटिस जैसी बीमारी संरचनाओं से अंतित होती है, जिसके कारण लैटॉज असहिष्णुता हो सकती है।

लैटॉज असहिष्णुता के निम्न कारक हैं:
- आनुवंशिक कारक।
- आंत में संक्रमण के कारण लैटॉज गतिविधि का कम होना।
- सीलिक न्यू कोलाइटिस जैसी बीमारी जिसमें मध्यम बिलियन संरचनात्मक रूप से क्षतिग्रस्त होना,
- शाल्य चिकित्सा द्वारा मध्यम के निकाले जाने के कारण लैटॉज असहिष्णुता हो सकती है।

पोषण प्रबंधन

लैटॉज असहिष्णुता में निर्धारित आहार, आहार में लैटॉज के प्रबंधन को छोड़कर एक सामान्य संतुलित आहार होता है। आहारीय उपचार की योजना लैटॉज गतिविधि के स्तर पर निर्भर करती है जो बढ़त कम, मध्यम कम और हल्के रूप से कम लैटॉज गतिविधि हो सकती है। लैटॉज गतिविधि
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

के बहुत कम स्तर पर आहार से सभी दूध उत्पादों को हटाना होता है। इस स्थिति में दूध के विकल्प जैसे सोया दूध, मूंगफली का दूध और उनके उत्पाद दिए जा सकते हैं।

लैक्टोज गतिविधि के मामूली कम और मध्यम स्तर पर, सहनशीलता के आधार पर दूध का सेवन अनुमय होता है। दूध का क्षिप्रत और पकाया हुआ रूप दिया जाना चाहिए क्योंकि यह बेहतर रूप से सहन किया जा सकता है। क्रियान्वित लैक्टोज के एक प्रमुख भाग को लैक्टिक एसिड में परावर्तित करता है। यह छाया, दही, क्रेम, दलिया और पनीर के रूप में या अनाज, कोको आदि के साथ मिश्रित होने पर बेहतर सहन किया जाता है। इस रूप में लैक्टोज धीरे-धीरे विचित्रित होता है और इस प्रकार लैक्टोज असहिष्णुता के लक्षणों में कमी आती है। भोजन के साथ बहुत कम मात्रा में दूध लिया जा सकता है। दृष्टा और दूध उत्पादों के प्रतिबंध के कारण शरीर में कैल्शियम की कमी हो सकती है। कैल्शियम की कमी के लिए, आहार में कैल्शियम वृक्षत खाद्य पदार्थ जैसे साबुत अनाज, हरी पेम्पार सजियां अधिक दी जानी चाहिए और यदि आवश्यक हो तो कैल्शियम का पूरक देना चाहिए।

8.11 क्षोभी आंत्र विकार (Irritable bowel syndrome)

क्षोभी आंत्र विकार (IBS) एक आम विकार है जिसमें जड़रान वायु विशेष रूप से बड़ी आंत शामिल है। यह एक रोग नहीं बल्कि संकेतों और लक्षणों का एक समूह है जो एक व्यक्ति को आंत की परिवर्ति गतिशीलता और पाचन नली की संवेदनशीलता के कारण अनुभव करता है। आंत्रिक तंत्रिका तंत्र खाद्य पदार्थों की मात्रा, आयतन और रासायनिक संरचना की उपस्थिति के प्रति कृतिक अधिक संवेदनशील हो जाता है। इसमें कोई ऊतक क्षैर और सूजन नहीं होती है तथा कोई प्रतिक्रियात्मक दुष्क्रिया नहीं होती है। गैम्पर संकेत और लक्षण कभी-कभार ही दिखाई देते हैं। एकांतर अतिसार, कप्प और पेट में दर्द सामान्य लक्षण हैं, शीत के जिनसे आमतौर पर बाद राहत मिलती है। क्षोभी आंत्र विकार के बहुत संकेतों और लक्षणों में निम्न शामिल हैं:

- पेट में दर्द, ऐंठन या सूजन
- अत्यधिक गैस
- अतिसार या कप्प
- अपूर्ण निष्कासन की अनुभूति
- मलाशय में दर्द मल में श्रेण्य

क्षोभी आंत्र विकार के गंभीर मामलों में निम्नलिखित संकेत और लक्षण शामिल हैं:
• वजन घटना,
• रात में असिसार, मलाशय से खून आना,
• लोहे की कमी से एनीमिया,
• अस्पदीकृत वमन,
• निगलने में कठिनाई,
• लगातार दर्द जिसमें गैस या मल त्वचाएं करने से भी गाहत नहीं होती है।

शोभी आंत्र विकार के जोखिम को निम्न लिखित प्रकार बढ़ाते हैं: जो निम्न हैं:

• जल आंत्र पथ के संक्रमण, दीर्घकालिन बुखार, पिछली बीमारी,
• तनाव, चिंता, अवसाद,
• रेचकों (laxatives) का अत्यधिक उपयोग,
• एंटीबायोटिक्स, कैफीन
• नींद, आराम और तरल पदाथारों के सेवन में नियमितता का अभाव
• एलर्जी का पारिवारिक इतिहास, कुछ खाद्य पदाथारों के लिए अतिसंवेदनशीलता

शोभी आंत्र विकार का प्रबंधन

आहार, शिश्न, दवाएं और परामर्श शोभी आंत्र विकार के प्रबंधन में सभी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह विकार जीवन के लिए खतरा नहीं होते और सामान्य रूप से कुपाचन और कुआघरोशण में परिणाम नहीं होते। हालांकि, यह इसे गंभीरता से नहीं लिया जाता है। यह इसके परिणामस्वरूप खाद्य पदाथारों और पोषक तत्वों का अंतर्गत करना सकता है। शोभी आंत्र विकार के लक्षणों को नियंत्रित करने के लिए, पोषन का चयन और भोजन स्वरूप बहुत महत्वपूर्ण है। पोषण संबंधी देखभाल के निम्न उद्देश्य हैं:

• पदाथार पोषक तत्वों का सेवन सुनिश्चित करना,
• खाद्य पदाथारों के सही चयन के लिए रोगी का मार्गदर्शन करना,
• आहार प्रथाओं की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करना।

पोषण संबंधी देखभाल के लक्षणों को प्राप्त करने, अच्छे पोषण की स्थिति सुनिश्चित करने और लक्षणों से छुटकारा पाने के लिए निम्नलिखित बातें पर विचार किया जाना चाहिए:
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- आहारीय वसा, कैफीन, शरकरा जैसे लैक्टोज और फ़ुक्टोज, सोफ्टिनोल के उपयोग को सीमित करें।
- अधिक आवृति में छोटी मात्रा के लगातार आहार का सेवन करें।
- चोकर और मोटे अनाज का अत्यधिक उपयोग न करें।
- आहारीय रेशे की सीमा 25 ग्राम तक बढ़ाने से आंत्रिक आदतों को सामान्य बनाने में मदद मिल सकती है क्योंकि किशोरों और वयस्कों में इसका सेवन आम तौर पर अनुशासित मात्रा का आधा होता है।
- विस्तृत रेएक के रूप में घुलनशील रेशा सहायक होता है।
- लक्षणों से राहत के लिए तरल पदार्थों का पर्याप्त सेवन करना चाहिए।
- ध्यान, योग, व्यायाम जैसी विभिन्न तकनीकों के माध्यम से तनाव को कम कर लक्षणों को कम करने में मदद मिल सकती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. गैस्ट्रिक सर्जरी की आवश्यकता क्यों होती है? गैस्ट्रिक सर्जरी के बाद पोषण चिकित्सा के चरणों को लिखें।

2. लैक्टोज असहित्युता क्या होती है? इसके कारणों की व्याख्या करें।

3. “कोई आंत्रिक विकार एक रोग नहीं बल्कि संकेतों और लक्षणों का एक समूह है”, इस कथन को समझाएं।
8.12 सारांश

इस इकाई में हमने अपच, पेट फूलना, कब्र, अतिसार, पेप्टिक अल्सर, उदर क्रैंसर, गैस्ट्रिक सर्जरी, 
लेक्ट्रोज असहिष्णुता और क्षोभी आंत्र विकार जैसे महत्वपूर्ण जटारंग विकारों के बारे में अध्ययन किया। हमने इन विकारों के कारणों, लक्षणों और जोखिम तथा इनकी उपचार के बारे में जानकारी दी। हमने आहारी संसरण तथा अनुपस्थिति संबंधी चर्चाएं भी की।

8.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

इकाई का मूल भाग देखें।

अभ्यास प्रश्न 2

इकाई का मूल भाग देखें।

8.14 जिन्दाबादी प्रश्न

1. अपच के प्रकार, कारणों, लक्षणों तथा पोषण प्रबंधन की व्याख्या कीजिए।

2. कब्र कितने अपच के प्रकार की होती है? कब्र के लक्षणों तथा आहारी प्रबंधन के बारे में वर्णन करें।

3. पेप्टिक अल्सर की विभिन्न अवस्थाओं में पोषण सम्बंधी सुझाव दीजिए।

4. उदर क्रैंसर के जोखिम कारक, लक्षण तथा उपचार रामक विकार की चर्चा कीजिए।

5. क्षोभी आंत्र विकार के लक्षणों तथा प्रबंधन की व्याख्या कीजिए।
इकाई 9: हृदय रोगों में आहार

9.1 प्रस्तावना

9.2 उदेश्य

9.3 हृदय विकारों के प्रकार

9.4 कारक

9.5 हृदय रोगों की जटिलताएं

9.6 एथेरोस्क्लरोसिस के विकास में वसा की भूमिका

9.7 उच्च रक्तचाप

9.8 हृदय रोग में आहार नियोजन

9.9 कम सोडियम आहार

9.10 सारांश

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.12 निवंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार 2015 में लगभग 17.70 लाख लोगों की मृत्यु हृदय विकारों के कारण हुई जो कुल वैश्विक मृत्यु का 31 प्रतिशत है। शताब्दी की शुरुआत के साथ ही हृदय रोग भारत में मृत्यु दर का प्रमुख कारण बन गए हैं। यह रोग भारतीयों को उनके सबसे अधिक उपायक वर्षों में प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, पश्चिमी आबादी में 70 वर्ष की आयु से पहले केवल 23% मौतें हृदय रोगों के कारण होती हैं जबकि भारत में यह संख्या 52% है। भारतीय भले ही किसी भी जीवन शैली, लिंग अथवा उम्र के हों, हृदय रोगों के लिए अनुवांशिक रूप से अधिक संबंधित होते हैं। प्रस्तुत इकाई में हम हृदय रोगों के प्रकार, लक्षण, जटिलताओं तथा आहार नियोजन पर चर्चा करेंगे।

9.2 उदेश्य

प्रस्तुत इकाई में आप:

• हृदय रोगों के प्रकारों के बारे में जानें;
हृदय रोगों की जटिलताओं के विषय में जानेंगे;
हृदय रोगों में आहार नियोजन पर जानकारी ले पाएं।

9.3 हृदय विकारों के प्रकार
हृदय विकारों के कई प्रकार हैं:

• जम्मे दोष या अनुवांशिक दोष- जैसे हृदय के कक्षों में छठ होना।
• वात्स में दोष होना- रक्त के बहाव में रक्तचाव अथवा रक्त का गलत दिशा में रिसाव होना।
• हृदय धमनी रोग- हृदय की रक्त वाहिकाओं में संकुचन होने से रक्त प्रवाह में रक्तचाव होना। इसके परिणाम स्वरूप हृदय आघात होना।
• एन्जाइना पेक्टोरिस (Angina pectoris)- अपर्याप्त रक्त प्रवाह के कारण सीने में दर्द होना।
• अतालायी अथवा मोटापा (Arrhythmia)- हृदय का असामान्य रूप से धड़कना।
• हृदय में संक्रमण होना। विशेषकर उन व्यक्तियों में जो किसी हृदय रोग से ग्रस्त हो या उन्हें कोई हृदय से सम्बन्धित अनुवांशिक दोष हो।

9.4 कारक
हृदय रोगों के लिए कई कारक जिम्मेदार होते हैं। ये विभिन्न कारक व्यक्तिगत या संयुक्त रूप से कार्य करते हैं।

1. व्यक्तिगत कारक
• हृदय रोगों का पारिवारिक इतिहास।
• लिंग- पुरुषों में हृदय रोग ज्यादा पाए जाते हैं।
• आयु 30 से 35 वर्ष के मध्य हृदय रोगों की संभावनाएं ज्यादा होती हैं।
• अतिभाव अथवा मोटापा
• तनाव
• अत्यधिक कार्यभार
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• सीमित घटों की निन्द्रा
• अत्य ह्रियाशील जीवनशैली

2. व्यवहारिक कारक
• अत्यवधिक धूम्रण
• अधिक मात्रा में नियमित मंदिरापन
• खाने की आदतें जैसे केवल परिपूर्ण (refined) भोजन का उपयोग, अधिक मात्रा में संतृप्त वसा का इस्तेमाल, अधिक मात्रा में भोजन करना, कम या लगभग नग्न नगण्य शारीरिक गतिविधियां तथा व्यायाम।

3. अन्य कारक
• मधुमेह, उच्च रक्तचाप तथा रक्त में वसा की अधिकता (hyperlipidemia), आम रोग की स्थितियां हैं जो हृदय रोगों से चयापचयी रूप से संबंधित हैं।

9.5 हृदय रोगों की जटिलताएं
हृदय रोगों की जटिलताओं का मुख्य रूप एथेरोस्क्लोरोसिस (Atherosclerosis) है। वह एक रोग जनित प्रक्रिया है जो मस्तिष्क तथा हृदय की धमनियों को प्रभावित करती है। Atherosclerosis नाम को यूनानी शब्द 'Athere' से लिया गया है, जिसका अर्थ होता है 'गाढ़ा पदाथर', क्योंकि इस प्रक्रिया में पीले गाढ़े पदाथर (Plaque) के जमाव से रक्त नलिकाओं में घाव बन जाते हैं।

इस प्रक्रिया की शुरुआत व्यक्ति के बचपन से ही बड़ी मास्पेशियों की धमनियों में वसा (विशेषकर कोलेस्ट्रॉल) के जमाव के साथ शुरू हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप धमनियों में वसा युक्त लकीरों के रूप में पाप बन जाते हैं। इसके कारण धमनियों में आंतरिक रूप से बहुत कम घाव देखा जाता है। परंतु बचपन में यह वसा का जमाव रक्त के बहाव में रक्षात है नहीं करता। यह एथेरोस्क्लोरोसिस की पहली अवस्था है।

दूसरी अवस्था में धमनियों में केन्द्र की तरफ तंतुमय उत्कर्ष (fibrous tissue) तथा वसा के लगातार जमाव के कारण बड़े उभरे हुए घाव हो जाते हैं। जिन घावों में वसा की मात्रा ज्यादा होती है वह मुलायम अथवा एथेरोमेटस (atheromatous) होते हैं तथा ज्यादा तंतुमय उत्कर्ष वाले घाव
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

9.6 एथरोस्क्लेरोसिस के विकास में वसा की भूमिका

1950 के दशक से ही यह तथ्य सिद्ध किया गया है कि उच्च मात्रा में संतुः वसीय अम्ल (मांस वसा, दूध वसा, मक्खन, चरबी, नारियल तेल, ताड़ का तेल आदि) के उपभोग करने के खाते में कम स्वस्थ है जिसमें संतुः वसीय अम्ल कम अनुपात में होते हैं। कम संतुः वसा परतु असंतुः वसीय अम्लों के उच्च अनुपात के खाते सीतार में जैतून का तेल, मूंगफली का तेल, कैनोला तेल, एवोकाडो, मक्खन, सूरजमुखी, सोया, और कपास के बीज का तेल शामिल है। वसा ऊतकों में अत्यधिक वसीय भंडारण, मांसपेशियों और चक्र दोषियाँ में वसीय बूंदों के अंतर्गत भंडारण चयापचयी िसंअगोम, टाइप 2 मधुमेह और अन्य रोगों से जुड़े लक्षणों से संबंधित हैं।

कुछ वसा आहार से मिलती है और इस वसा को एक प्रकार के लिप्रोटीन का उपयोग करके रक्त में पहुँचाया जाता है, जिसे काइलोमाइक्रोन (chylomicron) कहा जाता है। अन्य वसा व्यक्ति में निर्मित होते हैं जब अतिरिक्त शरीर की प्रोटीन का सेवन किया जाता है। लिप्रोटीन का एक अन्य समूह इस वसा का परवहन करता है। इस समूह में एक अन्य महत्वपूर्ण लिप्रोटीन है जिसे कम घनत्व वाला लिप्रोटीन (low-density lipoprotein) या LDL कहा जाता है। अंत में एक
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

उच्च-घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (high-density lipoprotein) या HDL नामक लिपोप्रोटीन होता है, जो कणों के बीच प्रोटीन के हस्तांतरण और ऊतकों से कोलेस्ट्रॉल को हटाने में सहायक होता है। सभी लिपोप्रोटीन में कोलेस्ट्रॉल होता है। वसा (लिपिड) और प्रोटीन से बने वाहक द्वारा कोलेस्ट्रॉल को रक्तप्रवाह के माध्यम से ले जाया जाता है। दो प्रकार के लिपोप्रोटीन कोलेस्ट्रॉल को कोशिकाओं में (कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन/low-density lipoprotein) और बाहर (उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन/ high-density lipoprotein) ले जाते हैं। रक्त में प्रत्येक प्रकार के कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को रक्त परीक्षण द्वारा मापा जा सकता है।

कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन/खराब कोलेस्ट्रॉल

LDL कोलेस्ट्रॉल को “खराब” कोलेस्ट्रॉल कहा जाता है। इसे कम बांधीय कोलेस्ट्रॉल माना जाता है क्योंकि यह धमनियों में वसीय जमाव (एथेरोस्क्लरोसिस) में महत्वदायक है। संक्रमण धमनियों प्लाक का निर्माण दिल के दीर्घ, स्ट्रोक और परिभाषित धमनी रोग (पैरों में संक्रमण धमनियों) के लिए जोखिम कारक है।

उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन /अच्छा कोलेस्ट्रॉल

एचडीएल कोलेस्ट्रॉल "अच्छा" कोलेस्ट्रॉल है। इसे "स्वस्थ" कोलेस्ट्रॉल माना जाता है इसलिए इसका उच्च स्तर बेहतर होता है। विशेषज्ञों का मानना है कि एचडीएल सफाई का कार्य करता है, जो एलडीएल कोलेस्ट्रॉल को धमनियों से दूर ले जाकर वापस भ्रमण में ले जाता है। वहां यह अग्रहजीत होकर निष्कासित हो जाता है।

एक स्वस्थ एचडीएल कोलेस्ट्रॉल स्तर दिल के दीर्घ और स्ट्रोक से बचा सकता है। अध्ययनों से पता चलता है कि एचडीएल कोलेस्ट्रॉल का निम्न स्तर हुदय रोग के जोखिम को बढ़ाता है। एचडीएल कोलेस्ट्रॉल एलडीएल कोलेस्ट्रॉल को पूरी तरह से खत्म नहीं करता है। एचडीएल द्वारा केवल एक-चौथाई से एक-तिहाई रक्त कोलेस्ट्रॉल लिया जाता है।

ट्रिग्लिसराइड्स/Triglycerides
नैदातिक एवं उपचारात्मक पोषण

ट्राईफिलसाइड्स शरीर में वसा का सबसे आम प्रकार है; जो आहार से अतिरिक्त ऊर्जा का भंडारण करते हैं। कम एचडीएल कोलेस्ट्रोल या उच्च एलडीएल कोलेस्ट्रोल के साथ संयुक्त एक उच्च ट्राईफिलसाइड रूप धर्मनी की दीवारों में वसीय जमाव से सम्बंधित होता है। इससे हार्ट अटैक और ग्रेट्स्क का खतरा बढ़ जाता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रक्त स्थान भरिए।

a. हड्डी के असामान्य रूप से धड़कने को .............................. कहते हैं।
b. .......................... प्रक्रिया में पीते गाढ़े पदार्थ (Plaque) के जमाव से रक्त नलिकाओं में घाव बन जाते हैं।
c. हड्डी की रक्त वाहिकाओं में स्क्वार गमन से हड्डी की मांसपेशियों को ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा नहीं मिल पाती है। इस अवस्था को .............................. कहते हैं।
d. जैविक ताल, मूंगफली का तेल, कैल्शियम तेल में ................................. उच्च अनुपात में होते हैं।
e. LDL कोलेस्ट्रोल को .............................. कोलेस्ट्रोल कहा जाता है।
f. ............................... शरीर में वसा का सबसे आम प्रकार है; जो आहार से अतिरिक्त ऊर्जा का भंडारण करते हैं।

9.7 उच्च रक्तचाप

उच्च रक्तचाप वह रोग है जिसमें हड्डी के संकुचन की अवस्था में रक्त वाहिकाओं में रक्त का दबाव पारे के 140 mm Hg से ज्यादा या हड्डे के विस्तारण की अवस्था में 90 mm Hg से ज्यादा रहता है या दोनों अवस्थाओं में ज्यादा रहता है। मधुमेह और उच्च रक्तचाप दोनों ही रोगों में हड्डय रोग, बृक्ष रोग एवं अन्य पात्र जितनाओं का जोखिम रहता है। एक स्वस्थ व्यक्ति का रक्तचाप 120/80 mm Hg होता है। ऊपर की संख्या हड्डय संकुचन चाप को बतलाती है तथा नीचे की संख्या हड्डय विस्तारण चाप की दौड़ता है। इससे अधिक रक्तचाप उच्च रक्तचाप को दर्शाता है। रक्तचाप रक्तदाबमापी (Sphygmomanometer) से नापा जाता है।

उच्च रक्तचाप के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं:

उत्तराखण्ड मुख्य विश्वविद्यालय 179
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>उपचारात्मक पोषण</th>
<th>धूपपान एवं मददपान</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>आयु: 40 की उम्र के पश्चात् रक्तचाप बढ़ने लगता है।</td>
<td>आहार में वसा की अधिकता, अधिक शर्करायुक्त भोजन, घी, अंडा, मक्खन आदि का अधिक प्रयोग</td>
</tr>
<tr>
<td>बंशानुकम</td>
<td>गुंडे में विकार एवं दोष हो जाने से</td>
</tr>
<tr>
<td>मोटापा</td>
<td>एड्रीनल प्रक्षिप्तों में टुब्फर होने से</td>
</tr>
<tr>
<td>बुढ़ापा</td>
<td>मृत्तिकों में संक्रमण से</td>
</tr>
<tr>
<td>शारीरिक क्रियाशीलता में कमी</td>
<td>व्यायाम का अभाव</td>
</tr>
<tr>
<td>मानसिक तनाव, चिंता, उद्देश्य, क्रोध, दुख एवं भय</td>
<td>भोजन संबंधी आदतों</td>
</tr>
<tr>
<td>धमनियों में वसा का जमाव</td>
<td>उपचार</td>
</tr>
<tr>
<td>दीर्घकाल तक नमक का अधिक प्रयोग</td>
<td>उच्च रक्तचाप के लक्षण</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>उच्च रक्तचाप के लक्षण</th>
<th>मोटे अभाव को आहार में सोडियम और भी कम कैलोरी का अधिक प्रयोग करना चाहिए।</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सिर दर्द</td>
<td>अभी इकलकल शरीर के भार पर एक अक्कल अस्टीन लेने का परामर्श दिया जाता है।</td>
</tr>
<tr>
<td>कमजोरी एवं चक्कर आना</td>
<td>उच्च रक्तचाप में सामान्य प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के साथ कम ऊर्जा वाला, कम वसा तथा कम सोडियम वाले आहार को प्रथम करने का परामर्श दिया जाता है।</td>
</tr>
<tr>
<td>बेघरी असहृदाय होना</td>
<td>प्रतिकोलिप्रोटीन शरीर के भर पर 20 किलो कैलोरी का प्रयोग सबसे उत्तम होता है।</td>
</tr>
<tr>
<td>कम्प</td>
<td>मोटे व्यक्तियों को आहार में और भी कम कैलोरी का प्रयोग करना चाहिए।</td>
</tr>
<tr>
<td>आंखों के आगे धुंधलापन छा जाना</td>
<td>प्रति कोलोग्राम शरीर के भर पर एक ग्राम प्रोटीन लेने का परामर्श दिया जाता है।</td>
</tr>
<tr>
<td>हुद्द की धड़कन अनियमित होते-होते रक जाना</td>
<td>उपचार</td>
</tr>
</tbody>
</table>
८.८ हदय रोग में आहार नियोजन

लोगों की जीवन शैली में बदलाव के कारण उनकी खानपान की आदतों का कई अपश्रेष्ठ रोगों (degenerative diseases) के विकास पर प्रभाव पड़ा है जिनमें हदय रोग प्रमुख हैं। रक्त में बसा का उच्च स्तर हदय रोग का एक प्रमुख जोखिम कारक है। अब यह एक स्थायी तथ्य है कि आहार का हदय रोगों की रोकथाम में महत्वपूर्ण भूमिका खेलता है। संतुलित तथा असंतुलित आहार में कम आहार हदय रोगों की रोकथाम में मदद करता है।

आहार के सामान्य दिशा निर्देश

• कुल बसा, कुल ऊर्जा खपत का 30 प्रतिशत या कम होना चाहिए।
• कोलेस्ट्रॉल बढाने वाले वसीय अम्ल (fatty acids) जैसे संतृत (saturated) तथा ट्रांस वसीय अम्ल (trans fatty acids) 7 प्रतिशत से कम होने चाहिए।
• भोजन में बसा, असंतृत प्रकार की होनी चाहिए तथा कोलेस्ट्रॉल का कुल सेवन 200 mg प्रति दिन से कम होना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

हदय रोग का आहार नियोजन:

कैलोरीज का संतुलन तथा शारीरिक भार
मोटापा हदय रोगों का एक प्रमुख कारक है। कुल कैलोरी सेवन में कमी द्वारा वजन में कमी की जा सकती है। अगर किसी व्यक्ति में मोटापे के साथ मधुमेह भी है, उस व्यक्ति में हदय रोगों की संभावना और बढ़ जाती हैं। पूरी तरह से आराम कर रहे रोगी को 1000-1200 किलो कैलोरी आहार दिया जा सकता है।

वसा

वसा के विभिन्न प्रकारों का रक्त के कुल कोलेस्ट्रॉल स्तर पर अलग-अलग प्रभाव होता है। संतृप्त वसा रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को बढ़ाता है। इसलिए जहाँ तक संभव हो संतृप्त वसा युक्त भोज्य पदार्थ का सेवन न के बराबर या सीमित होना चाहिए। सामान्यतया किसी भी व्यक्ति की कुल कैलोरी सेवन का 15-20 प्रतिशत वसा से आता है। हदय रोग के मरीजों में इस प्रतिशत को कम कर 10 प्रतिशत कर देना चाहिए। पशु वसा जैसे घी, मक्खन, वनस्पति घी तथा कई प्राकृतिक खाद्य पदार्थ जैसे फ्रूट्स या केक संतृप्त वसा के मुख्य क्षेत्र हैं। नारियल तथा ताड़ (Coconut and Palm) के तेल में भी संतृप्त वसा की मात्रा अधिक होती है। असंतृप्त वसा रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम कर सकती है। वनस्पति तेल जैसे safflower, मक्खन का तेल, सोयाबीन तथा जॉल का तेल असंतृप्त वसा के सबसे अच्छे क्षेत्र हैं।

आहार के माध्यम से कोलेस्ट्रॉल के सेवन में कटौती की जा चाहिए। भोज्य पदार्थ जिनमें कोलेस्ट्रॉल की मात्रा ज्यादा होती है, उनका सेवन कम करना चाहिए जैसे अंडे की जर्जरी, मक्खन, क्रीम, पनीर, मॉस, चॉकलेट, केक आदि।

कार्बोहाइड्रेट

स्वतंत्र, सुक्रोज तथा फ्लूक्रोज जैसे सरल कार्बोहाइड्रेट्स का सेवन कम करना चाहिए क्योंकि वह शरीर को आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं तथा इनका ज्यादा सेवन रक्त में वसा का स्तर बढ़ाने में सहायक होता है।

जटिल कार्बोहाइड्रेट्स जैसे संपूर्ण गेहूं का आटा, साजुत दाले, हरी पत्तेवार सब्जियाँ, कच्चे बिना छिले फल का सेवन हदय रोगों में लाभकारी है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

अन्य आहार संबंधी कारक

• खाद्य पदार्थ जैसे तहसुन अपने चिकित्सकीय गुणों के कारण रक्त में कोलेस्ट्रॉल का स्तर कम करने में सहायक होता है।

• हद्द रोगों में प्रोटीन के सेवन की मात्रा में बढ़ा नहीं होता परंतु कैलोरीज, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट का सेवन उचित तथा नमक का सेवन सीमित होना चाहिए।

9.9 कम सोडियम आहार

हद्द रोग जैसे उच्च रक्तचाप में कम सोडियम आहार की सलाह दी जाती है। हमारे रोजमर्रा के भोजन में सोडियम का सबसे अच्छा तथा मुद्दा सोत खाने का नमक है। प्रति ग्राम नमक के सेवन से रक्तचाप के डायस्टोलिक (diastolic) मान में औसत रूप से 0.8 mm Hg की वृद्धि दिखाई देती है। रक्तचाप हद्द रोगों का एक अच्छा तथा स्वतंत्र मानक है।

रोगी की स्थिति के अनुसार तीन प्रकार के आहार निर्धारित हैं -

• हल्के प्रतिबंध- प्रति दिन 2-3 ग्राम तक सोडियम का सेवन मान्य।

• मध्यम प्रतिबंध- प्रति दिन 1-2 ग्राम तक सोडियम का सेवन मान्य।

• कठोर/तीव्र प्रतिबंध- प्रति दिन 1 ग्राम से कम सोडियम का सेवन मान्य।

सामान्य निर्देश

• खाने में नमक का कम उपयोग करें।

• सोडियम बाईकाबोनेट (Sodium carbonate) अथवा बेरिंग सोडा का खाने में उपयोग न करें तथा उन पदार्थों का भी जिसमें यह डाला गया हो, जैसे केक, बिस्कुट, ब्रेड आदि।

हद्द रोगों में बिजित खाद्य पदार्थ

• गाढ़े दूध के उत्पाद जैसे रबड़ी, बफरी, पेड़ा, क्रीम, आइसक्रीम

• तले हुए खाद्य पदार्थ जैसे समोसे, पूरी, पकोड़ा आदि

• वसा युक्त मॉस जैसे बुक्त, गुदा, सभी प्रकार के संसाधित मीट, अंडे की जर्डी

• शराब तथा अन्य मादक पेय
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- पशु बसा जैसे घी, मक्खन, बनसपत्ति, ताड़ तथा नारियल का तेल
- काजू, बादाम, मूंगफली, नारियल
- नमकीन भोज्य पदार्थ जैसे अचार, चटनी, पापड़
- बेकरी पदार्थ जैसे केक, पेस्ट्री, मीठे तथा नमकीन बिस्किट, नान खटाई, क्रीम बिस्किट

सीमित मात्रा में लिए जाने वाले खाद्य पदार्थ

- अनाज जैसे चावल, गेहूं, ज्वार, बाजरा, आदि।
- दालें, मैक्रोनी, पास्ता, नूडल्स, बैड
- बिना मलाई का दूध
- आलू, शाकरकेद
- मछली, अंडे की सफेदी
- चीनी, गुड़ तथा नमक

प्रचुर मात्रा में लिए जाने वाले खाद्य पदार्थ

- हरी पत्तेवार सब्जियाँ तथा फल (उन सब्जियाँ को छोड़कर जिनका सोडियम स्तर ज्यादा हो जैसे पालक, चौलाई, घमिया तथा फूलगोभी और मूली)
- सूप, सलाद (स्वाद के लिए नमक की जगह नूंबू, समली तथा सिरके का इस्तेमाल किया जा सकता है)
- छाछ, नारियल पानी
- तहसुन तथा प्याज

अन्य लाभकारी निर्देश

- काम तथा आराम संबंधी आदतों को नियमित करना चाहिए।
- नियमित रूप से शारीरिक व्यायाम तथा योगाभ्यास करना चाहिए।
- खाद्य पदार्थों को खरीदने से पहले उनकी पोषण संरचना जानने हेतु खाद्य लेबल अच्छी तरह पढ़ना चाहिए।
अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइए।

a. उच्च रक्तचाप वह रोग है जिसमें ह्रदय के संकुचन की अवस्था में रक्त वाहिकाओं में रक्त का दबाव पारे के 140 mm Hg से ज्यादा रहता है।

b. उच्च रक्तचाप में अधिक सोडियम युक्त आहार का परामर्श दिया जाता है।

c. ह्रदय रोगों के आहार नियोजन में कॉलेस्ट्रॉल का कुल सेवन 200 mg प्रति दिन से कम होना चाहिए।

d. सोडियम के आहार में हल्के प्रतिबंध में प्रति दिन 1-2 ग्राम तक सोडियम का सेवन मान्य होता है।

e. ह्रदय रोगों में नियमित व्यायाम लाभकारी है।

9.10 सारांश
प्रस्तुत इकाई में हमें ह्रदय रोगों के प्रकार, लक्षण, जटिलताओं तथा आहार नियोजन पर चर्चा की। ह्रदय विकारों के कई प्रकार हैं जैसे अनुवांशिक दोष, वाल्न्यू में दोष होना, ह्रदय धमनी रोग, एन्जाइम पेक्टोरस, अनुरक्तता तथा ह्रदय में संक्रमण होना। इनके लिए कई व्यक्तिगत और व्यवहारिक कारक उत्तरदायी हैं जिनका उल्लेख इस इकाई में किया गया। ह्रदय रोगों की जटिलताओं का मुख्य रूप एथरोस्क्लरोसिस (Atherosclerosis) है जिसके विकास में संतुलित अतिरिक्त और भूमिका मुख्य है। उच्च रक्तचाप वह रोग है जिसमें ह्रदय के संकुचन की अवस्था में रक्त वाहिकाओं में रक्त का दबाव पारे के 140 mm Hg से ज्यादा या ह्रदय के विस्तारण की अवस्था में 90 mm Hg से ज्यादा रहता है। या दोनों अवस्थाओं में ज्यादा रहता है। मधुमेह और उच्च रक्तचाप दोनों ही रोगों में ह्रदय रोग, वृक्क रोग एवं अन्य पातक जटिलताओं का जोखिम रहता है। ह्रदय रोगों के आहार नियोजन में कैलोरी का प्रभाव, कस्ट को सीमित करना, अधिक नमक वाले खाद्य पदार्थों को सीमित करना तथा एक क्रियाशील जीवनशैली अपनाना प्रमुख है।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
अभ्यास प्रश्न 1
1. रक्त स्थान भरिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

a. अतालता (Arrhythmia)

b. एथेरोस्क्लेरोसिस (Atherosclerosis)

c. एंजाइना पेन्टोरिस (angina pectoris)

d. असंतृप्त वसीय अम्ल

e. खराब/ कम वांछनीय

f. ट्राईलिटिसराइड्स

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइए।

   a. सही
   b. गलत
   c. सही
   d. गलत
   e. सही

9.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. हृदय विकारों के प्रकारों एवं कारकों की व्याख्या कीजिए।

2. एथेरोस्क्लेरोसिस के विकास में वसा की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

3. उच्च रक्तचाप क्या है? इसके कारणों एवं लक्षणों की व्याख्या कीजिए।

4. हृदय रोगों में आहार नियोजन पर टिप्पणी कीजिए।
इकाई 10: यकृत और अग्न्याशय के रोगों में आहार

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 यकृत रोग: एक अवलोकन
   10.3.1 यकृत के विपर्यय कार्य
   10.3.2 यकृत विकार के कारण
10.3.3 हेपेटाइटिस (Hepatitis)
10.3.4 सिरोसिस (Cirrhosis)
10.3.5 यकृत कोमा (Hepatic Encephalopathy)
10.4 पित्ताशय के रोग
10.5 अमाशयशोथ (Pancreatitis)
10.6 सारांश
10.7 अथ्याच्छ प्रश्नों के उत्तर
10.8 नवन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

यकृत और अग्न्याशय शरीर के महत्वपूर्ण अंग हैं और प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा के चयापचय के लिए आवश्यक हैं। यकृत एक बहुक्रियाशील अंग है जो कई विटामिनों और खनिजों के भंडारण, सक्रियता और परिवर्तन में संयुक्त होता है। यकृत के रोग तीन या दीर्घकालीन, आनुवांशिक या अधिग्रहित हो सकते हैं। इनमें सबसे सामान्य है हेपेटाइटिस, सिरोसिस और यकृत एसफेलॉपाइथी।

यकृत रोगों से जुड़ी प्रमुख संपत्तियाँ शोष (atrophy), वसीय रिसाव, फाइब्रोसिस और यकृत कोशिकाओं का न्यूरोसिस हैं। पीलिया यकृत की सभी बीमारियों का एक लक्षण है जिसकी विशेषता है रक्त में बिलीबिन का उच्च स्तर।

अग्न्याशय एंजाइम और हाम और रहस्य का सार्वजनिक करता है जो कार्बोहाइड्रेट चयापचय को प्रभावित करते हैं। अग्न्याशय के विकारों रोगों में अग्न्याशयशोथ, अग्न्याशयी कैंसर, सिस्टिक फाइब्रोसिस और मधुमेह
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शामिल हैं: इस इकाई में हम यकृत रोगों और आनायश सम्बंधी विकारों के बारे में अध्ययन करेंगे तथा उनके आहार प्रबंधन के बारे में जानेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन के बाद आप निम्न कार्य कर सकेंगे:

- यकृत और अन्यायश की भूमिका, कारण और विकारों को समझें;
- यकृत और अन्यायश के रोगों के निदानों की व्याख्या करें; और
- यकृत और अन्यायश के सामायश रोगों के आहार और पोषण प्रबंधन को जानें।

10.3 यकृत रोग: एक अवलोकन

यकृत शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि है और यह जीवन के लिए आवश्यक कई जरूरी कार्य करता है। एक मानव यकृत का वजन सामायश रूप से 1.44-1.66 किलोग्राम होता है और यह हमारे शरीर के वजन का लगभग 2.5 से 3.0 प्रतिशत होता है। यकृत में खुद को पुनरीजित करने की क्षमता होती है और यह विभिन्न चयापचय यंत्रों के विषहरण (detoxification) के लिए महत्वपूर्ण है। यकृत पाचन और चयापचय के लिए आवश्यक जैव रासायनिक जैव और वसा के चयापचय के पपाद्य क्षेत्र में प्रमुख भूमिका निभाता है।

10.3.1 यकृत के विभिन्न कार्य

शरीर में यकृत आमतौर पर अन्य प्रणालियों और अंगों के संयोजन में लगभग 500 अलग-अलग कार्य के लिए उत्तरदायी माना जाता है। यकृत काबौहाइड्रेट, प्रोटीन, अमीनो अम्ल और वसा के चयापचय में प्रमुख भूमिका निभाता है।

काबौहाइड्रेट चयापचय: काबौहाइड्रेट चयापचय से संबंधित यकृत के कार्य निम्न सूचीबद्ध हैं:

- ग्लूकॉज से ग्लाइकोजन का निर्माण (ग्लाइकोजेनेसिस),
- ग्लाइकोजन का संशोधन और संग्रहण,
- कुछ अमीनो अम्लों द्वारा ग्लूकॉज का संशोधन,
- ग्लाइकोजेनेसिस के माध्यम से आवश्यक रूप से आवश्यकता होने पर रक्त में ग्लूकॉज का उत्पादन।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रोटीन चयापचय: प्रोटीन चयापचय से संबंधित कार्य निम्न दिए गए हैं:
- अमीनो अम्लों का डीआमीनेशन तथा ट्रांसअमीनेशन।
- थकके के कारकों तथा लाल रक्त कोशिका का उत्पादन।
- रक्त सीरम के एतुमिन प्रोटीन का उत्पादन।
- यकृत झोम्ब्रोपोटोलिट हार्मोन के उत्पादन का प्रमुख स्थान है जो अस्थि मन्ध्वा द्वारा प्लेटेट्स के उत्पादन को नियंत्रित करता है।

वसा चयापचय: वसा चयापचय से संबंधित कार्य निम्न दिए गए हैं:
- लिपिप्रोटीन, कोलेस्ट्रॉल, ट्राइगलिसराइड्स (लिपोजेनेसिस) का संश्लेषण,
- पित का उत्पादन जो वसा को पायसीकारी करते हैं और आहार से बिटामिन 'के' के अवशेषण में मदद के लिए आवश्यक है।

यकृत के अन्य महत्वपूर्ण कार्य
- यकृत में ग्लूकोज, विटामिन ए, विटामिन डी, विटामिन बी 12, विटामिन के, लोह लवण और तांबे सहित कई पदाथों का भंडार होता है।
- इंसुलिन और अन्य हार्मोन के विघटन के लिए यकृत उत्तरदायी होता है।
- यकृत एंजियोटिनोजेन हार्मोन को संश्लेषित करता है जो रक्तचाप बढ़ाने के लिए जिम्मेदार होता है।
- यकृत हाइड्रोजेन परऑक्साइड जैसे विषाले पदाथ के विघटन के लिए उत्पर्क का उत्पादन करता है।

10.3.2 यकृत विकार के कारण

दीर्घकालीन यकृत विफलता के सबसे आम कारणों में निम्न शामिल हैं:

आहार संबंधी कारक: वसा एवं कार्बोहाइड्रेट का अधिक सेवन और शारीरिक गतिविधि की कमी गैर-अल्कोहोल स्वस्थ यकृत रोग के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार होतें हैं। इसका कारण शरीरकरण, आयुगिक करण और बैठकरण के कारण बदलती जीवन तैती को माना जा सकता है। लंबे समय तक शराब के सेवन से यकृत की कोशिकाओं का वसीय अध: पतन हो जाता है जिस कारण यकृत क्षति होती है। कुछ खाद्य पदाथों में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के कारण विषाक्त पदाथ जैसे एफ्लाटिन
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

हो सकते हैं जो यकृत कोशिकाओं को नुकसान पहुँचा सकते हैं और यकृत सिरोसिस का कारण बन सकते हैं।

कुपोषण: कुपोषण कई कारणों से हो सकता है जैसे खाराब आहार सेवन, पोषक तत्व कुअक्षय, आंतों में ग्रेटान जीवों की अत्यधिक कमी, शीर्ष प्रोटीन संशोधन और ऊर्जा व्यय में वृद्धि, यकृत विकार के कारण हो सकते हैं।

संक्रामक घटक: संक्रमण के कारण यकृत संबंधी विकार सबसे आम हैं। सबसे आम संक्रामक घटक हैं:

• हेपेटाइटिस ए विषाणु: यह संक्रमक हेपेटाइटिस का कारण बनता है। इस विषाणु के प्रसार के लिए खाराब व्यतिक्रम और पर्यावरणीय स्वच्छता जिम्मेदार है। रोग मल-मौखिक मार्ग से फैलता है।

• हेपेटाइटिस बी विषाणु: यह विषाणु अनुचित तरीके से सिक्रामक सुई और रक्त आधान (blood transfusion) मार्ग के माध्यम से फैलता है।

• हेपेटाइटिस बी विषाणु: यह यकृत की बीमारी का बहुत सामान्य कारण नहीं है, लेकिन यकृत की क्षति के लिए जिम्मेदार हो सकता है।

• हेमोकोमेटोसिस (एक आनुवांशिक विकार जो शरीर में लोह लवण के अत्यधिक संशोधन तथा अवशोधन का कारण बनता है) भी यकृत की क्षति का कारण बन सकता है।

10.3.3 हेपेटाइटिस (Hepatitis)

हेपेटाइटिस एक संक्रामक रोग है जिसमें यकृत की कोशिकाओं में सूजन और खराबी आ जाती है। यह दो प्रकार का होता है:

1. बाइरल हेपेटाइटिस/टाइप ए: यह हेपेटाइटिस मल, भोजन व पानी द्वारा फैलता है। यह काफी हल्के रूप में होता है तथा इसकी दीर्घकालीन अवस्था बहुत कम ही स्थितियों में देखी जाती है।

2. सीरम हेपेटाइटिस/टाइप बी: यह मुख्यतः गान्धी, संक्रामित इन्जेक्शन लगाने की सुईयों आदि से फैलता है तथा बेहद खतरनाक और प्राणपाताक स्थितियां पैदा कर सकता है।

हेपेटाइटिस के लक्षण

हेपेटाइटिस के कुछ सामान्य लक्षण निम्न हैं: 
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- थकान
- उलटी आना व जी मिलाना
- बुखार
- अतिसार
- वजन में कमी होना
- पेट के निचले हिस्से में दर्द होना

इसके अलावा रोगी को पीलिया भी हो जाता है। पीलिया सभी यकृत विकारों का एक प्रमुख लक्षण है। रक्त में बिलिरूबिन (Bilirubin) के बढ़ने से पीलिया देखा जाता है। बिलिरूबिन लाल रक्त कणिकाओं (Red Blood Cells) के टूटने पर बनता है। सामान्य स्थितियों में यह बकृत में बनने वाले बाइल (Bile) के साथ मल द्वारा उत्सर्जित हो जाता है। इसी के कारण मल का एक निश्चित रंग होता है परन्तु किसी भी प्रकार के यकृत रोग में बिलिरूबिन का मल द्वारा उत्सर्जन नहीं हो पाता है।

इसके अलावा बिलिरूबिन का रक्त में जमाव शुरू हो जाता है। जमाव के कारण व्यक्ति की लचा आंखों के सफे द भाग आिद में पीलापन देखा जाता है। मृत का रंग भी गहरा पीला या भूरा हो जाता है। इस स्थिति को पीलिया कहते हैं।

हेपेटाइटिस के कारण

हेपेटाइटिस ए: वाइरस के कारण होता है। यह वाइरस मल, संक्रमित भोजन व गन्धे पानी द्वारा फैलता है। स्वच्छता एवं स्वस्थ रूपांतर का ध्यान न रखने में यह रोग एक व्यक्ति से दूसरे में फैलता है।

हेपेटाइटिस बी: रक्त के माध्यम से फैलता है। अगर कोई भी विचित्रस्वभाव औजार जैसे इंजेक्शन लगाने की सूची आदि हेपेटाइटिस के वाइरस से संक्रमित हो और किसी स्वस्थ व्यक्ति के रक्त के सम्पर्क में आ जाये तो वह असर रोग का शिकार हो जाता है।

हेपेटाइटिस का आहारीय उपचार

यकृत सभी पोषक तत्वों के पाचन व चयापचय की क्रिया में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अतः यकृत के संक्रमित हो जाने पर आहारीय उपचार रोगी को स्वस्थ होने में काफी मदद करता है।

विभिन्न पोषक तत्वों के प्रबंधन को निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

- ऊर्जा
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

रोगी को उच्च ऊर्जा वाला भोजन दिया जाता है ताकि रोगी को कुपोषण तथा अल्पभार से बचाया जा सके। हालांकि प्रारम्भ में रोगी को भूख न लगने व अनिच्छा के कारण इस प्रकार का भोजन लेने में तकलीफ हो सकती है।

अतः शुरुआत में 1500-2000 कैलोरी प्रतिदिन देना चाहिए। धीरे-धीरे ऊर्जा के सेवन को बढ़ाकर 20-30 प्रतिशत तक किया जा सकता है। चूँकि रोगी पूरी तरह बिस्तर पर ही होता है तो रोगी अगर अपनी सामान्य आवश्यकता के अनुसार भी भोजन ग्रहण करता है तो भी उसकी बढ़ी हुई ऊर्जा आवश्यकताओं को काफी हद तक पूरा किया जा सकता है।

प्रोटीन

यकृत रोग में प्रोटीन की आवश्यकताएँ बढ़ जाती हैं परन्तु अधिक प्रोटीन देने से यकृत उसे सामान्य नहीं पाता। संक्रमित यकृत की कार्यशीलता काफी कम हो जाती है। यादा प्रोटीन लेने पर यकृत प्रोटीन के अधिमोनियाः को यूरिया में परिवर्तित कर पाता है तथा उस पर और भार बढ़ जाता है।

अतः यकृत को उसकी स्थिति के अनुसार ही प्रोटीन देना चाहिए। हल्की समान्य खाना में 1.5 से 2.0 ग्राम प्रोटीन प्रति किलो शरीरक भार देना चाहिए। तीन संयोगिताँ की अवस्था में यकृत की कार्यशीलता काफी प्रभावित होते हैं। कारण सामान्य खाना में 1.5 से 2.0 ग्राम प्रोटीन प्रति किलो शरीरक भार देना चाहिए। तीन संयोगिताँ की अवस्था में यकृत की कार्यशीलता काफी प्रभावित होते हैं। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जो प्रोटीन स्रोत दे वह उच्च जैविक मूल्य का होना चाहिए।

काबोहाइड्रेट

ऊर्जा की बढ़ी हुई आवश्यकता को पूरा करने के लिए काबोहाइड्रेट भी उच्च मात्रा में देने चाहिए। आसानी से पचने वाले तथा सरल काबोहाइड्रेट के स्रोत आहार में पर्याप्त मात्रा में शामिल करने चाहिए। जैसे- चीनी, शहद, फल, फलूं का रस, आलू, अनाज आदि।

वसा

यकृत विकार में वसा के पाचन और अवशोषण पर काफी बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि बाइल नहीं बन पाता, अतः वसा की मात्रा को पट्टा देना चाहिए। हालांकि कुछ मात्रा में वसा न केवल भोजन का स्वाद बढ़ाती है अपितु जल्दी ठीक होने में मदद भी करती है। प्रत्येक रोगी की वसा के प्रति सहनशीलता अलग-अलग होती है। अतः हरेक विकार की स्थिति में कुल 40-50 ग्राम वसा देनी चाहिए। परन्तु ज्यादा ग्लाइबर अवस्था में वसा की मात्रा 20-30 ग्राम प्रतिदिन से अधिक नहीं देनी चाहिए। वसा की मात्रा के अलावा उसकी गुणवत्ता का भी ध्यान रखना चाहिए। रोगी को आसानी से पचने वाली वसा के स्रोत जैसे- मक्खन, अण्डा व नारियल तेल आदि का यादा प्रयोग करना चाहिए।
विटामिन

वसा के पाचन व अवशोषण में बाधा होने पर रोगी में विटामिन ए की कमी हो सकती है। अतः विटामिन ए के स्रोत जैसे हरी पतेदार सब्जियाँ, पीली सब्जियाँ व फलों को आहार में देना चाहिए। इसके अलावा ऊजारों की आवश्यकता बढ़ने पर विटामिन बी समूह की आवश्यकता बढ़ जाती है। यकृत की कोशिकाओं को फिर से स्वस्थ होने के लिए विटामिन सी भी ज्यादा देना चाहिए। इसलिए विटामिन बी समूह व विटामिन सी के भी उचित स्रोतों को आहार में शामिल करना चाहिए।

खनिज लवण

आहार में सभी खनिज लवणों मुख्यतः कैल्शियम व लौह लवण के उचित स्रोतों को शामिल करना चाहिए।

प्रचुर मात्रा में लिये जाने वाले भोज्य पदार्थ
- चीनी
- शहद
- अनाज व दालें
- दूध व दूध से बने उत्पाद
- अण्डा
- फल व सब्जियां

वर्जित भोज्य पदार्थ
- वसायुक्त व तले भोज्य पदार्थ
- धी, तेल
- तेज गन्ध वाली सब्जियां
- मीट
- शराब
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

10.3.4 सिरोसिस (Cirrhosis)

यह यकृत की दीर्घ स्थायी बीमारी है। इसमें यकृत की सर्क्रिय कोशिकाएं तीतरता से विघटित होने लगती हैं। यकृत में वसा का अत्यधिक प्रभाव होने लगता है। इसका मुख्य कारण मदिरापान है। सिरोसिस संक्रमण हेपेटाइटिस कुपोषण आदि से भी होता है।

सिरोसिस के लक्षण

सिरोसिस के प्रमुख लक्षण निम्न हैं:-

• जीमिचलाना
• उलटी आना
• पेट में दर्द होना
• पेट का फूल जाना
• पीलिया
• शारीरि दुर्लभता
• शारीर में सूजन आना
• रकाल्पता

सिरोसिस के कारण

सिरोसिस मुख्यतम: निम्न कारणों से होता है:-

• अत्यधिक मदिरापान करने से यकृत की कोशिकाओं की काफी ज्यादा मात्रा में क्षति होती है, जिसके साथ सिरोसिस हो सकता है।
• संक्रमण हेपेटाइटिस के लम्बे समय तक रहने से यकृत की स्थिति बिगड़ कर सिरोसिस हो सकता है।
• कुपोषण भी सिरोसिस का कारण हो सकता है। अत्यधिक मदिरापान करने वाले व्यक्ति भी कई पोषक तत्वों से वंचित रह जाते हैं। अतः मदिरापान, गरीबी इत्यादि कारणों द्वारा जनित कुपोषण यकृत में वसा के जमाव को बढ़ावा देता है। लम्बे समय तक अगर यह स्थिति बनी रहे तो सिरोसिस हो सकता है।
सिरोसिस की जटिलताएं

सिरोसिस यकृत विकार की कार्य गम्भीर स्थितियों में से है। यकृत सामान्य स्थितियों में प्रोटीन के चयापचय के फलस्वरूप बचने वाले अमोनिया को यूरिया में परिवर्तित कर मूत्र के द्वारा निष्कासित कर देता है। सिरोसिस में यकृत द्वारा यह प्रक्रिया न कर पाने के कारण यकृत में यूरिया का जमाव होने लगता है। यह प्राणघातक स्थिति होती है।

इसके अलावा यकृत के रोगप्रदस्त होने पर शरीर में जल व सोडियम का सन्तुलन बिगड़ जाता है। फलस्वरूप शरीर में मुख्यतः पेट/उदर में पानी का जमाव होने लगता है व शरीर मूज जाता है जिसे असाइटिस (Ascitis) कहते हैं।

सिरोसिस का आहारीय उपचार

सिरोसिस काफी गम्भीर स्थिति होती है। रोगी के आहारीय उपचार के अंतगत आहार में निम्न परिवर्तन किये जाते हैं- ऊर्जा

पोषक तत्वों के पाचन और अवशोषण न होने से रोगी कुपोषित हो जाता है। अतः ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ जाती है। परन्तु रोगी पूर्ण तरह से बिस्तर पर ही होता है। उसकी सामान्य ऊर्जा आवश्यकता को पूर्ण करना ही पर्याप्त होता है।

प्रोटीन

कुपोषण से उबरने के लिए रोगी को 1 से 1.5 ग्राम प्रति किलो शारीरिक वजन के हिसाब से प्रोटीन देना चाहिए। परन्तु अगर स्थिति ज्यादा खराब हो तो सिर्फ 0.3 ग्राम प्रोटीन प्रति किलो शारीरिक वजन देना चाहिए।

चूँकि अमोनिया का यूरिया में परिवर्तन बाधित हो जाता है अतः पशु जगत के प्रोटीन सोत आहार में नही देना चाहिए क्योंकि यह अधिक अमोनिया उत्पादित करते हैं। आहार में वनस्पति जगत के प्रोटीन सोतों को शामिल किया जाना चाहिए।

कार्यान्वयन
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

उच्च कार्बोहाइड्रेट आहार रोगी के लिए लाभदायक होता है आहार में सरल कार्बोहाइड्रेट के सोत जैसे चीनी, फल, फलों का रस, आलू आदि प्यास मात्रा में देने चाहिए।

वसा

वसा का पाचन वाढ़त होने से यकृत पर वसा का जमाव होने लगता है। अतः वसा को पूरी तरह वर्जित करना चाहिए। हालांकि रोगी के भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए कम मात्रा में मक्खन का प्रयोग किया जा सकता है।

विटामिन

विटामिन ए तथा विटामिन बी समूह के उचित सोतों को आहार में शामिल करना चाहिए।

खिचड़ी लवण

सिरोसिस के रोगियों में अक्सर कैल्शियम व मैम्पशियम की कमी देखी जाती है। अतः इन्हें आहार में प्यास मात्रा में देना चाहिए।

अगर रोगी की असाइटिस व सूजन की समस्या है तो सोडियम के सेवन पर भी रोक लगानी चाहिए।

रोगी को लगभग 500 मिलिग्राम (आधा ग्राम) नमक प्रतिदिन देना चाहिए।

प्रचुर मात्रा में लिये जाने वाले भोज्य पदार्थ

- चीनी, शहद
- अनाज व दालों
- दूध, अण्डा
- फल व सब्जियों

वर्जित भोज्य पदार्थ

- वसा युक्त खाद्य पदार्थ
- मांस
- शराब आदि

10.3.5 यकृत कोमा (Hepatic Encephalopathy)
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

यकृत विकार के कुछ मामलों में यकृत विषाक्त पदार्थों के निराकरण की क्षमता खो देता है। ये विषाक्त पदार्थ संचलन में जमा हो जाते हैं और चवापचवी तथा नैदानिक असामान्यताएं उत्पन्न करते हैं। प्रतिकूल प्रभाव अक्सर तंत्रिका सम्बंधी संकेतों और लक्षणों के रूप में प्रकट होते हैं और मस्तिष्क क्षति का कारण बनते हैं। इस स्थिति को हेपेटिक एन्सैफेलोपीथी या यकृत कोमा के रूप में जाना जाता है। यह एक तंत्रिका मनोविकार है जिसकी विशेषता क्षीण मानसिक स्थिति, तंत्रिका पेशीय असामान्यताएं और उच्च रक्त एमोनिया स्तर है। हेपेटिक एन्सैफेलोपीथी तीन (अत्यंतकृत) या क्रोनिक (दीर्घकालिक) हो सकती है।

कारक

यकृत में विकृति होने के कारण वह उत्सर्जन ग्रहण करती है जो यकृत कोमा के कारण बनता है। यह एमोनिया रक्त में जमा हो जाता है जो विभिन्न जटिलताओं जैसे मस्तिष्क की सूजन या अंग विफलता का कारण बनता है।

निम्न अन्य कारक जो यकृत कोमा की शुरुआत का कारण हो सकते हैं:
- जटरांग, रकसाव।
- दब और इलेक्ट्रोलाइट असामान्यताएं।
- उच्च या निम्न रक्त रक्त कोलाग्रंथ।
- दीर्घकालीन कब्ज और अप्लास्कर।
- शराब, रसायन, दवाओं से दीर्घकालीन सम्पर्क।

लक्षण

यकृत एन्सैफेलोपीथी की गंभीरता के विभिन्न स्तर के आधार पर संकेत और लक्षण भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। मध्यम यकृत एन्सैफेलोपीथी के लक्षणों में निम्न शामिल हैं:
- सोचने में कठिनाई।
- व्यक्तिवेतन में बदलाव।
- एकाग्रता में कमजोरी।
- हाथ से लिखने या अन्य छोटे कार्यों को करने में समस्या।
- उलझन।
- विस्मरण या भूलना।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

197
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- खराब निर्णय

गंभीर यकृ त एस्फेलोपैथी के लक्षण हैं:
- उत्तन।
- उन्नींदापन या सुस्ती।
- चितां।
- दौरे।
- व्यक्तित्व में गंभीर परिवर्तन।
- थकान।
- बोलने में उलझन।
- हाथों का काँपना।
- धीमी चाल।

यकृ त एस्फेलोपैथी के चार चरण हैं जिन्हें विभिन्न संकेतों और लक्षणों के माध्यम से पहचाना जा सकता है:

<table>
<thead>
<tr>
<th>चरण</th>
<th>लक्षण</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>I</td>
<td>हल्का ब्रम, उश्मजना, चिंतिंदापन, नींद की गड़बड़ी, ध्यान में कमी</td>
</tr>
<tr>
<td>II</td>
<td>सुस्ती, रुंग दिशातिक, अनुचित व्यवहार, उन्नींदापन</td>
</tr>
<tr>
<td>III</td>
<td>गंभीर उन्नींदापन, जागने पर असंगत वाणी, भ्रमित तथा आक्रामक व्यवहार</td>
</tr>
<tr>
<td>IV</td>
<td>कोमा</td>
</tr>
</tbody>
</table>

पोषण प्रबंधन

नाइट्रोजन संतुलन बनाए रखना और यकृ त एस्फेलोपैथी का इलाज करना पोषण प्रबंधन का मूल उद्देश्य है। पोषण प्रबंधन का मूल लक्ष्य पर्याप्त प्रोटीन और कैलोरी का सेवन बनाए रखने और उचित और समय पर पोषण संबंधी समर्थन द्वारा पोषक तत्वों की कमी को दूर करने का लक्ष्य होना चाहिए। इसलिए, जब तथा II चरण के हेपेटिक एस्फेलोपैथीके रोगी नियमित आहार को सहन कर सकते हैं। इसलिए, पोषण प्रबंधन में निम्न पर ध्यान देना चाहिए:
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- संचरण में एमोनिया के स्तर को कम करने के लिए उचित पोषण सहायता प्रदान करना।
- प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की देखभाल के लिए पर्याप्त ऊर्जा और प्रोटीन देना।
- प्रोटीन और वसा के अपघटन को रोकना।

ऊर्जा: प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण को रोकने तथा ऊतकों के अपघटन को रोकने के लिए बकृत एस्फेलोपैथी के रोगी हेतु 35-40 किलो कैलोरी प्रति किग्राहा शारीरिक वजन प्रतिदिन अनुशंसित की जाती है। हालांकि, मरीजों की स्थिति और गंभीरता के आधार पर जरूरत बहुत व्यक्तिपरक होती है।

प्रोटीन: बकृत एस्फेलोपैथी के रोगियों के लिए कम प्रोटीन आहार की सिफारिश की जाती है। एस्फेलोपैथी वाले रोगी को अक्सर पर्याप्त प्रोटीन नहीं मिलता है। 1 तथा II चरण के बकृत एस्फेलोपैथी वाले रोगियों में 0.5-0.8 ग्राम प्रोटीन प्रति किग्राहा शारीरिक भार प्रतिदिन प्रदान किया जाता है और बीमारी के III तथा IV चरण के मामलों में इसे 0.5 ग्राम प्रोटीन प्रति किग्राहा शारीरिक भार प्रतिदिन तक कम किया जा सकता है।

मांस प्रोटीन की तुलना में वस्तिपति प्रोटीन और केसीन (दृश्य प्रोटीन) मानसिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं। वस्तिपति प्रोटीन आहार का मामला स्वस्थ नाइटोजन व्‌यूजिहों के उत्सर्जन में भूमिका निभा सकता है। पॉल्ट्री, लाल मांस, अंडे और मछली जैसे वॉल्ख प्रोटीन खाद्य पदाथ्रों से बचना चाहिए।

कार्बोहाइड्रेट और वसा: प्रोटीन के कुशल उपयोग के लिए पर्याप्त कार्बोहाइड्रेट दिया जाना चाहिए क्योंकि आहार में प्रोटीन प्रतिबंधित होता है। हालांकि, अतिरिक्त कार्बोहाइड्रेट से बचा जाना चाहिए। कुल ऊर्जा का 30 से 35 प्रतिशत वसा से आना चाहिए, विशेष रूप से मध्यम श्रंखला वसीय अमल युक्त वसा।

विटामिन और खनिज: विटामिन ए और ई की कमी के कारण विटामिन के पूरकों की आवश्यकता हो सकती है। यदि जल प्रतिधारण और जलोदर होता है, तो सोडियम प्रतिबंध की आवश्यकता होती है। आयरन, कैलिशियम और सिजंक की कमी के लिए करीबी निमारनी होनी चाहिए।

द्रव प्रबंधन: यह रोगी की जलयोजन की स्थिति, मूत्र उत्पादन, शोफ की उपस्थिति और मूत्रवर्धक चिकित्सा पर निर्भर करता है। तदनुसार तत्काल पदार्थ का सेवन अनिश्चित किया जाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

**अभ्यास प्रश्न 1**

1. यकृत के कार्यों को संक्षेप में बताइए।

2. हेपेटाइटिस के लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

3. सिरोसिस के कारण और जटिलताओं की व्याख्या कीजिए।

10.4 पिताशय के रोग

पिताशय एक छोटे नाशपाती के आकार की धैर्य होती है, जो यकृत के नीचे स्थित होती है। पिताशय का मुख्य कार्य यकृत द्वारा उत्पादित पित को संग्रहित और संकेतित करना और आवश्यक होने पर इसे वसा के पाचन के लिए छोटी आंत में एक वाहन से पारित करना। पिताशय की दीवार के क्षय तथा पिताशय की बीमारियों के कारण होने वाला विन्दु श्रेणी दीर्घकालीन संक्रमण कोलीसिस्टाइटिस / गॉल्डर्स और कॉलेस्ट्रोल की सूजन का कारण बनता है।

कोलेलिथियसिस और कोलेस्ट्रोलिटिस: संक्रमण के कारण पिताशय श्रेणी की शोषक शक्ति प्रभावित होती है जिस कारण कोलेस्ट्रोल और अन्य पदार्थों के ठोस होने और पथरी का कारण बनती है। पिताशय में पथरी का निर्माण कोलेस्ट्रोलिटिस (cholelithiasis) कहलाता है। पिताशय की पथरी का आकार और संख्या भिन्न होती है जो कई छोटे पत्थरों या एक बड़े पत्थर के रूप में हो सकती है। पिताशय की पथरी के कई प्रकार होते हैं और प्रत्येक प्रकार का एक अलग कारण होता है।

- कोलेस्ट्रोल पित पथरी मुख्य रूप से कोलेस्ट्रोल से बनी होती है।
- वर्णक पित पथरी, पित पथरी का दूसरा सबसे आम प्रकार है।
- अन्य प्रकार के पित पथरी दुर्लभ होती जैसे एंटीब्रोटिक लेने वाले रोगियों में पथरी का निर्माण।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

पिताशय की पथरी वाले कुछ रोगियों में गंभीर पेट दर्द, मतली, उट्टी और पित नलिकाओं के पूर्ण स्क्रावट जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। नलिकाओं के स्क्रावट से संक्रमण का खतरा पैदा होता है जिससे कोलेसिस्टाइटिस हो सकता है।

कोलेसिस्टाइटिस और कोलेसिस्टाइटिस के आम संकेत और लक्षण निम्न हैं:
- वसायुक्त भोजन के बाद पेट के ऊपरी दाहिनी ओर दर्द होना,
- भूख में कमी, मतली, उट्टी,
- नलिकाओं के स्क्रावट के कारण पीलिया, निम्न-श्रेणी बुखार,
- चाय के रंग का मूत, हल्के रंग का मल।

जटिलताएं
- अपाक्ष रशोध, अपनाशय की सूजन।
- संक्रमण के परिणामस्वरूप पिताशय की धैल के छिद्र।
- सूजन के कारण पिताशय की धैल का विस्तार।
- पिताशय की धैल का केसर।
- पिताशय के तनुओं का नाश।

कारण
पुरूषों की तुलना में महिलाओं में पित पथरी विकसित होने की संभावना अधिक होती है। गर्भवती महिलाएं, हामीनल जन्म निष्कंच तरीकों का उपयोग करने वाली महिलाएं और हामीन प्रतिस्थापन चिकित्सा का उपयोग करने वाली महिलाओं में पित पथरी के निर्माण का जोखिम अधिक होता है। अन्य जोखिम वाले कारकों में पारिवारिक इतिहास, अतिरिक्त वजन, तेजी से वजन कम होना, वजन बढ़ना, कोरोना धमनी रोग, मधुमेह, परिव्रूत कार्बोहाइड्रेट और कैलोरी में उच्च लेवल रेसो में कम आहार का सेवन, खाद्य एल्जी, सीलिएक रोग तथा लेक्टोज असहिष्णुता आदि शामिल है।

कोलेसिस्टाइटिस का पोषण प्रवर्धन
पोषण प्रवर्धन का मुख्य उद्देश्य पिताशय की धैल के संकुचन को रोकने के लिए कम वसा वाले आहार प्रदान करके असुविधा को कम करना है। कुछ दिनों के लिए लगातार अंतराल पर दिए गए तत्त आहार से असुविधा को कम करने में मदद मिल सकती है। स्थिति व्यवस्थित होने पर स्पष्ट
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

तारं सूप, श्मियां चाय, दूध और परिष्कृत अनाज को आहार में शामिल किया जा सकता है। पिता पत्नी व रोगी की रोजगार के लिए कोई विशिष्ट आहार उपचार उपलब्ध नहीं है। ऊर्जा की जरूरतों को मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट द्वारा पूरा किया जाना चाहिए। वसा का सेवन प्रति दिन 20 - 30 ग्राम तक सीमित होना चाहिए।

आहार में घुड़स्वमी गर्म या चीजें खाऊँ तो फल और सब्जियां तथा साधारण अनाज उत्पादों को शामिल किया जाना चाहिए। परिष्कृत शर्करा जैसे मौसम पदार्थ, कैम्स, मीठे डेस्ट्री और अतिरिक्त चीनी वाले खाद्य पदार्थों से बचा जाना चाहिए। कोलेस्टरिलियम रोगियों के लिए कुछ आहार युक्तियाँ निम्न हैं:

• कम वसा वाले दृष्टि उत्पाद खाएं।
• लाल मांस से बचें।
• तले खाए दूध या दूध उत्पाद के स्थान पर बेक किए हुए, उबाले हुए खाद्य पदार्थों को चुनें।

वार्षिक खाद्य पदार्थ: तले खाए और वसा युक्त भोजन, सूखे मेवे, मिठाइयाँ, मसाले, पापड़, अचार, चटनी, गाढ़े सूप और पेय तथा मसाले से बनी रोटी।

अनुभव खाद्य पदार्थ: गेहूं, मक्का, ज्वार, बाजरा, गर्मी से बनी गोटी। धुली हुई दालें, मछली या चिकन, दूध और दूध से बने पदार्थ (सप्रेटा दूध के पदार्थ), सब्जियाँ, साबुत अनाज, चीनी वाले खाद्य पदार्थ को बचा जाना चाहिए।

कोलेस्ट्रॉटिपस के लिए पोषण प्रवृत्ति

तीन मामलों में रोगी दृष्टि अवधि के लिए फिशिकल रूप से भोजन नहीं ही ले पाता है। ऐसे में खिलाने के अन्य तरीकों की कोशिश की जानी चाहिए। जैसे कि कम वसा वाले आहार की सस्ताना की जानी चाहिए। दृष्टिकोणिक स्थिति में रोगी को लेने समय तक कम वसा वाले आहार की उपलब्धता होती है। एक दिन में पांच से छह बार कम मात्रा में भोजन करने की सलाह दी जाती है। चाहे वह पांच तंत्र में पिता को सामान्य करता है।

अनुभव खाद्य पदार्थों

• सब्जियाँ जैसे टमाटर, गाजर, पालक, आलू और ककड़ी
• पास्ता
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- सादा दही
- ताजे फल जैसे पुलम, अंजीर, तरबूज
- कम वसा वाले दृढ़ उत्पाद जैसे पनीर
- साबुत अनाज खाद्य पदार्थ (सम्पूर्ण गेहूं, जई, चोकर युक्त अनाज)
- अखरोट और बादाम
- मसूर की दाल

चर्बित खाद्य पदार्थ

- लाल मांस (मूर्त, बटर, भेड़ का मांस), अंडे, तली हुई चीजें, मसालेदार भोजन, चॉकलेट और आइसक्रिम, काबोनेटेड पेय, कॉफी या काली चाय जैसे पेय
- बीस्स, फूलगोभी
- केला, खुबानी, आड़ और सेब जैसे फल
- दूध, आइसक्रिम और पनीर जैसे दृढ़ उत्पाद

10.5 अग्नाशयशोथ (Pancreatitis)

अग्नाशय एक लंबी, सपाट ग्रंथि है जो पेट के ऊपरी भाग में होती है। अग्नाशय एंजाइम और हामाँन का उत्पादन करता है जो पाचन में मदद करते हैं और रक्त शरकरा को नियंत्रित करते हैं।

अग्नाशय के दो मुख्य कार्य हैं: बहु:सावी कार्य जो पाचन में मदद करता है और अंत:सावी कार्य जो रक्त शरकरा को नियंत्रित करता है।

अग्नाशयी रस पेट में भोजन की प्रतिक्रिया में नलिकाओं की एक प्रणाली में प्रवाहित किए जाते हैं। अग्नाशयी रस और पित्र रस जो ग्रहणी (duodenum) में मुक्त किए जाते हैं, शरीर में वसा, काबोनेटेड और प्रोटीन को पचाने में मदद करते हैं।

अग्नाशय के अंत:सावी पटक में आइलेट कोशिकाएं होती हैं जो महत्वपूर्ण हामाँनों को सीधे रक्तप्रवाह में बनाती और साबित करती हैं। एक मुख्य अग्नाशयी हामाँन इंसुलिन और ग्लुकागन हैं जो रक्त शरकरा के स्तर को नियंत्रित करते हैं।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

अमात्योशोध अमन्याशाय की सूजन है जो तब होती है जब अमात्य एंजाइम साव का निर्माण करते हैं और स्वयं अंग का पाचन करने लगते हैं। अमात्योशोध तीत्र या दीर्घकालीन हो सकता है। तीत्र अमात्योशोध अचानक विकसित होता है जो अधिकाँशत: पित्त की पथरी या शराब के सेवन के परिणामस्वरूप होता है। तीत्र अमात्योशोध जीवन के लिए खतरा हो सकता है, लेकिन अधिकांश रोगी पूरी तरह से ठीक हो जाते हैं।

दीर्घकालीन अमात्योशोध में अमात्याशाय में क्षति होती रहती है जिसके फलस्वरूप समय के साथ यह अपनी कार्यशीलता छोड़ देता है। दीर्घकालीन अमात्योशोध के अधिकांश मामले शराब के दुर्पयोग के परिणामस्वरूप होते हैं, लेकिन कुछ मामले वंशानुगत भी हो सकते हैं।

लक्षण

अमात्योशोध के संकेत और लक्षण भिन्न हो सकते हैं, जो अमात्योशोध के प्रकार पर निर्भर करता है।

तीत्र अमात्योशोध के लक्षण निम्नलिखित हैं:
- पेट के ऊपरी भाग में दर्द
- पेट में दर्द जो पीठ तक प्रवाहित होता है।
- पेट दर्द जो खाने के बाद और अधिक होता है।
- बुखार
- तेज नब्ज
- जी मिलताना
- उल्टी
- पेट छूने पर कोमल प्रतीत होना।

दीर्घकालीन अमात्योशोध के लक्षण निम्नलिखित हैं:
- पेट के ऊपरी भाग में दर्द
- बिना कोशिश किए बजन कम होना
- वसा युक्त बदलूदर मल (स्टीमरिया)

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 204
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

कारण

अनाशयशोध के कई कारण हो सकते हैं।

• शराब का सेवन
• पित की पधरी
• पेट की सरजरी
• भूपान करना
• सिस्टिक फाइब्रोसिस
• अनाशयशोध का पारिवारिक इतिहास
• रक्त में कैल्शियम का उच्च स्तर (हाइपरकैल्सीमिया)
• रक्त में ट्राइग्लिसराइड का उच्च स्तर
• संक्रमण
• पेट में चोट लगना

जटिलताएं

अनाशयशोध गंभीर जटिलताओं का कारण बन सकता है, जिसमें निम्न शामिल हैं:

• संक्रमण: तीव्र अनाशयशोध अन्याय को बैक्टीरिया और संक्रमण के लिए भेद बना सकता है। अनाशयी संक्रमण गंभीर होते हैं और इन्हें गहन उपचार की आवश्यकता होती है।
• पेट की विफलता: तीव्र अनाशयशोध पेट की विफलता का कारण हो सकता है।
• शास संबंधी समस्याएं: तीव्र अनाशयशोध शरीर में परिवर्तन लाती है जो फेफड़ों के कार्य को प्रभावित करती है, जिससे रक्त में ऑक्सीजन का स्तर गिर जाता है।
• मधुमेह: दीर्घकालीन अनाशयशोध से अन्याय में इंसुलिन उत्पादक कोशिकाओं को नुकसान होता है जो मधुमेह को जन्म दे सकता है।
• कुपोषण: तीव्र और दीर्घकालीन दोनों अनाशयशोध अन्याय से एंजाइमों का उत्पादन कम करने का कारण बन सकते हैं जो पोषक तत्वों के अपवाद के लिए आवश्यक होते हैं और कुपोषण का कारण बन सकते हैं।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• अनाशय का केसर: अन्यायाशय में लंबे समय तक सूजन अनाशय के केसर के लिए एक जोखिम कारक है।

पोषण प्रबंधन

पोषण प्रबंधन रोग की गंभीरता और रोगी की पोषण स्थिति पर निर्भर करता है।

तीव्र अनाशयशोथ के लिए पोषण प्रबंधन

• सामान्य पोषण स्तर में हलके अनाशयशोथ के मामलों में कम वसा वाले मौखिक आहार की सिफारिश की जाती है।
• खराब पोषण की स्थिति में हलके / गंभीर अनाशयशोथ के मामलों में मौखिक आहार के साथ अंतःशिरा पोषण तथा हेलीकोप्टर पोषण की सिफारिश की जाती है।
• गंभीर तीव्र मामलों में ऊजाअ आवश्यकताएं 15-20 किलोकैलोरी प्रति किलोग्राम शरीर भार प्रतिदिन के अनुसार होती हैं। प्रोटीन का सेवन 1.2 से 1.5 ग्राम प्रति किलोग्राम शरीर भार प्रतिदिन या कुल ऊजाअ का 15-20 प्रतिशत होना चाहिए।
• मादक पेय निषिद्ध होते हैं। इसके अलावा, कैफीन, निकोटीन और गैस्ट्रिक उत्तेजकों को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।
• पर्याप्त कैलोजिम और वसा में चुलनशील विटामिन अनुपूरक प्रदान किए जाने चाहिए।
• आहार में पर्याप्त मात्रा में विटामिन सी, बी-कॉम्प्लेक्स, और फोलिक अम्ल के साथ-साथ जस्ता भी शामिल होना चाहिए।

दीर्घकालीन स्थिति का पोषण प्रबंधन

• मधुमेह होनेवाली स्थिति में कार्बोहाइड्रेट का सेवन सीमित होना चाहिए। बार-बार छोटी मात्रा में भोजन (दिन में 4-8 बार) दिया जाना चाहिए।
• 1.0-1.5 ग्राम प्रति किलोग्राम शरीर के वजन प्रतिदिन का प्रोटीन अंतर्ग्रहण आमतौर पर पर्याप्त और अच्छी तरह से सहन किये जाते हैं।
• आहार का वनस्पति वसा से समूद्र होने पर वसा से कुल कैलोरी का 30% लिया जाना चाहिए।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• यदि वजन न बढ़ रहा हो और स्टीटोरिया (वसीय मल) की स्थिति बनी रहती है, तो वसा अवशोषण को बढ़ाने के लिए मध्यम श्रृंखला ट्राइलिस्राइड्रूस (MCT) लिए जा सकते हैं।
• कम रेशेयु आहार की सिफारिश की जाती है, क्योंकि रेशा एंजाइमें को अवशोषित कर पोषक तत्वों के अवशोषण में देरी कर सकते हैं।
• रोगी की सामान्य स्थिति में सुधार और वजन बढ़ाने के लिए एक नियमित आहार परामर्श महत्वपूर्ण है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. कोलेजियलिसिस और कोलेस्टाइटिस क्या हैं? इनके आम संकेतों और लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

2. अम्बाशयशोथ के क्या कारण हो सकते हैं?

10.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने यकृत और अम्बाशय की भूमिका, कार्यों और विकारों को समझा। इस इकाई में हमने यकृत और अम्बाशय के रोगों के निदानों के बारे में जाना और यकृत और अम्बाशय के सामान्य रोगों के आहार और पोषण प्रबंधन के विषय में जानकारी ली।

10.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

इकाई का मूल भाग देखें।

अभ्यास प्रश्न 2

इकाई का मूल भाग देखें।
10.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. हेपेटाइटिस तथा सिरोसिस के लक्षणों तथा आहारीय नियोजन की व्याख्या कीजिए।

2. हेपेटिक एसाफ़ॉलोपेथी या यकृत कोमा क्या है? इसकी जटिलताओं तथा आहारीय प्रबंधन पर चर्चा कीजिए।

3. अमानायशोथ के प्रकारों, जटिलताओं तथा पोषण प्रबंधन पर प्रकाश डालिए।
खण्ड 3: उपचारात्मक पोषण एवं आहार चिकित्सा-II
11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मधुमेह की अवस्था
11.4 मधुमेह के प्रकार
11.5 मधुमेह के लक्षण
11.6 मधुमेह के कारण
11.7 मधुमेह की जटिलताएं
11.8 मधुमेह में चयापचय
  1.8.1 काबोहाइड्रेट का चयापचय
  1.8.2 प्रोटीन का चयापचय
  1.8.3 वसा का चयापचय
11.9 मधुमेह में उपचार
  1.9.1 मधुमेह का आहारीय उपचार
  1.9.2 मधुमेह का इस्लामिन द्वारा उपचार
  1.9.3 मधुमेह का दवाओं द्वारा उपचार
  1.9.4 मधुमेह में व्यायाम
1.10 ग्लाइकेमिक सूचकांक (Glycaemic Index)
11.11 सारांश
11.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
11.13 निर्देशात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना
मधुमेह चयापचय से सम्बन्धित रोग है। साधारण भाषा में मधुमेह अथवा डायबिटीज को शर्करा की बीमारी भी कहते हैं। इसमें काबोहाइड्रेट का चयापचय पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है, साथ ही प्रोटीन तथा वसा के चयापचय पर भी प्रभाव पड़ता है। काबोहाइड्रेट की अन्तिम इकाई ग्लूकोज कहलाती है। काबोहाइड्रेट के पाचन होने पर वह ग्लूकोज के रूप में रक्त द्वारा अवशोषित होता है और
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

आक्सीकरण द्वारा कोशिकाओं को ऊर्जा प्रदान करता है। परन्तु ग्ल्यूकॉज की अतिरिक्त मात्रा इन्सुलिन नामक हामिन की उपस्थिति में ग्लाइकोजन में परिवर्तित होकर शरीर के विभिन्न भागों में विशेषकर यकृत में एकत्रित हो जाती है। इन्सुलिन की कमी होने पर चयापचय की क्रिया में बाधा उत्पन्न होती है। अतिरिक्त ग्ल्यूकॉज ग्लाइकोजन में परिवर्तित नहीं होता है, जिससे रक्त में ग्ल्यूकॉज का स्तर बढ़ जाता है और यह ग्ल्यूकॉज मूत्र के द्वारा निष्कासित होने लगता है। मधुमेह के कारण दीर्घकाल में अग्नि, गुदा तथा तंत्रिका तंत्र में स्थाई परिवर्तन हो जाते हैं। प्रस्तुत इकाई में आप मधुमेह रोग के बारे में विस्तारपूर्वक जानेंगे तथा मधुमेह में आहार नियोजन का अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के परस्पर शिक्षात्मक;

• मधुमेह रोग के प्रकार के विषय में जान पाएंगे;
• मधुमेह रोग के लक्षणों एवं कारणों की जानकारी प्राप्त करेंगे; तथा
• मधुमेह में आहारीय उपचार के बारे में जानेंगे।

11.3 मधुमेह की अवस्था

मधुमेह की अवस्था में ग्ल्यूकॉज की मात्रा प्रति 100 मिली लीटर रक्त में 100 मिली ग्राम से अधिक होती है। जब रक्त में यह मात्रा 180 मिली ग्राम प्रति 100 मिली लीटर से अधिक हो जाती है तो ग्ल्यूकॉज गुदा की कोशिकाओं से छनकर अधिक मात्रा में मूत्र द्वारा शरीर से बाहर विस्फोट होने लगता है। इस अवस्था को ग्ल्यूकोसूरिया (Glycosuria) कहते हैं।

काबाहाइड्रेट का पाचन होने पर वह ग्ल्यूकॉज के रूप में रक्त द्वारा अवशोषित होकर वकृत में पहुँचता है। वकृत में वह ग्लाइकोजन में परिवर्तित होकर संग्रहित हो जाता है। ग्ल्यूकॉज का ग्लाइकोजन में परिवर्तित इन्सुलिन (Insulin) हामिन पर निर्भर करता है। इन्सुलिन पित्तशाय में उपस्थित नालिका बिहीन ग्रन्थि आइलेट्स ऑफ लिंगरहंस (Islets of Langerhans) की बीटा कोशिकाओं से सीधा रक्त में संरचित होता है। जब रक्त में इसकी कमी हो जाती है तो काबाहाइड्रेट के चयापचय को प्रभावित करते हुए मधुमेह का रोग उत्पन्न हो जाता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 211
11.4 मधुमेह के प्रकार

मधुमेह के कई प्रकार हैं जिनका विवरण निम्न है।

• इन्सुलिन पर निर्भर मधुमेह या टाइप 1 मधुमेह: इस प्रकार का मधुमेह 40 वर्ष की आयु से पूर्व हो जाता है। इन्सुलिन की कमी या अनुपस्थिति के कारण कार्बोहाइड्रेट के चयापचय में बाधा उत्पन्न होती है। इससे रक्त में बहुत तेजी से ग्ल्यूकोज एकजित हो जाता है एवं रोगी की स्थिति बेहद गम्भीर होने पर अचानक इस रोग के बारे में पता चलता है। इस प्रकार के मधुमेह में रोगी पूरी तरह से (कृत्रिम इन्सुलिन गोलियों या इनजेक्शन के रूप में) इन्सुलिन पर निर्भर रहता है। रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा में अधिक उतार चढाव होने के कारण अक्सर रोगी मृत्यु हो जाता है।

• बिना इन्सुलिन पर निर्भर मधुमेह या टाइप 2 मधुमेह: यह मधुमेह 40 वर्ष की आयु के बाद देखा जाता है। इस रोग से पीछा व्यक्ति अधिकारियों: अधिक वजन के होते हैं तथा बहुत अधिक थकान का अनुभव करते हैं। इस प्रकार के मधुमेह की शुरुआत धीरे-धीरे इन्सुलिन की मात्रा सीमित होने के कारण होती है। इस प्रकार के मधुमेह रोगी यदि उचित आहारी उपचार ले तो बिना किसी दवाई या कृत्रिम सहायता के एक स्थिर स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

• कुपोषण जिनित मधुमेह: प्रोटीन ऊजाम कुपोषण की स्थिति में यकृत द्वारा सही से क्रिया न करने पर इन्सुलिन के साथ या भी असर पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप कुपोषण जिनित मधुमेह हो जाता है।

• गर्भावस्था जिनित मधुमेह: कई बार गर्भावस्था में कुछ महिलाओं का रक्त ग्ल्यूकोज बढ़ जाता है। इसे गर्भावस्था जिनित मधुमेह कहते हैं। यह अत्यन्तकालीन होता है और उचित आहार में परेशान करने से इस पर नियंत्रण पाया जा सकता है। प्रसव के उपरान्त यह समाप्त हो जाता है, परन्तु इस प्रकार की महिलाओं में बाद की अवस्था में मधुमेह होने की संभावनाएं अधिक रहती है।

11.5 मधुमेह के लक्षण

मधुमेह के निम्न लक्षण होते हैं:

• बुद्धमूलता (Polyurea): मूत्र का बार-बार अनावश्यक गति से विसर्जन होना बहुमूलता कहलाता है। रक्त में अधिक ग्ल्यूकोज होने से गुदा द्वारा शरीर से अतिरिक्त ग्ल्यूकोज का मूत्र द्वारा
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

निदािनक बढ़ जाता है। इस कारण मधुमेह में अधिक मात्रा में बार-बार मूत्र उत्सर्जन होता है
tाकि ग्लुकोज व्यापद मात्रा में शरीर से बाहर निकल सके।

• पॉलीडिप्सिया/अधिक व्याप लगाना (Polydipsia): मूत्र के रूप में जल का अधिक
निदािनक होने से रोगी को व्याप अधिक लगाती है।

• पॉलीफागिया/भूख में वृद्धि (Polyphagia): पोषक तत्वों का पूर्ण उपयोग न होने के कारण
कोशिकाओं की मांग पूरी नहीं हो पाती और रोगी को अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है।

• मूत्र द्वारा पानी की अत्यधिक मात्रा शरीर से बाहर निकल जाने के कारण कोशिकाओं में पानी
की कमी हो जाती है जिससे निर्जलीकरण की स्थिति पैदा हो जाती है।

• सामान्य कमजोरी तथा शरीर भार में कमी: पोषक तत्वों का समुचित उपयोग न होने के
कारण शरीर के भार में कमी होने लगती है और कमजोरी आने लगती है।

• प्रतिरोधक क्षमता में कमी: रोगी के शरीर में संक्रामक रोगों से बचने की शक्ति कम हो
जाती है जिससे विभिन्न संक्रमण जैसे तपेदिक आवार होने की सबसे बड़ी होती है।

• ग्लुकोज के पेशी में जीवाणु तीव्रता से वृद्धि करते हैं जिससे रीती के जनन अंगों में खुजली,
चोट लगने पर घाव का दर से भरना तथा त्वचा (विशेषकर गर्दन के पीछे या कमर पर) में छोटे-
छोटे दाने या फोड़े देखे जा सकते हैं।

• अधिक समय तक मधुमेह पर नियन्त्रण न रखने से रोगी को उच्च रक्तचाप हो जाता है तथा
मोतियाबिन्द होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

• लम्बे समय तक अनिवार्यत मधुमेह की स्थिति में कीटोसिस की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
कीटोसिस एक चावचाव अवस्था है जिसमें रोगी के शरीर में रक्त या मूत्र में कीटोन निकायों का
उच्च स्तर देखा जाता है।

11.6 मधुमेह के कारण

मधुमेह के कुछ कारण निम्न हैं:

• वंशानुष्ठान: मधुमेह माता-पिता से सन्तान में स्थानान्तरित होने वाला रोग है। अगर माता-पिता
दोनों मधुमेह से ग्रस्त हैं तो उनकी सभी सन्तानों को मधुमेह से ग्रस्त होने की सम्भावना होती है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

यदि माता या पिता में से किसी एक को मधुमेह है तो सन्तान को या तो प्रत्यक्ष रूप से मधुमेह होगा अथवा वह इस रोग के वाहक के रूप में अपनी सन्तान को यह रोग स्थानान्तरित करेगा।

• उम्र: आयु वृद्धि के साथ-साथ शारीरिक अंगों में क्रियाशीलता की सीमितता के कारण 80 प्रतिशत व्यक्तियों में 50 वर्ष के बाद इस रोग को प्राप्त करने की सम्भावना बढ़ जाती है।
• लिंग: कम उम्र में पुरुषों में मधुमेह होने की सम्भावना अधिक रहती है। वहीं दूसरी ओर महिलाएं प्रोड्रावस्था के दौरान इससे प्रस्त होती हैं।
• मोटापा: मोटे व्यक्तियों में यह रोग अधिक पाया जाता है। अधिकतर प्रोड्रावस्था के मधुमेह रोगी मोटापे से प्रस्त देखे जाते हैं। मोटापे या कम क्रियाशील व्यक्तियों में इस्लुलिन निर्माण सीमित होने पर मधुमेह होने की सम्भावना बढ़ जाती है। जो व्यक्ति अधिक कार्बोहाइड्रेट युक्त खाद्य पदार्थ जैसे मीठे खाद्य पदार्थ, आलू, चावल का अधिक सेवन करते हैं, उन व्यक्तियों के रक्त में ग्ल्यूकोज मात्रा अधिक बढ़ जाती है जिससे पिताश्य अधिक इस्लुलिन साबित करता है।
• संक्रमण: कुछ संक्रमण या यकृत बीकारों में इस्लुलिन के साथ में अधिक रहता है।
• हामोन्स: कुछ नलिक विहीन हामोन्स जैसे पिट्यूटरी प्रग्निया का अग्रभाग (Anterior Pitutary) अधिकक्रमक प्रग्निया (Adrenal Cortical Hormone), थायराइड प्रग्निया (Thyroxine Hormone) इस्लुलिन हामोन्स के कार्य के विपरीत कार्य करते हैं। सामान्यतः सभी हामोन्स का आपस में संतुलन बना रहता है परन्तु जब यह संतुलन बिगड़ जाता है तो इस्लुलिन का कार्य प्रभावित होता है तथा ग्ल्यूकोज, ग्लाइकोजन में परिवर्तन नहीं हो पाता और रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा बढ़ जाती है।
• मानसिक तनाव या चिंता: मानसिक तनाव चिंता या अस्थिरता की स्थिति लम्बे समय तक रहने से कई बार मधुमेह देखा जाता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• गर्भावस्था: गर्भावस्था में कार्बोहाइड्रेट के चयापचय पर प्रभाव पड़ता है जिस कारण जिन
  सियों में मधुमेह की सम्भावना अधिक होती है उनमें गर्भावस्था के समय मधुमेह रोग हो जाता है।

11.7 मधुमेह की जटिलताएं

प्लूकोज का यही रूप से चयापचय न हो पाने के कारण शरीर में पर्याप्त ऊर्जा उत्पन्न नहीं हो पाती।
इस कमी को पूरा करने के लिए वसा का ऑक्सीजन तेजी से होने लगता है। वसा के ऑक्सीजनक रूप से चयापचय के कारण वक्रत में कीटोन बोडीज बनने लगते हैं एवं रक्त में एकत्रित होने लगते हैं। कीटोन बोडीज अमलीय प्रकृति के होने के कारण शरीर में अमलीयता की बढ़ता देते हैं। यह बेहद गम्भीर स्थिति होती है। इसमें रोगी को मूर्छ आ जाती है। यदि समय रहते स्थिति को नियंत्रित न किया जाए, तो रोगी की मृत्यु भी हो जाती है। कई बार रोग की भयंकर तीव्रता की स्थिति में रोगी कई दिनों तक मूर्छित अवस्था में ही पड़ा रहता है। जिसे डायबिटिक कोमा (Diabetic Coma) कहते हैं।

मधुमेह रोग की तीव्र अवस्था में नाड़ी सम्बन्धी विकार भी उत्पन्न हो जाते हैं जैसे पागलपन, चिड़चिड़ापन, विशिष्टता इत्यादि। मधुमेह के कारण आँखों के स्वस्थ एवं रोशनी पर भी प्रभाव पड़ता है। आँखों में उपस्थित रक्त कोशिकाओं से रक्त साफ होने लगता है। इससे अंधापन होने की सम्भावना बढ़ जाती है। कभी कभी आँखों की दृष्टि चुंबली (Blurring of Vision) हो जाती है।

मधुमेह के कारण अंधापन का उपयोग ऊर्जा प्रदान करने में किया जाता है, जिससे इसका मुख्य कार्य निर्माणात्मक गौण हो जाता है। परिणामत: नई कोशिकाओं का निर्माण नहीं हो पाता है। साथ ही तनुओं में हुई दूर फूट की मरम्मत भी नहीं हो पाती है। अत: मांसपेशियाँ कमजोर व निर्बल हो जाती हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रित्त स्थान भरिए।
   a. प्लूकोज का ग्लाइकोजन में परिवर्तन .......................... हामों पर निर्भर करता है।
   b. मधुमेह में पोषक तत्त्वों का पूर्ण उपयोग न होने के कारण कोशिकाओं की मांग पूरी नहीं हो पाती और रोगी को अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है। इस अवस्था को ................................. कहते हैं।
11.8 मधुमेह में चयापचय

1.8.1 कार्बोहाइड्रेट का चयापचय

मधुमेह की स्थिति उत्कों में ग्ल्यूकोज का ऑक्सीकरण कम हो जाता है। इस कारण रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। सामान्यत: एक प्रोड ध्यान के रक्त में ग्ल्यूकोज 80-120 मिग्रा प्रति 100 मिली (Blood) होता है। परंतु इस्मुलिन के अल्प सारण से रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा काफी बढ़ जाती है तथा मूं द्वारा ग्ल्यूकोज विसर्जित होने लगता है। इस स्थिति को ग्लाइकोसूरिया (Glycosuria) कहते हैं। उल्लंघनों में ग्ल्यूकोज की ऑक्सीकरण ध्वस्त करने का काम करती है जिससे ग्ल्यूकोज ग्लाइकोज में परिवर्तित नहीं हो पाता और रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। मधुमेह की स्थिति में रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा 400-600 मिग्रा प्रति 100 मिली तक बढ़ जाती है।

शारीरिक एवं मानसिक कार्य करने के लिए ध्यान को ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा ग्ल्यूकोज से प्राप्त होती है। शरीर में ग्ल्यूकोज की प्राप्ति के तीन स्रोत हैं- कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन तथा वसा। कार्बोहाइड्रेट से 100 प्रतिशत ग्ल्यूकोज प्राप्त होता है। प्रोटीन से अम्लीयों अम्ल प्राप्त होते हैं तथा अम्लीयों अम्ल का 58 प्रतिशत भाग ग्ल्यूकोज में बदलता है। वसा से वसीय अम्ल प्राप्त होते हैं तथा वसीय अम्ल का 10 प्रतिशत भाग ग्ल्यूकोज में परिवर्तित होता है।

1.8.2 प्रोटीन का चयापचय

कार्बोहाइड्रेट का शरीर में पूर्णत: चयापचय नहीं होने के कारण प्रोटीन ही ऊर्जा प्रदान करने का कार्य करने लग जाता है। यद्यपि प्रोटीन का मुख्य काम निर्माणात्मक होता है, परंतु कार्बोहाइड्रेट के चयापचय में गड़बड़ी होने से ऊतक प्रोटीन ही ऊर्जा देने का काम करने लग जाता है, जिसके कारण प्रोटीन का विपरीत होने लगता है। परिणामस्वरूप शरीर में आवश्यक अम्लीयों अम्ल की कमी हो जाती है तथा शरीर में क्राकांत नाइट्रोजन सन्तुलन हो जाता है। प्रोटीन के बिना नाइट्रोजन वाला भाग ग्ल्यूकोज में बदल जाता है जिसके कारण रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा में और भी अधिक वृद्धि हो जाती है। मांसपेशियों का क्षय हो जाता है तथा रोगी कमजोर एवं दुर्बल हो जाता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

1.8.3 वसा का चयापचय

मधुमेह की स्थिति में काबीज का चयापचय ठीक प्रकार से नहीं हो पाने के कारण यकृत में ग्लाइकोजन का निर्माण बन्द हो जाता है। इस कारण यकृत में ग्लाइकोजन की मात्रा अत्यंत न्यून हो जाती है। शरीर के विभिन्न आंतरिक तथा बाहरी क्रियाओं को करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। परन्तु मधुमेह की अवस्था में ऊर्जा प्रदान करने हेतु ग्ल्यूकोज का उपयोग नहीं किया जाता है।

1. वसा ही शरीर को ऊर्जा प्रदान करने हेतु ऐसे अम्ल (Acetate) तथा वसीय अंश में विभक्त हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में वसीय अंश के चयापचय के फलस्वरूप ऐसीटोन तथा कीटोन बॉडीज में ऐसीटॉएस्टिक अम्ल (Acetoacetatic acid) पॉलीहाइड्रॉक्सी ब्यूटाइरिक अम्ल (Polyhydroxy Butyric Acid) होते हैं। इसका निष्कासन गुरुङ द्वारा नहीं हो पाता है। अतः रक्त में इसकी मात्रा बढ़ जाती है, जिससे व्यक्ति के शरीर में निरजलीकरण तथा बेहोशी जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। साथ ही रक्त में कोलेस्ट्रॉल तथा ट्राइग्लिसराइड की मात्रा बढ़ जाती है।

1.9 मधुमेह में उपचार

मधुमेह के रोग का कोई स्थायी उपचार नहीं है, परन्तु इसे कुछ हद तक नियंत्रित रखा जा सकता है। मोटापे के कारण व्यक्ति को मधुमेह है तो वजन पर नियंत्रण रखना अत्यंत आवश्यक है। आहार में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके मधुमेह पर अंकुश लगाया जा सकता है। दवाइयाँ द्वारा भी इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। मधुमेह का उपचार निम्नानुसार किया जा सकता है:

- आहार द्वारा
- इंसुलिन इंजेक्शन देकर
- खाने की दवाओं द्वारा
- व्यायाम द्वारा

1.9.1 मधुमेह का आहारी उपचार

आहार द्वारा मधुमेह को नियंत्रित किया जा सकता है। मधुमेह से ग्रसित रोगी उपयुक्त आहार द्वारा एक सामान्य जीवन व्यतीत कर सकता है। आहार द्वारा मधुमेह का उपचार करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि आहार से प्राप्त ऊर्जा रोगी व्यक्ति के कुल शारीरिक ऊर्जा मांग से 5 प्रतिशत कम हो।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

कैलोरी (ऊजाण): मधुमेह के रोगी के लिए आहार तालिका बनाने से पहले रोगी को दी जाने वाली कैलोरी को जानना अत्यंत आवश्यक है। अलग-अलग वजन के रोगी को तथा अलग क्रियाशीलता वाले व्यक्ति को दी जाने वाली कैलोरी की मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है। व्यक्ति ऊज्रा काबोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन से प्राप्त करता है। विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों में इन तीनों पोषक तत्वों को घटा बढ़ाकर ऊज्रा की पूर्ति की जाती है, जैसे मोटे व्यक्ति के आहार में वसा की मात्रा कम दी जाती है तथा प्रोटीन की मात्रा बढ़ दी जाती है। एक सामान्य क्रियाशील एवं वजन वाले व्यक्ति को 30 कैलोरी प्रति किलोग्राम शारीरिक भार के बराबर ऊज्रा की आवश्यकता होती है अर्थात् 60 किलोग्राम शारीरिक भार वाले साधारण क्रियाशील व्यक्ति को 1800 कैलोरी ऊज्रा की आवश्यकता होती है तथा यह ऊज्रा निम्न पोषक तत्वों से निम्नलिखित अनुपात में प्राप्त की जाती है:

• काबोहाइड्रेट से 50 प्रतिशत।
• प्रोटीन से 20 प्रतिशत।
• वसा से 30 प्रतिशत।

गर्म प्रदेशों की अपेक्षा ठंडे प्रदेशों में 10 प्रतिशत ऊज्रा की अधिक आवश्यकता होती है।

ऊज्रा की आवश्यकता (प्रति किलोग्राम भार)

<table>
<thead>
<tr>
<th>क्रमांक</th>
<th>वजन</th>
<th>क्रियाशीलता</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td></td>
<td>कम</td>
<td>मध्यम</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
<td>कमजोर व्यक्ति (Under Weight)</td>
<td>35</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>साधारण वजन के व्यक्ति (Standard Weight)</td>
<td>30</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>मोटे व्यक्ति (Over Weight)</td>
<td>20</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>शैतान पर लेटे व्यक्ति के लिए</td>
<td>25</td>
</tr>
</tbody>
</table>

काबोहाइड्रेट: सामान्यतः मधुमेह के रोगी के आहार में काबोहाइड्रेट की अधिक कमी नहीं की जाती है लेकिन उन रोगियों के आहार में काबोहाइड्रेट की मात्रा घटायी जाती है जिनको इस्लाम देने की आवश्यकता नहीं होती है। काबोहाइड्रेट की मात्रा का निर्धारण रोगी के रक्त ग्लूकोज स्तर, मूत्र परीक्षण एवं इस्लाम के उपलब्धता पर निर्भर करती है। काबोहाइड्रेट की मात्रा का रोगी पर काफी प्रभाव पड़ता है क्योंकि काबोहाइड्रेट देने से कैयोटर मॉडीफाइड होने शुरु हो जाती है और रक्त में ग्लूकोज की मात्रा और बढ़ जाती है। मूत्र में कैयोटर की उपस्थिति रोकने के लिए कम से कम 100
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

**ग्राम काबोहाइड्रेट तथा रक्त में ग्ल्यूकोज की मात्रा सामान्य बनाये रखने के लिए अधिक से अधिक**

260 ग्राम काबोहाइड्रेट व्यक्ति के आहार में उपस्थित होने चाहिए। मोटे व्यक्ति के लिए बसी की मात्रा को घटाकर काबोहाइड्रेट की मात्रा 60 प्रतिशत तक बढ़ा दी जाती है। व्यक्ति की आवश्यक काबोहाइड्रेट की मात्रा ग्राम में इस प्रकार भी निकाल सकते हैं:

कुल आवश्यक कैलोरी को 1/10 बाँ भाग = काबोहाइड्रेट (ग्राम)

उदाहरण:

1800 कैलोरी x \( \frac{1}{10} \) = 180 ग्राम काबोहाइड्रेट

अर्थात 180 x 4 = 720 कैलोरी उर्चा काबोहाइड्रेट से प्राप्त होती है।

काबोहाइड्रेट की मात्रा के अलावा उसके प्रकार का भी मधुमेह में काफी महत्व है। रोगी को काबोहाइड्रेट के ऐसे स्रोत नहीं देने चाहिए जो शरीर में जाते ही तुरंत ग्ल्यूकोज में बदल जाते हैं।

उदाहरण के लिए चीनी, मिष्टान्न इत्यादि। अब तु जिटल काबोहाइड्रेट जैसे साबुत दाल, अनाज, रोगी कूद आहार इत्यादि जो धीरे; धीरे ज्यादा करते हैं, लाभदायक सिध्द होतेंगे।

**युज़ा**:

मधुमेह के रोगी के आहार में व्यास की कम मात्रा होनी चाहिए साथ ही असंतृप्त बसी जैसे रिजाइड तेल, सरस्स का तेल, मूंगफली का तेल इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए जिससे रक्त में कोलेस्ट्रॉल का स्तर न बढ़ पाये तथा धमनियाँ को मोटा होने से बचाया जा सके। दूध व उसके उत्पादों में काफी भारी पाई जाती है। अतः रोगी की बिना मलाई वाला अथवा टॉन्ड दूध व उससे बने उत्पाद ही देने चाहिए। शरीर को आवश्यक कुल ऊर्चा का 30 प्रतिशत भाग व्यास से प्राप्त करना चाहिए।

**प्रोटीन**:

मधुमेह के रोगी को प्रोटीन की उम्मीदी आवश्यकता होती है जितनी कि एक स्वस्थ व्यक्ति को। इसलिए आहार में रोगी को आवश्यकतानुसार प्रोटीन देनी चाहिए। सामान्यतः ऊर्चा का 15 से 20 प्रतिशत प्रोटीन द्वारा पूरा होना चाहिए। मधुमेह में रोगी की प्रोटीन आवश्यकता एवं शारीरिक रोग के अनुसार 1.0 से 1.5 प्रति किलो शारीरिक वजन तक हो सकती है। रोगी को सामान्य में से अधिक प्रोटीन इसलिए दिया जाता है क्योंकि रोगी के शरीर में इन्सुलिन की कमी या अनुपस्थिति में पर्याप्त ग्ल्यूकोज का उपयोग नहीं किया जाता है। परन्तु अधिक मात्रा में प्रोटीन देने से ग्ल्यूकोनोजिनिजनिजसिस (Gluconeogenesis) द्वारा रोगी के शरीर में ग्ल्यूकोज की मात्रा बढ़ जाती है, जो रोगी को असंतृप्त बसी जाती है। प्रोटीन का चयापचय बढ़ाने से रोगी की मांसपेशियां कमजोर पड़ जाती हैं एवं वजन घटने लगता है। इसके अलावा बच्चों, गर्भवती एवं धारी
महत्वाकांकी को प्रोटीन की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। रोगी के आहार में प्रोटीन के उच्च जैविक मूल्य वाले सोत एवं उच्च प्रोटीन मूल्य वाले आहार जैसे अण्डा, सोयाबीन, दलें, फलियाँ, अनाज इत्यादि पर्याप्त मात्रा में शामिल करने चाहिए।

विटामिन: विटामिन वी समूह के विभिन्न सतह कार्बोहाइड्रेट के चयापचय के लिए आवश्यक होते हैं। इनकी कमी होने से कोशिकाओं में पावरहून्यक अम्ल (Pyruvic Acid) तथा लैक्टिक अम्ल (Lactic Acid) की मात्रा बढ़ जाती है जिससे नाड़ी ऊतक क्षति प्रस्तुत होने लगते हैं। नाड़ी तन्त्र की क्षति को रोकने के लिए विटामिन वी समूह अधिक मात्रा में देना चाहिए। साथ ही अन्य विटामिनों की भी आहार में अधिकता होनी चाहिए।

खिनज लवण: मधुमेह के रोगी को खिनज लवण की सामान्य मात्रा की आवश्यकता पड़ती है लेकिन मधुमेह के साथ-साथ यदि रोगी उच्च रक्त चाप से पीड़ा होता है तो उसके आहार में सोडियम की मात्रा कम करनी पड़ती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही अथवा गलत बताइए।
   a. मधुमेह की स्थिति ऊतकों में ग्लूकोज का ऑक्सीकरण अधिक हो जाता है।
   b. सामान्यतः एक ग्रीड व्यक्ति के रक्त में ग्लूकोज 80-120 मिली मॉन्ट्री रक्त (Blood) होता है।
   c. एक सामान्य क्रियाशील एवं वजन वाले व्यक्ति को 30 कैलोरी प्रति किलोग्राम शारीरिक भार के बराबर ऊजार की आवश्यकता होती है।
   d. मधुमेह की स्थिति में सरल कार्बोहाइड्रेट का सेवन अन्य लाभकारी है।

1.9.2 मधुमेह का इम्स्लिन द्वारा उपचार

इम्स्लिन रक्त में उपस्थित ग्लूकोज के स्तर को कम करता है परन्तु इसका प्रयोग चिकित्सक की देखरेख में किया जाना चाहिए क्योंकि इसके प्रयोग से रक्त शर्करा की मात्रा एकदम से कम हो जाने का भय होता है जिसे हाइपोग्लाइकेमिया (Hypoglycaemia) कहते हैं। इसलिए इम्स्लिन का उपयोग रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में सहायक रूप में ही किया जाना चाहिए। इसके अलावा इम्स्लिन गोली या इजेक्शन के माध्यम द्वारा दिया जाता है। एक सामान्य ग्रीड व्यक्ति में लगभग 40 गूंटित इम्स्लिन प्रतिदिन लगभग 5 दिनों की द्विपिकाओं की बी-कोशिकाओं के स्तर नियंत्रित होता है। यही इम्स्लिन रक्त शर्करा
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

को सामान्य बनाये रखता है। परन्तु मधुमेह के रोगी में इसका सावधान अत्यन्त कम हो जाता है। अतः रोगी को कृत्रिम इंसुलिन की आवश्यकता होती है। बाजार में मुख्यतः दो प्रकार के इंसुलिन मिलते हैं:

1. घुलनशील इंसुलिन (Soluble Insulin)
2. डिपोट इंसुलिन (Depot Insulin)

घुलनशील इंसुलिन: यह स्वच्छ तत्व रूप में रहता है। यह अधिक प्रभावी भी होता है। परन्तु इसका प्रभाव कम अवधि (6 घंटे) के लिए ही होता है। 6 घंटे के बाद पुनः इसकी आवश्यकता होती है। किशोर रोगियों के लिए और ऐसे रोगी जिन्हें आहार पर नियन्त्रण रखना सम्भव नहीं है, घुलनशील इंसुलिन अधिक लाभदायक होता है।

डिपोट इंसुलिन: यह इंसुलिन घुंघाता तथा दूध की तरह दिखता है। यह घुलनशील इंसुलिन से अधिक लाभकारी एवं उपयोगी होता है क्योंकि इसका एक ही इंजेक्शन देने से पूरे दिन (10-12 घंटे) रक्त में ट्यूकोज स्तर सामान्य बना रहता है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के इंसुलिन भी बाजार में उपलब्ध हैं जैसे ट्यूकोज इंसुलिन, आइसोफेन इंसुलिन, प्रोटामिन जिंक इंसुलिन इत्यादि। इंसुलिन की अधिक मात्रा से कई जटिलताएं भी उत्पन्न हो जाती हैं जैसे:

• बहुत अधिक तथा बार-बार भूख लगना।
• अधिक रूप से धारावधार करना।
• बहुत अधिक मात्रा में पसीना निकलना।
• मानसिक विचलन होना।
• बहुत अधिक तथा थकान महसूस करना।
• आलस्य एवं सुस्ती होना।
• वस्तुओं का दोहरा प्रतिबिंब दिखाई देना।
• डायबिटिक कोमा।

इंसुलिन का उपयोग आहार के साथ करने पर अच्छे परिणाम दर्ज किए जाते हैं।

1.9.3 मधुमेह का दवाओं द्वारा उपचार
कुछ चिकित्सकों का मानना है कि मधुमेह रोग में केवल दो ही दवाएं अत्यधिक प्रभावशाली होती हैं:
नेत्रानिक एवं उपचारात्मक पोषण

बाइगुनाइड्स (Biguanides) और सुल्फोनाइल्यूरिया (Sulphonylurea)

ये दवाएं अनान्य तरीके से इस्मुलेन के साथ को उत्तेजित करती हैं तथा यकृत की विमुक्ति को रोकती हैं। जिन रोगियों के रक में अस्थायी यकृत (Hyperglycaemia) होता है तथा भोजन द्वारा रोग नियंत्रण में नहीं आ पाता है, उन रोगियों को उपस्थित दवाएं देने उचित रहता है। इनके अतिरिक्त अन्य दवाएं भी हैं जैसे Tolbutamide, Daonil, Carbutamide, Chlorpropamide इत्यादि।

खाने वाली दवाओं का प्रयोग निम्नांकित अवस्थाओं में नहीं किया जाना चाहिए:
1. बालकों एवं किशोरों में
2. गर्भवती माताओं में
3. मधुमेह के कोई विपरीत प्रभाव अथवा आकस्मिक जटिलता उत्पन्न हो जाने पर
4. बहुत लम्बे समय तक दवाओं का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। आहार पर नियंत्रण रखना आवश्यक है।

दवाओं के अन्य भाग में कभी-कभी भूख की कमी, उल्टी आना, दस्त, पीलिया आदि लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। अतः इनका प्रयोग चिकित्सक की देखरेख में ही किया जाना चाहिए।

1.9.4 मधुमेह में व्यायाम

चिकित्सक इस बात पर जोर देते हैं कि मधुमेह के रोगी को अपनी दिनचर्या में रोग के उपचार हेतु व्यायाम पर ध्यान देना चाहिए। व्यायाम में तनमुना, योगासन, हल्के व्यायाम इत्यादि को शामिल करना चाहिए। व्यायाम से शरीर का संचित कार्बोहाइड्रेट उपयोग में आ जाता है। रोगी व्यायाम से अपने वजन पर नियंत्रण कर सकते हैं। इसके अलावा व्यायाम द्वारा रक्त में उपस्थित बसा की मात्रा को कम करके बहुत रोगों से बचा जा सकता है। बिना इस्मुलेन पर निर्भर मधुमेह के रोगी भी व्यायाम द्वारा अपने शारीरिक चिह्न-चिह्न के स्तर में सुधार लाकर शरीर में बनने वाली इस्मुलेन की मात्रा को बढ़ा सकते हैं। अतः मधुमेह में आहारीय उपचार के साथ-साथ व्यायाम भी अति आवश्यक है।

1.10 ग्लाइकेमिक सूचकांक (Glycaemic Index)

किसी भी भोज्य पदार्थ के रक्त शर्करा पर पड़ने वाले प्रभाव को ग्लाइकेमिक सूचकांक कहते हैं। प्रयोगकर्ता भोज्य पदार्थ का रक्त शर्करा पर अलग-अलग प्रभाव पढ़ता है जो उस भोज्य पदार्थ में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट के प्रकार एवं उसकी मात्रा पर निर्भर करता है। सरल प्रकार के कार्बोहाइड्रेट
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शीघ्र अवशोषित होकर रक्त में चुल कर रक्त शर्करा की मात्रा एकदम बढ़ा देते हैं। जबकि दूसरी ओर जटिल कार्बोहाइड्रेट दे से पचने के कारण रक्त शर्करा धीर-धीर बढ़ते हैं। अतः भोज्य पदार्थों की इस विशेषता के कारण मधुमेह के रोगी को कम स्वास्थ्यसम्मिल कूचकांक वाले भोज्य पदार्थ दिये जाते हैं जिससे रक्त शर्करा नियंत्रित रहे। सामूहिक दालें, गरमी युक्त फल, सब्जियाँ, मेथी, दही, मोटा अनाज जैसे ज्वार, मक्का, मदुमा आदि का ग्लाइसेमिक सूचकांक काफी कम होता है। अतः उपयुक्त खाद्य पदार्थों को रोगी के आहार में पर्याप्त मात्रा में शामिल करना चाहिए।

कृत्रिम शर्करा (Artificial Sweeteners)

मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति जो शर्करा या चीनी का उपयोग नहीं कर सकते, वह खाने में मीठापन लाने के लिए कृत्रिम शर्करा का उपयोग करते हैं। यह वह कृत्रिम पदार्थ होते हैं जो खाने में मीठे होने के कारण चीनी या शर्करा के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं परंतु यह ऊर्जा प्रदान नहीं करते। यह बाजार में सरलता से उपलब्ध है जैसे शुगर फ्री इथार्ड। ये गोलीया या पाउडर के रूप में उपलब्ध होते हैं।

निम्नलिखित कृत्रिम शर्कराएं मानव उपयोग के लिए अधिकृत हैं:

• Aspartame: यह NutraSweet, Equal या शुगर टूनिवन ब्रांडों के अंतर्गत बेचा जाता है। Aspartame सामान्य घरेलू चीनी की तुलना में 200 गुना अधिक मीठा होता है।

• Acesulfame पोटशियम: इसे Acesulfame K के रूप में भी जाना जाता है। यह घरेलू चीनी की तुलना में 200 गुना अधिक मीठा होता है। यह खाना पकाने में उपयोग हेतु उपयुक्त है और सनेट या स्वीट वन ब्रांडों के तहत बेचा जाता है।

• Advantame: यह कृत्रिम शर्करा सामान्य घरेलू चीनी की तुलना में 20,000 गुना अधिक मीठा होता है और खाना पकाने और बेकिंग के लिए उपयुक्त होता है।

• Saccharin: सैक्स्कराइन ब्रांड के तहत बेचा जाने वाली यह कृत्रिम शर्करा घरेलू चीनी की तुलना में 13,000 गुना अधिक मीठा होती है और खाना पकाने और बेकिंग के लिए उपयुक्त होती है।

• Neotame: न्यूटूम ब्रांड के तहत बेचा जाने वाली यह कृत्रिम शर्करा घरेलू चीनी की तुलना में 700 गुना अधिक मीठा होता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक घोषण

• Sucralose: सुक्रालोज, जो कि 600 गुना अधिक मीठा होता है, चीनी, अमलीय खाद्य पदार्थों के साथ पकाने और मिश्रण के लिए उपयुक्त होता है।

मधुमेह के रोगी को देने योग्य भोज्य पदार्थ

• अनाज: गेहूं, जी, बाजरा, गेहूं व चने का मिश्रित अनाज।
• दालें: सभी प्रकार की दालें।
• सब्जियां: सभी प्रकार की सब्जियां विशेषकर करेला, परमल।
• फल: जामुन, सतंबर, अमरूद, अनार, बेर आदि।
• दूध एवं दुध उत्पाद: वसा रहित दूध, दही, मध्य, छेना।
• मांस: सभी प्रकार के मांस, मछली, अण्डा।
• सैकरीन: कृशिम शर्करा।

मधुमेह के रोगी के लिए वजित भोज्य पदार्थ

• चीनी, गुड़, गने का रस, राहद, मिठाइयाँ, शर्करा युक्त सभी प्रकार के पेय पदार्थ।
• आलू, अरबी, जिमीकन्द, शाकरकन्द, चुकन्द इत्यादि।
• चावल, रिफाइन्ड अनाज।
• किशामिश, छुआरा, खुबानी, अंजीर।
• पेस्ट्री, केक, चॉकलेट, आइसक्रीम, मलाई वाला दूध।
• केला, आम, अंगूर।
• तले हुए भोज्य पदार्थ।

मधुमेह के रोगी के लिए आदशण आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची/आहार</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः काल</td>
<td>गुरगुरा पानी (नींबू या मेथी के बीजों का)</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चाय पीकी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>समय</td>
<td>नाश्ता</td>
<td>पोषण वातावरण</td>
</tr>
<tr>
<td>-------</td>
<td>--------</td>
<td>-----------------</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह का नाश्ता</td>
<td>पोहा</td>
<td>1 टेट (छोटी)</td>
</tr>
<tr>
<td>नमकीन दलिया</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>वसा रहित दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>एक फल (संतरा, अनार)</td>
<td>1</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर का खाना</td>
<td>रोटी</td>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>दाल (मिः)</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>रायता</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>हरी सब्जी/करेले की सब्जी</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>सलाद (खीरा, प्याज, टमाटर इत्यादि)</td>
<td>1 छोटी टेट</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>3 बजे</td>
<td>सब्जियों का सूप</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>5 बजे</td>
<td>पीवी चाव</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>नमकीन बिस्कुट</td>
<td>4</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>भुना चना</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>9 बजे (रात्रि का भोजन)</td>
<td>रोटी (मडुवा)</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>मूंग की दाल</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>भंडी की सब्जी</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>दही</td>
<td>1 कटोरी</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>सलाद</td>
<td>1 छोटी टेट</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>सोते समय</td>
<td>वसा रहित दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>

अभ्यास प्रश्न 3

1. निम्न वाक्यों हेतु एक शब्द दीजिए।
   a. रक्त शर्करा की मात्रा का एकदम से कम होना।............................................
   b. धुंधला तथा दूध की तरह दिखने वाला इंसूलिन।............................................

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय 225
c. अनानाय या इन्सुलिन के साथ को उत्तेजित करने वाली दवाएं जो यकृत से लू की
    विकृति को रोकती हैं।.................................................................

d. भोजन पदार्थ का रक्त शर्करा पर पड़ने वाले प्रभाव।.................................

e. मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति जो शक्कर या चीनी का उपयोग नहीं कर सकते, वह खाने में
    मीठापन लाने के लिए इसका उपयोग करते हैं।.................................................................

11.11 सारांश

शरीर में इन्सुलिन हारमोन के उत्पादन में कमी अथवा दोष से उत्पन्न रोग मधुमेह कहलाता है। इस
    अवस्था में रोगी के शरीर में रक्त शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है क्योंकि कार्बोहाइड्रेट का चयापचय
    ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। इससे रोगी कमजोर हो जाता है लम्बे समय तक अनियमित रक्त
    शर्करा के कारण अनेक समस्याएं जैसे मौती विष, गुदा का खराब होना आदि हो सकते हैं। उचित
    चिकित्सक परामर्श द्वारा एवं उपचारात्मक पोषण द्वारा मधुमेह के रोगी को न केवल स्वास्थ्य लाभ
    मिलता है अपितु रक्त शर्करा की मात्रा को नियंत्रित करने में मदद मिलती है।

11.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. रिक्त स्थान भरिए।
    a. इन्सुलिन (Insulin)
    b. पौलीफेज्या/भूख में वृद्धि (Polyphagia)
    c. कार्बोहाइड्रेट
    d. डाइबिटिक कोमा (Diabetic Coma)

2. सही अथवा गलत बताइए।
   a. गलत
   b. सही
   c. सही
   d. गलत

3. निम्न वाक्यों हेतु एक शब्द दीजिए।
   a. हाइपोग्लाइसिमिया (Hypoglycaemia)
नैदाइन्य एवं उपचारात्मक पोषण

b. डिपोट इन्सुलिन (Depot Insulin)
c. बाइग्यूआइड्स (Biguanides) और सल्फोनाइलूरिया (Sulphonylurea)
d. ग्लाइैसेमिक सूचकांक (Glycaemic Index)
e. कृत्रिम शर्करा (Artificial Sweeteners)

11.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. मधुमेह क्या है? इसके प्रकार, कारण एवं लक्षण लिखें।
2. मधुमेह की जटिलताओं का वर्णन करें।
3. मधुमेह रोग में वर्जेंट खाद्य पदार्थों के विषय में लिखें।
4. निम्न पर टिप्पणी करें:
   • ग्लाइैसेमिक सूचकांक
   • मधुमेह में उपचारात्मक पोषण
   • मधुमेह में व्यायाम
5. मधुमेह में चयापचय पर विस्तारपूर्वक टिप्पणी किजिए।
इकाई 12: गुदें के विकारों में आहार

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मानव शरीर में गुदें की भूमिका
12.4 गुदें के कार्य
12.5 गुदें के रोगों के प्रकार
12.6 गुदें के रोगों के कारण
12.7 गुदें के रोगों के लक्षण
12.8 गुदें के विभिन्न रोगों में उपचारात्मक आहार
12.9 सारांश
12.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
12.11 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना
शरीर में चयापचय की क्रिया के उपरान्त शरीर के लिए बेकार एवं हानिकारक पदार्थ भूर गुदें के द्वारा शरीर से बाहर विसर्जित कर दिये जाते हैं। इस तरह शरीर में सभी पदार्थों का संतुलन बना रहता है।
गुदें मानव शरीर के महत्वपूर्ण अंग हैं जो गुदें से नाइट्रोजन को गुरूवार के रूप में उत्सर्जित करते हैं। मानव शरीर में दो गुदें होते हैं जो प्रतिदिन 130-150 लीटर तरल पदार्थ विसर्जित करते हैं। इन कार्यों द्वारा गुदें की विलक्षण क्षमता का पता चलता है तथा इस कार्य के किसी भी स्तर पर साधारण सी परोस्नी के एक बड़ी समस्या बन सकती है। आहार में बदलाव या सुधार द्वारा गुदें के रोगों की गम्भीरता को कम किया जा सकता है। प्रस्तुत अध्याय में आप गुदें के विभिन्न विकारों तथा उनसे सम्बंधित उपचारात्मक आहार एवं पोषण के बारे में जानें।

12.2 उद्देश्य
इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् शिक्षार्थी;
• गुदें की महत्वपूर्ण भूमिका के विषय में जान पाएं;
• गुद्धे से सम्बन्धित बीमारियों की जटिलताओं, कारण, लक्षण आदि की जानकारी प्राप्त कर पाएं; तथा
• गुद्धे के रोगों में आहारीय उपचार के विषय में जानकारी प्राप्त कर पाएं।

12.3 मानव शरीर में गुद्धे की भूमिका

एक स्वस्थ मानव शरीर में दो गुद्धे होते हैं तथा प्रत्येक गुद्धे में लगभग दो लाख छोटी-छोटी इकाइयों होती हैं जिन्हें नेरोन्स कहते हैं। एक नेरो नकारात्मक कार्य है जो एक गुद्धे का होता है। इसलिए इसे गुद्धे की इकाई कहा जाता है। प्रत्येक नेरोन को दो भाग होते हैं:

मेलपिज़ियन नलिका (Malpighian tubule) एवं रुक्कुर नलिका (Renal tubule)

मेलपिज़ियन नलिका भी दो भागों से मिलकर बनती है:

बोमेन कैप्स्यूल (Bowman Capsule) तथा ग्लोमेरल्स कैप्स्यूल (Glomerulus Capsule)

ग्लोमेरल्स कैप्स्यूल खून को लाने व ले जाने बांधी नलिकाओं से मिलकर बनती है और यही वह भाग है जहाँ शरीर में सभी पदार्थों का सन्तुलन बना रहता है। एक व्यक्ति इंसान के शरीर में तुल शारीरिक भार का 7-8 प्रतिशत खून की मात्रा होती है। इसलिए 4-5 लीटर खून की मात्रा गुद्धे के द्वारा प्रवाहित होती है। एक स्वस्थ शरीर में प्रतिदिन 130-150 लीटर तरल पदार्थ खून द्वारा फिल्टर होता है जबकि 1.5 लीटर मूत्र ही 24 घंटे में शरीर से निकाला गया होता है।

यह दोनों गुद्धे एक मुड़ी के आकार के होते हैं तथा रीढ़ के निचले स्तर में शरीर के दोनों तरफ स्थित होते हैं।

12.4 गुद्धे के कार्य

शरीर में गुद्धे के निम्न कार्य हैं:

• उपाध्याय अन्तिम पदार्थों को शरीर से बाहर करना।
• ग्लूकोज, जल एवं कुछ उपयोगी लवणों को पुन: अवशोषित करना एवं शरीर में इसका सन्तुलन बनाये रखना।
• रक्त के परामर्शी दाब (osmotic pressure) को नियंत्रित करना।
• अम्ल क्षार की मात्रा को सन्तुलित बनाये रखना।
12.5 गुर्दे के रोगों के प्रकार

रोग की स्थिति में तरल पदार्थ, विभिन्न रसायनों तथा अपशिष्ट उत्पादों को शरीर से निष्कासित करने की गुर्दे की क्षमता पर गंभीर प्रभाव पड़ता है।

• बंशानुगत विकारः बंशानुगत विकारों में सर्वाधिक प्रचलित पॉलीसिस्टिक (Polycystic) गुर्दे की बीमारी है। इसके लक्षण किशोरवास्त्रा से लेकर कानवस्त्र अवस्था सभी में दिखते हैं। ये पुरुष एवं महिला दोनों में पाया जाता है। इस रोग में गाँठ या पुट्ट (cyst) के गुर्दे मुख्य रूप से गुर्दे के भीतर विकसित होते हैं, जिससे तरल के साथ गुर्दे का आकार बढ़ जाता है और उनका कार्य प्रभावित होता है। पुट्ट तरल पदार्थ गुर्दे के भीतर रहित गोल बैली होते हैं। ये आकार में भिन्न होते हैं और इनका आकार बहुत बढ़ा हो सकता है।

• जन्मजात रोगः इस रोग में आत्मिय से मृत पथ में शारीरिक संचना के कारण सुकाट पैदा हो जाती है जो बाद में गुर्दे के ऊतकों में संक्रमण पैदा कर उसका नष्ट कर देती है।

• नेफ्राइटिस (Nephritis): यह नेफ्रोन का रोग है जिसके कारण गुर्दे में सूजन हो सकती है। इसमें ग्लोबिली, नलिकाएं और ग्लोबिली तथा नलिकाओं के आसपास के अंतरालीय ऊतक शामिल हो सकते हैं। इसके लक्षण निम्न हो सकते हैं:
  ➢ आण्ण (pelvis) में दर्द।
  ➢ पेशाव करते समय दर्द या जलन होना।
  ➢ लगातार पेशाव करने की इच्छा।
  ➢ मूत्र का पुंछलापन।
  ➢ मूत्र में रक्त या मवाद।
  ➢ गुर्दे के क्षेत्र या पेट में दर्द।
  ➢ शरीर में सूजन, आत्मिय पर चेहरे और पैरों में।
  ➢ वमन।

• गुर्दे की पथरीः यह एक आम विकार है। गुर्दे में पथरी का गठन आनुवांशिक या संक्रमण के कारण हो सकता है। गुर्दे की पथरी खनिजों और अम्ल लवणों के कठोर भण्डार होते हैं जो संकेतित मूत्र में एक साथ चिपक जाते हैं। ये आत्मिय पर कैल्शियम ऑक्सालेट से गुजरते हैं लेकिन कई अन्य यौगिकों से भी निर्मित हो सकते हैं। जब यह मूत्र पथ से गुजरते हैं तो गंभीर रूप
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

से दर्दनाक हो सकते हैं, लेकिन आमतौर पर इससे स्थायी क्षति नहीं होती है। गुर्दें की पथरी का सबसे आम लक्षण गंभीर दर्द है, आमतौर पर पेट की तरफ जो अक्सर जी मचलाने से जुड़ा होता है। पथरी के उपचार में दर्द निवारक दवाओं का सेवन, आहारीय संशोधन और पथरी को निश्चिष्ट करने में मदद करने के लिए बहुत अधिक मात्रा में पानी पीना शामिल है। आकार में बड़ी पथरी को हटाने या तोड़ने के लिए चिकित्सा प्रक्रियाओं की आवश्यकता हो सकती है।

• नेफ्रोटिक सिन्ड्रोम (Nephrotic Syndrome): इस रोग में शरीर से प्रोटीन की बड़ी मात्रा मूत्र में निष्कासित हो जाती है। साथ ही रक्त में प्रोटीन की मात्रा कम, उच्च रक्त कोलेस्टरॉल स्तर तथा शरीर के मस्तीकाल तथा पदार्थों का गंभीर प्रतिकृति (retention) सूजन (oedema) का कारण बन सकता है।

उपचारात्मक आहार से सम्बन्धित गुर्दें की बीमारियों को चार भागों में बाँटा जा सकता है:

• तीव्र ग्लोम्यूलोनेफ्रिटिस (Acute Glomerulonephritis or Acute Nephrotic Syndrome)
• दीर्घकालीन ग्लोम्यूलोनेफ्रिटिस (Chronic Glomerulonephritis or Chronic Nephrotic Syndrome)
• तीव्र गुर्दें की विफलता (Acute Renal Failure)
• दीर्घकालीन गुर्दें की विफलता (Chronic Renal Failure)

12.6 गुर्दें के रोगों के कारण

• मधुमेह: लंबे समय से मधुमेह से प्रसिद्ध व्यक्ति में गुर्दें के रोगों की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।
• लंबे समय से अनियंत्रित उच्च रक्तचाप: यह गुर्दें के रोगों एक प्रमुख कारण है तथा यह किसी भी अंतर्दिह संरक्षक गुर्दें की बीमारी का मुख्य कारण हो सकता है।
• आनुवांशिक: इस रोग का पारिवारिक इतिहास भी एक प्रमुख कारण है। परिवार में गुर्दें के रोगों का इतिहास आपने वाली पीढ़ी में गुर्दें के रोगों का कारण बनता है।
• दवाएं एवं विषाणु पदार्थ (Toxin): कुछ दवाएं, कीटनाशक तथा इलाज जैसे हेरोइन भी गुर्दें को क्षति पहुँचाते हैं।
12.7 गुर्दे के रोगों के लक्षण
मूत्र में रक्त व एलब्यूमिन विसर्जित होने के कारण शरीर में सूजन आ जाती है। रोगी को उच्च रक्तचाप की शिकार हो जाती है जिसके कारण हर समय रोगी के सिर में दर्द बना रहता है। इसके अलावा जी मिचलाना, उल्टी आना, आँखों में सूजन हो जाना आदि लक्षण भी प्रकट होते हैं। रोगी को भूख नहीं लगती है, गुदां में रक्त प्रवाह की गतिः धीमी हो जाती है। मूत्र के दौरान जलन एवं कठिनाई होती है तथा मूत्र विसर्जन की आवृति में भी वृद्धि हो जाती है।

12.8 गुर्दे के विभिन्न रोगों में उपचारात्मक आहार

- तीब्र ग्लोमेरुलोनेफ्राइटिस (Acute Glomerulonephritis)

यह रोग मूत्र संक्रमण से होता है। इस रोग से अधिकतर बच्चे व किशोर प्रभावित होते हैं। इस रोग में मूत्र कम मात्रा में विसर्जित होता है लेकिन उसमें कुछ तत्त्वों जैसे रक्त व एलब्यूमिन की मात्रा बढ़ जाती है। कोशिका गुच्छ (Glomeruli) विषाक्त एवं नारियल होने लगते हैं। इस बीमारी के लक्षण एक हमें तक बने रहते हैं लेकिन पूर्णता: तीन होने में रोगी को तीन वा चार महीनों का समय लग जाता है।

इसके उपचार: मूत्र का कम हो जाना, मूत्र का गाढ़ा होना तथा मूत्र में खून आना। तीब्र स्थिरता में पूरे शरीर में सूजन आ जाती है और भूख बिल्कुल नहीं लगती है। अतः रोगी को पयार त मात्र में तरल पदाथर को देना आवश्यक हो जाता है। यदि रोगी को कम प्रोटीन वाला कैलोरी यूक्त आहार दिया जाये तो काफी मात्रा में अनावश्यक जमा होने से रोका जा सकता है क्योंकि रक्त प्रवाह में कमी होने के कारण अनावश्यक पदार्थ जैसे यूरिया तथा अन्य लक्षण पदार्थ जमा होने लगते हैं। तरल पदार्थों द्वारा शरीर में जल का सन्तुलन बना रहता है।

आहारिय उपचार: इस रोग की अवस्था में आहारिय उपचार सबसे ज्यादा लाभकारी सिद्ध होता है क्योंकि जी मिचलाना और उल्टी होने के कारण रोगी पूरी तरह से पर्याप्त आहार का सेवन नहीं कर पाता है। इसलिए रोगी को तरल पदार्थ जैसे फलों का रस ग्लूकोज के साथ दिया जा सकता है या फिर रोगी की अवस्था के अनुसार शिशुओं के मध्यम से ग्लूकोज देना चाहिए।

प्रश्नम: रोगी को पूर्णता: तरल आहार पर ही रखना चाहिए। जब स्थिति में सुधार आने लगे तो रोगी को निम्न पोषक तत्त्वों से युक्त आहार दिया जा सकता है:
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- कैलोरी: कैलोरी के सेवन से तन्तु अपचारात्मक क्रियाएं कुछ नियन्त्रित हो जाती हैं। इसलिए, ऊर्जा का मुख्य स्रोत कार्बोहाईड्रेट एवं वसा ही होने चाहिए क्योंकि रोगी का अधिकांश समय बिस्तर पर व्यस्त होता है इसलिए कैलोरी की आवश्यकता साधारण अवस्था से 10 प्रतिशत से 20 प्रतिशत तक कम होती है।

- प्रोटीन: प्लाज्मा में एल्बुमिन की कमी को पूरा करने के लिए प्रोटीन आवश्यक है। शारीरिक नाइट्रोजन के संतुलन के लिए 0.2 ग्राम प्रति किलोग्राम शारीरिक भार के अनुसार रोगी को प्रोटीन देना चाहिए।

- कार्बोहाईड्रेट: इस अवस्था में ऊर्जा का मुख्य स्रोत कार्बोहाईड्रेट ही है। अत: रोगी को 220 - 230 ग्राम कार्बोहाईड्रेट युक्त भोज्य पदार्थ देना चाहिए।

- वसा: रोगी को प्रतिदिन 40-60 ग्राम तक वसा देना चाहिए। रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा न बढ़ने पाए। इसके लिए कैलोरी से त्रिवृत्त क एब तील जैसे तिल या सूजतात्मी का तील प्रयोग में लाना चाहिए।

- खिनज लवण: खाने में नमक का प्रयोग बिल्कुल नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे शरीर में सूजन और रक्तचाप बढ़ता है। अन्य खिनज लवणों को शारीरिक आवश्यकतानुसार लिया जा सकता है।

- विटामिन: विटामिनों की आपूर्ति होती रहे, इसके लिए रोगी को प्रतिदिन एक मर्जी विटामिन की गोली देनी चाहिए।

- तरल पदार्थ: तरल पदार्थों की मात्रा 1000 मिली लीटर + मूत्र द्वारा निष्कासित जल की मात्रा के अनुसार होनी चाहिए। तरल पदार्थ का आकलन करने के लिए यह जरूरी है कि रोगी का Intake/Output चार्ट बनाया जाए।

इनटेक: (अंतःग्रहित पदार्थ): इसकी गणना मुख के द्वारा लिये जाने वाले भोज्य पदार्थ जैसे जूस, पानी इत्यादि तथा तस्बीं द्वारा लिये जाने वाले पानी को जोड़कर की जाती है।

आउटपुट (निष्कासित पदार्थ): इसकी गणना मूत्र के रूप में + पसीना तथा गल द्वारा शरीर से निष्कासित पानी + श्वसन क्रिया द्वारा (100 मिली अनुमानित) + उल्टी व दस्त के रूप में निष्कासित पानी को जोड़कर की जाती है।

रोगी को दो भोज्यों के अंतराल में कुछ न कुछ देने चाहिए क्योंकि इससे पर्याप्त मात्रा में कैलोरी प्राप्त होती रहती है तथा तन्तुओं में होने वाला अपचार (Catabolism) भी कम हो जाता है।
नैदाइनक एवं उपचारात्मक पोषण

आहार में जैम, जैली, पुडिंग, कैडी अधिक मात्रा में शामिल किये जा सकते हैं, क्योंकि इनमें कैलोरियों की प्रमुख एवं कैलोरियों के प्रोटीन कम पाया जाता है।

**भोजन पदार्थों का संगठन**

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोजन पदार्थ</th>
<th>ग्राम में</th>
<th>भोजन पदार्थ</th>
<th>ग्राम में</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>250</td>
<td>हरी पत्तेदार सब्जियाँ</td>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>400 निटी</td>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>200</td>
<td>तेल और दूध</td>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>फलों का रस</td>
<td>150</td>
<td>शाकक व जैम</td>
<td>50</td>
</tr>
</tbody>
</table>

• **दीर्घकालीन ग्लोमरुलोपैथिटिस (Chronic Glomerulonephritis):** कुछ रोगियों में अल्पकालीन ग्लोमरुलोपैथिटिस पूर्ण रूप से ठीक न होकर अव्याहत (latent) अवस्था में बनी रहती है जो प्रौढ़-प्रौढ़ी दीर्घकालीन ग्लोमरुलोपैथिटिस में बदल जाती है या बहुत कम मरीजों में पुनः अति आहार स्थिति में वापस लौट आती है। इस अवस्था को नेफ्रोटिक सिंड्रॉम भी कहते हैं। नेफ्रोटिक सिंड्रॉम को निम्नलिखित तीन लक्षणों द्वारा पहचाना जा सकता है:

1. मूत्र का ग़ाज़ा होना अर्थात मूत्र में प्रोटीन का विस्फोट होना। ब्यस्क रोगी में प्रतिदिन 3 ग्राम से अधिक प्रोटीन मूत्र में निकलता हो जाता है।

2. गूंडे में ग्लोमरुलाे पैक की दीवारें इनसे खराब हो जाती हैं कि वह खून में मिश्रित प्रोटीन को रोक नहीं पाती है जिससे प्रोटीन खून से निकलकर मूत्र में बढ़ जाता है तथा खून में प्रोटीन की कमी हो जाती है।

3. जब रक्त में प्रोटीन की कमी हो जाती है तो रक्त का प्राकृतिक दबाव (Osmotic pressure) कम हो जाता है जिससे शरीर के तनुओं में पानी की मात्रा कम हो जाती है।

इसके अतिरिक्त अन्य लक्षण जैसे रोगी को भूख नहीं लगना, उत्तीर्दी, दस्त, पेट का फूलना, रोगी का चेहरा पीला पड़ना, मूत्र का लाल होना इत्यादि हो सकते हैं।
आहारीय उपचार:

- कैलोरी: तनुओं के प्रोटीन की अपचयात्मक क्रिया को रोकने के लिए पर्याप्त मात्रा में रोगी को कैलोरी देनी चाहिए। आहारी उपचार के लिए, ग्लूटमेट का रोकने के लिए 1800 से 2000 कैलोरी तथा ग्लूटमेट का रोकने के लिए 1500 से 1700 कैलोरी देना उचित होता है।

- प्रोटीन: क्योंकि इस बीमारी में प्रोटीन का क्षय सबसे अधिक होता है, अत: प्लाज्मा में एलब्यूमिन की कमी को पूरा करने के लिए पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसकी मात्रा निम्न रूपांतर देनी चाहिए:
  - बच्चों में 3-4 ग्राम प्रति किलोग्राम शारीरिक भार
  - बच्चों में 2-3 ग्राम प्रति किलोग्राम शारीरिक भार

- कार्बोहाइड्रेट: यह ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। अत: मरीजों को उच्च कार्बोहाइड्रेट युक्त; 200-220 ग्राम प्रतिदिन भोजन देना चाहिए।

- वसा: ऐसे रोगियों के खुराक न जरूरी को कोलेस्ट्रॉल की मात्रा काफी बढ़ जाती है। अत: इन मरीजों को वसा के स्थान पर आवश्यक वसा अन्य यूनत तथ्यों को देना चाहिए। इसलिए तेल, सूरजमुखी का तेल इत्यादि 40-50 ग्राम तेल प्रतिदिन देना चाहिए।

- विटामिन: विटामिनों की उचित आपूर्ति के लिए रोगी को प्रतिदिन एक मल्टी विटामिन की गोली देनी चाहिए।

- खनिज लवण: नमक का प्रयोग बिल्कुल नहीं करना चाहिए क्योंकि इसके सेवन से सूजन की स्थिति अधिक गंभीर रूप से बढ़ सकती है।

- तरल पदाथण: ऐसे मरीजों को अधिक पानी नहीं देना चाहिए। तरल पदाथण की मात्रा निम्न रूपांतर होनी चाहिए। प्रतिदिन उस्तरिज्ज मूँ की मात्रा + 300 से 400 मिली (सिद्धियों में)

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोज्य पदाथर का संगठन</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>भोज्य पदाथर</td>
</tr>
<tr>
<td>अनाज</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखंड विश्वविद्यालय
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>दाल</th>
<th>70 ग्राम</th>
<th>फल</th>
<th>200 ग्राम</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>800 मिली</td>
<td>सहजयां</td>
<td>100 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>पनीर</td>
<td>30 ग्राम</td>
<td>वसा/तेल</td>
<td>40 ग्राम</td>
</tr>
</tbody>
</table>

नमक का प्रयोग पूर्णत: वर्जित है।

• यूरेिमिया (Uremia- Renal Failure): इस रोग की तीत्र अवस्था में मूृत विसर्जन पूर्णत: बन्द हो जाता है। इसमें मूृत प्रणालियों में कई कारणों से अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं या तीत्र ग्लोमेस्लोनफ्रैक्टिस के बाद या कार्बन टेट्राच्लोराइड (Carbon tetrachloride) के सेवन से या शरीर के अधिकांश भाग के जल जाने के कारण या फिर गम्भीर चोट की स्थिति में यूरेिमिया तथा अनूरिया (Anuria: मूृत का पूर्ण रूप से बंद होना) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उपरोक्त परिस्थितियों के कारण रक्त की घायली नहीं हो पाती है। अनावस्थक पदार्थ रक्त में जमा हो उसे विषाल बना देते हैं जिसके कारण रक्त में नाइट्रोजन युक्त पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है। जल तथा सोडियम में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है तथा शरीर में पोटेशियम के बढ़ जाने से हाइपरकलेिमिया (Hyperkalemia) हो जाता है।

लक्षण: इस रोग में जी मचलाना, उल्टी होना, भूख की कमी, सिर दर्द, दृष्टि में धुंधलाहट, निर्बलता के कारण सुमती तथा बेहोशी के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। शरीर में सूजन, उच्च रक्तचाप, हदय रोगों के साथ-साथ रक्त में अम्लीय स्तर बढ़ जाता है जिसे एसिडोसिस (Acidosis) की अवस्था कहते हैं। तीत्र यूरेिमिया की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब अधिक रक्तस्राव के कारण पारे (Mercury) जैसे विष मूृत प्रणालियों में जमा हो जाते हैं तथा विष पूरे शरीर में फैलने लगता है। इस अवस्था में रोगी की देखभाल डॉक्टर के निर्देश में ही की जा सकती है।

उपचार: यूरेिमिया रोग से पीड़ित रोगियों के लिए कुछ ऐसे तरल पदार्थ बुल तथा उनके सहयोगियों के द्वारा 1949 में तैयार किये गए जिन्हें रोगी को नासिका से नली के द्वारा दिया जा सकता है जिसके प्रभाव से घूर्णि विसर्जन होने लगता है लेकिन इस प्रकार का उपचार केवल अस्पताल या नर्सिंग होम में ही सम्भव होता है। तैयार किये गए तरल पदार्थों का संगठन इस प्रकार है- 40 ग्राम फ्लूकोज तथा 100 ग्राम शुद्ध मूगफली के खेत में एक लीटर पानी के साथ अच्छी तरह मिलाकर उसमें आवश्यक विटामिन को डालकर रोगी को नाक द्वारा देना चाहिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
रोगी को 1500 से 2000 कैलोरी अनुसार खाद्य रूपांतरण की आवश्यकता होती है।

१. हानिकारक नाइट्रोजन युक्त पदार्थों, पोटेशियम, सोडियम को शरीर में इकट्ठा होने से रोकना।

२. जल का अपने-अपने अनुसार खाना।

३. जल का संतुलन बनाना।

उपचारात्मक आहार

• कैलोरी: रोगी को 1500 से 2000 कैलोरी प्रतिदिन की आवश्यकता होती है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- **प्रोटीन:** रक्त में उपस्थित यूरिया की मात्रा के अनुसार प्रोटीन के सेवन को मिश्रित करना चाहिए। 0.2 से 0.5 ग्राम प्रति किलोग्राम शारीरिक भार के अनुसार प्रोटीन देना चाहिए।

- **कार्बोहाइड्रेट:** यह ऊर्जा का मुख्य स्रोत होता है इसलिए, भोजन में इसकी मात्रा ज्यादा कर देनी चाहिए। 300 से 400 ग्राम कार्बोहाइड्रेट प्रतिदिन दिया जा सकता है।

- **वसा:** 40 से 50 ग्राम तक वसा प्रतिदिन दे सकते हैं।

- **खिचड़िय लवण:** ऐसे रोगियों के रक्त में लवण अत्यधिक मात्रा में होते हैं। इसलिए, मरीजों को नमक रहत भोजन देना चाहिए तथा पोटेशियम की मात्रा को कम करने के लिए भोज्य पदार्थों को धोकर प्रयोग करना चाहिए क्योंकि पोटेशियम जल में घुलनशील होता है। इसलिए, अधिकांश पोटेशियम भोज्य पदार्थों को धोने से निकल जाता है।

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोज्य पदार्थ</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>200 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>आलू, गोरे</td>
<td>100 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>200 मिलीलीटर</td>
</tr>
<tr>
<td>ग्री, मक्खन</td>
<td>50 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>शाकाहार्य, ग्लूकोज</td>
<td>250 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>फलों का रस</td>
<td>1000 मिलीलीटर</td>
</tr>
</tbody>
</table>

- **गुद्ध एवं मूत्र मार्ग में पथरी बनना (Kidney Stones or Renal Calculi):** गुद्ध बूरे या मूत्रमार्ग की पथरी नेफ्रोकेलसिनोसिस भी छलकती है। वृक्कों, मूत्रमार्ग, मूत्र प्रणाली या मूत्रदार्ज में कभी-कभी पथरी निर्मित हो जाती है। यह पत्थर म्यूको-पोली-सेक्रेटर, यूरिक अम्ल, यूरेट, कैल्सियम ऑक्सलेट, कैल्सियम कार्बोनेट, कैल्सियम, फॉस्फेट आदि से बना हुआ होता है। कभी-कभी सिस्टैजन के पत्थर (Cystine stones) भी पाये जाते हैं। यह उप्युक्त पदार्थों के मिश्रण से बनता है। साधारण रूप से यूरिक अम्ल व कैल्सियम ऑक्सलेट के पत्थर ही देखने को मिलते हैं। इनका आकार महीने बालू से जैसे कणों से लेकर बड़े आकार की पथरी तक होता है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

गुदणगऊबसे एवं मूणगनभ मागणगऊटु मे पथरी बनने के कारण

1. मूत्र में ऐसे भी तत्त्व मिल जाते हैं जिनकी सहानुभुति पानी की पुलनशीलता से अधिक होती है। सिट्रिक अम्ल (Citric Acid) एक ऐसा पदार्थ है जो कैल्शियम के कणों व आयन को बैंडिंग कर उनकी जलिता को समाप्त कर उन्हें पुलनशील बनाता है। मूत्र की अम्लीयता पर भी उसकी पुलनशीलता निर्भर करती है। अम्लीय मूत्र में ओक्सेजेट तथा फॉस्फेट युक्त जाते हैं जबकि क्षारीय मूत्र में वे ठोस रहते हैं।

2. वंशानुणगनाम: वंश पराबंधक के कारण यूरिक अम्ल तथा ऑक्सेजेट का उपयोग सही प्रकार से नहीं हो पाता है। यह उपचारात्मक त्रुटियाँ माता-पिता से संतानों में आ सकती है।

3. जलवायु: शारीरिक जल का निष्कासन पसीने भर से अधिक होने के कारण गमन अस्थीम ने पथरी बनने के अवसर पर है। इससे मूत्र के तत्त्व सच्चान होकर ठोस बनने लगते हैं।

4. भोजन सम्बन्धी आदत: जब कैल्शियम ओक्सेजेट, यूरिन तथा फॉस्फेट से सम्पन्न आहार अधिक दिया जाता है तो इस रोग के होने की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं। अत्यधिक चाय पीने वालों को अक्सर यह रोग हो जाता है। उपयुक्त खिनज लबणों की उपस्थिति निम्नित्तिखित भोजन पदार्थों में अधिक होती है।

5. दीर्घांशु तक बिस्तर पर रहने से: कई जीवाणियों में जब रोगी एक लंबे समय तक बिस्तर पर रहता है, तो हड़प्पेस शरीर के कैल्शियम निकलने लगता है जिसे डीकल्सिफिकेशन (Decalcification) कहा जाता है। ये हड़प्पेस ने निकला कैल्शियम मूत्र मार्ग तथा प्रणालियों से होते हुए विस्तृत होने लगता है तथा कैल्शियम का कुछ अंश जमा होकर पथरी बनाता है।

6. व्यवसाय: कई व्यवसायों में व्यक्ति को सूखे की क्रिया के प्रत्यक्ष ताप में काम करना पड़ता है, जैसे पटरी तोड़ने वालों, मकान बनाने वालों, खाना में काम करने वाले आदि। ऐसे व्यक्तियों के शरीर से अधिक आयन में जल पसीने के रूप में निकल जाता है जिससे मूत्र के तत्त्व सच्चान होकर ठोस बन जाते हैं और गुदण एवं मूत्र प्रणाली में पथरी बनने लगती है।

7. गौट, ल्यूकेमिया (Gout, leukemia): इन रोगों में शरीर से यूरिक अम्ल का विसर्जन अधिक होता है जिससे पथरी बनने की सम्भावनाएं बढ़ जाती है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 239
नैदानिक एवं उपचारात्मक प्रश्न

8. मूत्र प्रणाली का संक्रमण रोगों से प्रस्त होने पर: कभी-कभी अधिक समय तक मूत्रशाय में मूत्र के पड़े रहने से भी संक्रमण हो जाता है। संक्रमण होने पर मूत्र जीवाणु, पस सेल्स तथा एपीथीलियल उत्तक गुद्द तथा मूत्र प्रणाली के मार्ग पर चिपक जाते हैं, उन पर धीर-धीरे जमाव बढ़ता जाता है, फिर वही पथरी में परिवर्तित हो जाते हैं।

9. अन्य कारण: अधिक मात्रा में विटामिन डी का सेवन करने से, अस्थि विकृति रोग हो जाने से, विटामिन ए की कमी के कारण तथा पैराथाइड ग्रैफिरी में अधिक मात्रा में रस सावित होने के कारण ये रोग हो जाता है।

लक्षण: इस रोग की अवस्था में गुद्दों के आसपास के स्थान पर तीव्र पीड़ा होती है। अतः रोगी को पूर्ण रूप से विश्राम अवस्था में रहना चाहिए मूत्र में जलन, दर्द या बाधा का अनुभव होता है तथा मूत्र में बहुत अधिक झाग बनने लगता है। कमर एवं हाथ-पैरों में दर्द बना रहता है, विशेष रूप से रोगी को बैठने के बाद उठने पर धीरे-धीरे जमाव बढ़ता जाता है तथा यही पथरी में अधिक झागक बन जाती है।

उपचार: पूर्व में गुद्दों में बड़े एक बार पथरी बन जाने का मान्यता होता है न कि औपचारिक ही इसका उपचार हुआ करता था लेकिन आजकल इसे अन्य विधियों द्वारा भी शरीर के भीतर ही गलाया जाता है। इन विधियों में सर्जरी की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसी ही एक विधि है लिथोट्रिप्सी (Lithotripsy), जिसमें ध्वनि विक्सिरणों द्वारा जिस स्थान पर पथरी होती है, तब दबाव दिया जाता है जिससे पत्थर महीन कणों में टूट जाता है। फिर वह मूत्र के साथ शरीर से विसर्जित हो जाता है। होम्योपैथी चिकित्सा पद्धति में भी कुछ दवाओं द्वारा पथरी को गलाया जाता है, लेकिन होम्योपैथी से निदान हेतु तम्ब रोग की आवश्यकता होती है। जिन व्यक्तियों को पथरी की आशंका हो उन्हें नियंत्रित एवं निर्ध्वारीत भोजन शैली अपना लेनी चाहिए। आहार में ऑक्सिजेन, फॉस्फोरस, फ्युरीन, कैल्सियम बहुत पदार्थों में कभी-कभी चाहिए तथा पूर्ण दिन में 2.5 से 3 लीटर तक पानी पीना चाहिए। जिन भोज्य पदार्थों में कैल्सियम, फॉस्फेट, ऑक्सिजेन आदि की अधिकता होती है वो निम्नानुसार है:

<table>
<thead>
<tr>
<th>कैल्सियम</th>
<th>फॉस्फोरस</th>
<th>ऑक्सिजेन</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>हरी पत्तेदार सब्जियाँ, दूध तथा दूध से बने पदार्थ, रागी</td>
<td>सम्पूर्ण अनाज, दाल, मेवे, तेल, चुकत बीज, मांस, मछली, अण्डा</td>
<td>पत्तेदार सब्जियाँ, चाय, कोको</td>
</tr>
</tbody>
</table>

गुद्दों या मूत्र प्रणाली में जो पत्थर निर्मित होते हैं, उनकी प्रकृति का न्याय होना अति आवश्यक होता है क्योंकि यदि पत्थर कैल्सियम, मैनीशियम, फॉस्फेट व कार्बोनेट का हो तो मूत्र को अपमी बनाए।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

रखने की आवश्यकता होती है लेकिन ऑक्टेट्रोक व यूरिक अम्ल के पत्थर बनने हैं तो मूत्र को क्षरीय बनाए रखने की आवश्यकता होती है। अम्लीयता को उत्पन करने के लिए रोगी को पनीर, दाल, सम्पूर्ण अनाज, मूंगफली, चावल, अखरोट आदि दिने जा सकते हैं तथा क्षरीयता लाने के लिए दूध, फल, सब्जिया, बादाम, सेम की फली, अंजीर, खजूर, किशमिश, पालक, आदि पदार्थ दिए जा सकते हैं। अतः पत्थर की प्रकृति की जाँच करने हेतु प्रयोगशालाओं में मूत्र व रक्त के परीक्षण की आवश्यकता होती है। इसकी जाँच करने के उपरांत ही रोगी के लिए प्रतिदिन के आहार का आयोजन करना चाहिए। रोगी के आहार में सम्मिलित खाद्य पदार्थों को शामिल किया जा सकता है।

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोज्य पदार्थ</th>
<th>मात्रा (ग्राम में)</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>कच्चा चावल, मेहाडा</td>
<td>400</td>
</tr>
<tr>
<td>दाल</td>
<td>30</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>400</td>
</tr>
<tr>
<td>पनीर</td>
<td>20</td>
</tr>
<tr>
<td>आलू, गाजर</td>
<td>100</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य सब्जिया</td>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>200</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा व तेल</td>
<td>60</td>
</tr>
<tr>
<td>शक्कर व गुड़</td>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>फलों का रस</td>
<td>200</td>
</tr>
</tbody>
</table>

गुरैं के पत्थर के रोगी के लिए आदर्श आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः काल</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुस्तव विश्वविद्यालय
<table>
<thead>
<tr>
<th>समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सुबह का नाशा</td>
<td>ब्रेड – आमलेट या ब्रेड – जैम/मक्खन</td>
<td>स्लाइस + 1 अण्डा 2 स्लाइस + 2 tsp चाय चमच 1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>मटा / छाछ</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर का खाना</td>
<td>चावल / रोटी दाल (बिना छिलके वाली) दही तुरई की सब्जी</td>
<td>1 कोटोरी/ 2 रोटी 1 कोटोरी 1 कोटोरी 1 कोटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>5 बजे शाम को</td>
<td>चाय विस्कुट</td>
<td>1 कप 2</td>
</tr>
<tr>
<td>9 बजे रात्रि में</td>
<td>रोटी सब्जी (लोकी) रायता (आलू का) दाल (मूंग की)</td>
<td>2-3 1 कोटोरी 1 कोटोरी 1 कोटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>10 बजे सोने से पहले</td>
<td>दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>

नोट*: गुद्दे में पथरी की दशा में तरल पदार्थ या पेय जल का अधिक मात्रा में सेवन करना चाहिए।

नैफराइटिस तथा नैफरोटिक सिक्रोम के रोगी के लिए एक दिन की आहार तालिका
<table>
<thead>
<tr>
<th>समय</th>
<th>नाश्ता में होने वाला भोजन</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सुबह 11 बजे</td>
<td>फल (सेब/केला)</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह 5 बजे</td>
<td>चाय बिस्कुट/उपमा</td>
</tr>
<tr>
<td>दोपहर 1 बजे</td>
<td>चावल/रोटी दाल (अरहर), आलू मूली की सब्जी, दही</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि 9 बजे</td>
<td>रोटी, सब्जी (भिंडी/तुरई), रायता (खूरे का), दल (धुली मूंग)</td>
</tr>
<tr>
<td>सोते से पहले, 10 बजे</td>
<td>दूध</td>
</tr>
</tbody>
</table>

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त खाने भरिए Jean
   a. गुद्ध के वंशानुगत विकारों में सर्वाधिक प्रचलित ....................................................... है।
   b. तीस्र एस्प्रेस्सोफाइट की स्थिति में रोगी के आहार में ऊर्जा का मुख्य स्रोत ........................................... ही होता है।
   c. ............................................... रोग की तीन मृत्तिका अवस्था में मूत्र विसर्जन पूर्णत: बन्द हो जाता है।
   d. गुद्ध की इकाई को ........................................... कहते हैं।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

e. मूत्र में सामान्यतः ................................. जल होता है।

f. मैलिपिजन नलिका दो भागों से मिलकर बनती है: बोमेन कैस्पूल तथा .........................................................

2. उपचारात्मक आहार से सम्बन्धित गुदें की बीमारियों को कितने भागों में बांटा जा सकता है?

3. यूरेिमया के लक्षण क्या हैं?

4. आहार में कैल्शियम, फाफ्फोरस तथा ऑक्सीजेन युक्त खाद्य पदार्थ कौन से हैं?

12.9 सारांश

भोजन के पाचन एवं कोशिकाओं के विनाश से कई प्रकार के निरुपयोगी पदार्थ उत्पन्न होते हैं। ये पदार्थ ठोस, द्रव तथा गैसों के रूप में शरीर में रहते हैं। शरीर से इन हानिकारक पदार्थों का निष्कासन अत्यन्त आवश्यक है। अतः शरीर के कुछ अवयव इन पदार्थों को शरीर से निष्कासित करने का कार्य करते हैं जैसे गुदें, फेफड़े एवं त्वचा। गुदें शोधन प्रणाली के माध्यम से शरीर में से यूरिया, यूरीक अम्ल, अमोनिया, जल, विभिन्न लवण इत्यादि निरुपयोगी पदार्थों को मूत्र द्वारा बाहर निकालता है। गुदे के शरीर में पानी का संतुलन, इलेक्ट्रोलाइट तथा पी0एच0 तथा खून के परासरण दबाव का संतुलन बनाते हैं। यह रूप में उपस्थित विभिन्न पदार्थों को शरीर से निष्कासित करते हैं। नैफरोन गुदे की आधारभूत कार्यान्वयन इकाई हैं। निष्कासित पदार्थों से सम्बन्धित अवयव किसी प्रकार के संचयण के कारण नैफरोन प्रभावित होते हैं। जिससे गुदे के कार्यों में बाधा उत्पन्न होती है, कई बहुमूल्य पदार्थों का नुकसान हो जाता है और कई विशाल पदार्थों के शरीर में प्रतिवर्धन हो जाता है। गुदें के विकार में पोषण प्रबन्धन का मुख्य उद्देश्य शरीर के पोषक तत्वों की क्षति पूरी करना, पानी तथा लवणों का सामान्य संतुलन बनाना है। साथ ही इस प्रकार के खाद्य पदार्थों का चयन करना है जो शरीर में अपशिष्ट पदार्थों का संचय कम कर सकें। आहार नियोजन का लक्ष्य गुदे पर उत्सर्जन का भार कम करना भी है।

12.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. पॉलीसिस्टिक (Polycystic) गुदें की बीमारी
   b. कार्बोहाइड्रेट
   c. यूरेिमया (Ureamia- Renal Failure)

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय 244
नैदानिक एवं उपचारात्मक प्रश्न  

d. नेफ्रोन  
e. 99 प्रतिशत  
f. ग्लोमर्यूलस कैप्स्यूल (Glomerulus Capsule)

2. उपचारात्मक आहार से सम्बन्धित गुर्दे की बीमारियों को चार भागों में बाँटा जा सकता है:
   • तीव्र ग्लोमर्यूलोनफ्राइटिस (Acute Glomerulonephritis or Acute Nephrotic Syndrome)  
   • दीर्घकालिन ग्लोमर्यूलोनफ्राइटिस (Chronic Glomerulonephritis or Chronic Nephrotic Syndrome)  
   • तीव्र गुर्दे की विफलता (Acute Renal Failure)  
   • दीर्घकालिन गुर्दे की विफलता (Chronic Renal Failure)

3. यूरेैमिया के लक्षण: जी मचलाना, उल्टी होना, भूख की कमी, सिर दर्द, दृष्टि में धूललाहत, निर्भरता के कारण सुघासी तथा बेहोशी आदि। शरीर में सूजन, उच्च रक्तचाप, हदय रोगों के साथ-साथ रक्त में आम्लीय स्तर बढ़ जाता है जिसे ऐसिडोसिस (Acidosis) की अवस्था कहते हैं।

4. कैस्टिशन: हरी पत्तेदार सब्जियाँ, दूध तथा दूध से बने पदाथर, रागी  
   फास्फोरस: समपूर्ण अनाज, दाल, मेवे, तेल युक्त बीज, मांस , मछली, अण्डा  
   ऑक्जेलेट: पत्तेदार सब्जियाँ, चाय, कौको

12.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. गुर्दे के कार्यों का वर्णन कीजिए।  
2. गुर्दे व मूर्ताशय में पथरी बनने के क्या कारण हैं? इनका उपचार किस प्रकार किया जाता है?  
3. गुर्दे के विकारों में क्या-क्या नैदानिक लक्षण दिखाई देते हैं?  
4. दीर्घकालिन गुर्दे खराब होने (यूरेैमिया) में आहार नियोजन के बारे में बताइए।  
5. नैफरोटिक सिंड्रोम तथा गुर्दे की पथरी के उपचारात्मक आहार पर प्रकाश डालिए।
इकाई 13: शारीरिक भार प्रबन्ध हेतु पोषण एवं देखभाल

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मोटापा अथवा वजन की अधिकता
13.4 मोटापे के प्रकार
13.5 मोटापे के कारण
13.6 मोटापे की पहचान
13.7 मोटापे का मापन
13.8 मोटापे की स्थिति में चयापचय
13.9 मोटापे के कारण उत्पन्न जलताएं
13.10 मोटापे में आहार नियोजन
13.11 मोटापे का उपचार
13.12 कम शारीरिक भार या दुर्बलता में आहार
13.13 अल्पभार के लक्षण
13.14 अल्पभार के कारण
13.15 अल्पभार में आहार नियोजन
13.16 सारांश
13.17 पारिभाषिक शब्दावली
13.18 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
13.19 निर्देशात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना
शारीरिक भार नियन्त्रण आज के बदलते समय की एक आवश्यकता हो गई है क्योंकि इसका गहरा समझक भाव किन कार्यक्षण के हास, महत्वपूर्ण रोगों के विकास एवं मृत्यु से है। है। वैश्विक स्तर पर एक अरब से अधिक लोग मोटापे तथा वजन की अधिकता से ग्रस्त हैं। मोटापे या
13.2 उदेश्य

- इस इकाई का उदेश्य शिक्षार्थियों को मोटापे, स्थूलता का अर्थ, उसके कारण, स्थूलता या मोटापे का निर्धारण (Assessment of Obesity), निवारण (Prevention) एवं उपचारात्मक आहार की जानकारी देना है; तथा

- इकाई के अध्ययन के परस्पर शिक्षार्थी अत्यधिक भोजन की समस्या, उसके कारण, निवारण एवं उपचारात्मक आहार की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे।

13.3 मोटापा अथवा वजन की अधिकता

यह कुपोषण की एक अवस्था है जिसमें व्यक्ति भोजन पदार्थों को प्राप्त करके आवश्यकता से अधिक कैलोरी ग्रहण करता है। यदि व्यक्ति आवश्यकता से अधिक भोजन पदार्थ लेता है तो शरीर में आवश्यकता से अधिक ऊजामा उत्पन्न होती है जिसमें से ऊजामा की कुछ मात्रा ग्लुकोजन के रूप में शरीर में एक रूप में जमी हो जाती है। जब यह वसा अत्यधिक मात्रा में शरीर के विभिन्न भागों में जमा हो जाता है तो व्यक्ति मोटा दिखाई देने लगता है तथा उसका शरीर विशालतकया और अत्यधिक वजन का हो जाता है। मोटापा अवस्था में प्रत्येक रूप से तो कोई बीमारी नहीं है, परंतु यह अनेक गंभीर बीमारियों का प्रमुख कारण है, जैसे मधुमेह, हड़प्पा रोग, युक्ति का रोग, वृक्ष रोग, धर्मियों का रोग आदि। मोटापे से शरीर स्थूल एवं थुलधुला हो जाता है जिसके कारण व्यक्ति चल फिर नहीं सकता है। अधिक शरीर भरोसे होने के कारण व्यक्ति को तेज चलने, दौड़ने, सीढ़ियाँ चढ़ने उतरने आदि में अत्यधिक परेशानी होती है।

M.Swaminathan ने अपनी पुस्तक, “Essentials of Food and Nutrition” में लिखा है- “Obesity may be defined as a condition in which excessive accumulation of fat in the adipose tissues has taken place. It arises when the intake of food is in excess of physiological needs.”
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

वजन की अधिकता को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

1. वजन का अधिक होना: किसी भी व्यक्ति का वजन तब अधिक माना जाता है जब उसका वजन अपनी आयु, लिंग तथा ऊँचाई के लिए सामान्य वजन से 10 से 20 प्रतिशत ज्यादा हो।

2. मोटापा: जब व्यक्ति का वजन अपनी आयु, लिंग तथा ऊँचाई के लिए सामान्य वजन से 20 से 80 प्रतिशत तक बढ़ जाता है, तो इसे मोटापा (Obesity) कहते हैं।

13.4 मोटापे के प्रकार

मोटापा दो प्रकार का होता है:

1. विकास सम्बन्धी मोटापा: इस श्रेणी के मोटापे की शुरुआत बालकों के जीवन के प्रारंभिक वर्षों में ही हो जाती है तथा उनके व्यस्त होने तक निरंतर चलती रहती है क्योंकि इसकी नींव वर्ष प्रजनन में ही स्थापित हो जाती है। कोशिकाएं वसा से सतृंग हो जाती है तथा जैसे जैसे बालक व्यस्त होता है अधिक से अधिक वसा शरीर में संचित हो जाता है। मांसपेशी तथा हड्डीयों का इल्युमान भी बढ़ जाता है क्योंकि शरीर को अधिक भार वहन करना पड़ता है।

2. प्रतिक्रियाशील मोटापा: इस प्रकार का मोटापा व्यक्ति के जीवन के प्रारंभिक वर्षों में भावनात्मक तनाव के कारण विकसित होता है। तनाव की अवस्था में भोजन के सेवन में वृद्धि के कारण शरीर का वजन बढ़ जाता है। क्योंकि यह समय आश्चर्य होता है इसलिए वजन में भी उत्तर चढ़ाव देखा जाता है।

13.5 मोटापे के कारण

मोटापे के कई कारण हैं जो निम्न बताए गए हैं:

1. आयु (Age): मोटापा किसी भी आयु में हो सकता है परन्तु प्रीड़ावस्था (Adulthood) में मोटापा अधिक होता है। किशोरावस्था तथा बाल्यावस्था में मोटापा कम देखने को मिलता है। परन्तु आज़ाद अयथिक पोषण के कारण किशोरों में भी मोटापा होने लगा है। खासकर पश्चिमी देशों में तथा विकसित देशों के धनी वर्ग के लोग मोटापे का शिकार हो रहे हैं। यदि बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में मोटापा होता है तो प्रीड़ावस्था तथा वृद्धावस्था में इसके होने की प्रवृत्ति समझाना होती है।
2. लिंग (Sex/Gender): मोटापा किसी भी आयु में किसी भी लिंग के व्यक्ति को हो सकता है। परंतु पौरुषों में पुष्क्रंगों की अपेक्षा चिह्नों मोटापे की अधिक शिकार होती हैं। इसके निम्नलिखित कारण हैं:

क) विवाह की आयु तक लड़कियाँ अपने स्वास्थ्य एवं शायरीक चुस्ती फूंफी के प्रति जागरूक रहती हैं परंतु विवाह के उपरांत वे स्वरूप एवं शायरीक स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह हो जाती हैं।

ख) यदि लड़की का विवाह उच्च आय वर्ग अथवा धनी परिवार में हो जाता है तो उसे शायरीक श्रम कम करना पड़ता है तथा अधिक या गरिष्ठ भोजन गृहण करने के कारण वह मोटापे का शिकार हो जाती है।

ग) बच्चे के जन्म के बाद बच्चे अधिक मोटी हो जाती हैं क्योंकि प्रत्येक गर्भाशय के दौरान वह 10 से 12 किलो तक वजन गृहण करती है। इसमें से कुछ वजन (1.5 से 2.0 किलो) उसके स्वरूप के शरीर का बढ़ जाता है। गर्भाशय में वसा का संचय हो जाता है जो कि मोटापे को दर्शाता है।

3. आर्थिक स्थिति (Economic Status): सामाजिक उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर के लोगों में मोटापा अधिक होता है क्योंकि वे शायरीक श्रम (Physical Work) में कम करते हैं। साथ ही भोजन में घी, तेल, मक्खन आदि का अत्यधिक उपयोग करते हैं। अधिक कुले भुने भोजन खाने के कारण वह मोटापे का शिकार होते हैं।

4. वंशानुक्रम (Heredity): मोटापा बढ़ने का एक प्रमुख कारण वंशानुक्रम (Heredity) भी है। ऐसा देखा गया है कि जिनके माता पिता दोनों ही मोटापे के शिकार होते हैं तब उनके बालकों में भी मोटापा हस्तान्तरित हो जाता है। यदि माता पिता में से केवल कोई एक ही मोटापा प्रस्त है तो उनके बालकों में मोटापा होने की 40 प्रतिशत तक संभावना रहती है। शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि आनुवंशिकता (वंशानुक्रम) के कारण भोजन गृहण करने की क्षमता बढ़ जाती है। अंतः सारी गृहियों (Endocrine Glands) के कार्य में असंतुलन एवं गड़बड़ उत्पन्न हो जाती हैं तथा शरीर के ऊतकों में वसा के संग्रह की क्षमता बढ़ जाती है।

5. भोजन सम्बन्धी आदतें (Eating Habits): कुछ व्यक्तियों में थोड़ी-थोड़ी देर में कुछ न कुछ खाने की आदत होती है जिससे वे आवश्यकता से अधिक भोजन गृहण कर लेते हैं और मोटापे
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

का शिकार हो जाते हैं। आवश्यकता से अधिक मात्रा में कैलोरी गुणन करने से अतिरिक्त कैलोरी वसा में परिवर्तित होकर उत्तरों में इकट्ठा हो जाती है तथा वजन में वृद्धि हो जाती है। कुछ व्यक्तियों को अधिक तला भुना खाने की ज्यादा आदत होती है जिससे उनके शरीर में वसा की अत्यधिक मात्रा पहुंचकर जमा हो जाती है। जो व्यक्ति मीठा जैसे मिठाइयों आदि का अधिक सेवन करते हैं, उनमें भी मोटापा देखने को मिलता है। मादक पेय जैसे एल्कोहॉल पीने वाले व्यक्ति का शारीरिक भार सामान्य से अधिक पाया जाता है क्योंकि मादक पेयों से व्यक्ति को अतिरिक्त कैलोरी प्राप्त हो जाती है तथा वसा के रूप में शरीर में एकत्रित हो जाती है। इसे सिम्ब्यूल उदाहरण से समझा जा सकता है। यदि एक व्यक्ति दिनांक 100 कैलोरी अतिरिक्त ऊर्जा ग्रहण करता है जिसकी उसे आवश्यकता ही नहीं है तो उसके कारण 5 वें वर्ष तक उसके वजन में 20 किलोग्राम की वृद्धि हो जाती है अर्थात् प्रतिवर्ष केवल 100 कैलोरी ऊर्जा रोज ग्रहण करने से 4 किलो वजन बढ़ जाता है। आजकल अधिकतर व्यक्ति दिनांक 0 के सामने बैठकर खाना खाते हैं जिसके कारण वे आवश्यकता से अधिक भोजन ग्रहण करते हैं और धीरे-धीरे मोटापा का शिकार हो जाते हैं।

6. शारीरिक कार्य (Physical Work): अत्यधिक शारीरिक श्रम करने वाले लोग (मजदूर, किसान) मोटापा से कम प्रस्त होते हैं। परन्तु वे लोग जो बहुत ही कम शारीरिक कार्य करते हैं साथ ही भोजन में उच्च कैलोरी, वसा तथा अधिक प्रोटीन ग्रहण करते हैं, वे मोटापे का शिकार हो जाते हैं। वर्तमान समय में समय तथा कार्य बचत करने वाले उपकरण (Time and Energy Saving Devices) का अधिक प्रयोग किया जाने लगा है। लोग कार्यालय, विधालय, महाविद्यालय अथवा अपने कार्य स्थलों तक बस, स्कूल, जी, कार आदि साधनों से जाने लगे हैं। उन्हें पैदल नहीं चलना पड़ता है जिससे शरीर के वजन में कम हो जाता है। परिणामतः ऊर्जा व्यक्ति बहुत कम होता है परन्तु भोजन ग्रहण करने की आदतों में कोई सुधार नहीं होता। इस कारण आवश्यकता से अधिक कैलोरी ग्रहण कर ली जाती है। अतिरिक्त कैलोरी शरीर में जाकर वसीय ऊतकों में परिवर्तित हो जाती है जिससे मोटापा बढ़ जाता है।

7. दवाइयाँ (Medicines): कई दवाएं मोटापा बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जैसे इंसुलिन, स्ट्रीप्प, गर्म निरोधक गोलियाँ आदि। इन दवाओं के सेवन से भूख बढ़ती है अतः व्यक्ति अधिक भोजन ग्रहण करने लगता है जिसके परिणामस्वरूप मोटापा बढ़ता है।
8. संवेगात्मक कारण (Emotional Effect): कई बार निराशा, एकाकीपन, व्यथा, अंतर्दृष्टि आदि कारणों से व्यक्ति अधिक भोजन ग्रहण करने लगते हैं। यह अपने दुःख, दर्द, चपेट, हीन भावना आदि को छिपाने के लिए, अधिक भोजन करते हैं। इससे उन्हें मानसिक शान्ति एवं संतुष्टि मिलती है, परन्तु इसका दुःखभाव उनके शरीर पर पड़ता है तथा वे मोटापे के शिकार हो जाते हैं।

9. अंत: साविक प्रत्ययों (Endocrine Glands): शरीर के वसीय उत्तकों के संघर्ष पर निष्पर्श अंत: साविक प्रत्ययों के द्वारा होता है। जब इन प्रत्ययों का सावरण अंतर्दृष्टि एवं अनिवित हो जाता है तब मोटापा बढ़ता है जैसे थायरॉयड प्रत्यय के अत्य सावरण से (Hypothyroidism) बजन बढ़ने लगता है। परिणामत: शरीर में जल अधिक मात्रा में संचित होने लगता है। इसी तरह पिट्यूटरी प्रत्यय के अत्य सावरण से भी शरीर भार में वृद्धि हो जाती है।

हायपोगोनैडिक्स (गोनैड्स के कम वर्ण से) के कारण भी मोटापा बढ़ता है।

10. केन्द्रीय नाडी संस्थान में दोष (Defects in Central Nervous System): हायपोथैलेमस (Hypothalamus) केन्द्रीय नाडी संस्थान का एक प्रमुख भाग है। इसी केन्द्र में भूख केन्द्र (Hunger centre) तथा तृप्ति केन्द्र (Satiety Centre) होता है। भूख लगना तथा भोजन ग्रहण करना ये दोनों ही बातें इन्हीं केन्द्रों पर निर्भर करती हैं। यदि भूख केन्द्र में दोष उत्पन्न हो जाता है तो भूख नहीं लगती है। परिणामत: व्यक्ति भोजन नहीं ग्रहण कर पाने के कारण निर्भर, कमजोर एवं अस्वस्थ हो जाता है। तृप्ति केन्द्र में दोष उत्पन्न होने से यहाँ की तंत्रिकाएं निश्चय हो जाती हैं जिसके कारण व्यक्ति अधिक भोजन ग्रहण करने लगता है। परिणामत: वह मोटापे का शिकार हो जाता है। नाड़ियों द्वारा प्राप्त संवेदना से आमाशय की मांसपेशियों का संकुचन होता है। रक्त में इन्सुलिन की उपस्थिति से रक्त शरक्षा कम हो जाती है जिससे व्यक्ति को तीव्र भूख लगने का आभास होता है। परिणामत: व्यक्ति अधिक भोजन ग्रहण करने लगता है।

11. सदृष्टि के मौसम में भी अधिक खाना खाया जाता है क्योंकि शारीरिक तप की रक्षा के लिए शरीर द्वारा अधिक आहार का ओक्सीजन किया जाता है जिससे मोटापा बढ़ता है।
M. Swaminathan के अनुसार, “Food intake is also markedly influenced by appetite and satiety centers. If the satiety centre in animals is destroyed, they eat voraciously and become obese in a short time. If the appetite centre is destroyed, the animals slowly lose appetite and eat less food”.

12. ध्रुपान (Smoking): जब व्यक्ति ध्रुपान करना छोड़ देता है तो शरीर का वजन बढ़ने लगता है क्योंकि वह इस कमी की पूर्ति अधिक भोजन खाकर करता है। साथ ही ध्रुपान छोड़ देने से भोजन का पाचन एंव अवशोषण ठीक प्रकार से होने लगता है।

13.6 मोटापे की पहचान (Assessment of Obesity)

मोटापे की पहचान निम्नानुसार की जाती है:
1. शारीरिक वजन (Body Weight)
2. शरीर में उपस्थित वसा की मात्रा (Fat Present in the Body)
3. त्वचा की मोटाई को नापकर (Measurement of Skin Folds)

शारीरिक वजन: यदि शरीर का वजन सामान्य बजन से 20 प्रतिशत अधिक होता है तो उसे सामान्य मोटापा (Normal Obese) कहते हैं। यदि शरीर वजन 40 प्रतिशत से अधिक होता है तो अधिक मोटापा तथा 50 प्रतिशत से भी अधिक वजन होने पर बहुत अधिक मोटापा कहलाता है।

शरीर में उपस्थित वसा की मात्रा एवं त्वचा की मोटाई को नापकर: मोटापे को पहचानने के लिए त्वचा की मोटाई को बनियर कैलिफर्निया प्रतिशत द्वारा परीक्षण करके पता लगाया जाता है।

• पीठ में कमर से कुछ ऊँचाई पर।
• पसलियों के नीचे।
• कोहली तथा कंधों के बीच में, पीछे की ओर।

13.7 मोटापे का मापन (Measurement of Obesity)

व्यक्ति के वजन का मापन, मोटापे के मूल्यांकन करने का अपेक्षाकृत सरल तरीका है। ऊँचाई के अनुसार वजन ज्यादा होने पर व्यक्ति मोटापे की श्रेणी में आता है।
शरीर दर्द्वयमान सूचकांक (Body Mass Index)

मोटापा का पता लगाने के लिए यह सर्वाधिक इस्तेमाल किया जाने वाला मानदंड है।

इसकी गणना मिम्म रूप से की जाती है:

\[
\text{Body Mass Index (BMI)} = \frac{\text{वजन (किलोग्राम)}}{\text{ऊंचाई (वर्ग मीटर)}}
\]

BMI के आधार पर मोटापे को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है:

<table>
<thead>
<tr>
<th>वर्गीकरण</th>
<th>किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सामान्य</td>
<td>19-24</td>
</tr>
<tr>
<td>मोटापा</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>पहला ग्रेड</td>
<td>25-29</td>
</tr>
<tr>
<td>दूसरा ग्रेड</td>
<td>30-40</td>
</tr>
<tr>
<td>तीसरा ग्रेड</td>
<td>&gt;40</td>
</tr>
</tbody>
</table>

BMI के मान आयु के लिए स्वतंत्र तथा दोनों लिंगों के लिए समान होते हैं।

कमर तथा नितंब का अनुपात भी मोटापे के मापन का एक अच्छा तथा सरल मानदंड है। पुरुषों में यह अनुपात यदि 1 से अधिक तथा महिलाओं में 0.9 से अधिक हो, तब यह मोटापे का संकेत देता है।

13.8 मोटापे की स्थिति में चयापचय (Metabolism in Obesity)

सामान्य लोगों की अपेक्षा मोटे व्यक्तियों में आधारीय चयापचय दर कम होती है। पोषक तत्वों के चयापचय पर मिम्म प्रभाव दिखाई देता है:

1. वसा (Fat): वसा का चयापचय भी मोटे व्यक्तियों में कम होता है। M. Swaminathan के अनुसार “The level of free fatty acids in blood after an overnight fast is higher in obese subjects than in normal subject. The higher levels may
reflect a predisposition for fat metabolism rather than carbohydrate metabolism in the obese. The level of triglycerides in blood is also moderately raised in obesity”.

2. **Carbohydrate**: Motes containing a large amount of carbohydrates are consumed in the obese, which reflects a predisposition for fat metabolism rather than carbohydrate metabolism in the obese. The level of triglycerides in blood is also moderately raised in obesity.

3. **Metabolism of Fatty Tissues**: The metabolism of fatty tissues is extensively altered in obesity. The proportion of body fat increases due to increased storage of fatty acids, which can lead to complications such as diabetes and cardiovascular diseases.

### 13.9 Motes's Causes of Various Illnesses

Motes cause a variety of illnesses and diseases, which can be classified as follows:

1. **Physical Disability**: Due to the increase in body weight, there is a tendency to develop various physical disabilities. For example, the weight of the body may cause the lumbar vertebrae to become misshapen, resulting in conditions such as flat feet and leg pain.

2. **Metabolic Disorders**: Due to the increase in body weight, there is a tendency to develop various metabolic disorders. For example, diabetes mellitus, gout, and cardiovascular diseases such as heart disease and cirrhosis of the liver may develop.

3. **Cardiovascular Disorder**: Due to the increase in body weight, there is a tendency to develop various cardiovascular disorders. For example, there may be an increase in blood pressure and heart rate, which can lead to conditions such as hypertension and coronary artery disease.
भाषा में जाता है जिसके कारण ल्यूमेन (Lumen) छोटा हो जाता है। अतः धमनी का रोग (Atherosclerosis), उच्च रक्त चाप (High blood pressure) तथा हदय रोग होने की सम्भावना बहुत अधिक बढ़ जाती है। शिराओं के फूल जाने (Varicose Veins) की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

4. गर्भकालीन विषाक्तता (Toxemia in Pregnancy): मोटे गर्भवती महिलाओं में गर्भकालीन विषाक्तता की सम्भावना बहुत अधिक बढ़ जाती है। उन्हें शरीर में सूजन आ जाती है। शिराएं फूल जाती हैं। परिणामस्वरूप सामान्य प्रसव द्वारा शिशु को जन्म देना सम्भव नहीं होता है। शायद क्रिया द्वारा प्रसव कराना पड़ता है।

5. क्रियाशीलता में कमी (Reduced Physical Activity): मोटे व्यक्तियों को अक्सर थकान, पीट में दर्द, पैरों की तकलीफ, जोड़ों में दर्द आदि शिकायत देखने को मिलती है जिसके परिणामस्वरूप उनकी शारीरिक क्रियाशीलता काफी कम हो जाती है।

6. श्वसन सम्बन्धी परेशानी (Difficulty in Respiration): मोटे व्यक्तियों के आंतरिक अंगों पर भी काफी बोझ पड़ने लगता है। हदय, यकृत, वृक्क, अध्याय, फेरठे इत्यादि अंगों को अधिक कार्य करने के कारण धीरे-धीरे उनका श्वसन कमजोर हो जाता है। इसी कारण मोटे व्यक्तियों को सीढ़ी चढ़ने उतरने, तेज़ चलने इत्यादि में काफी परेशानी होती है। श्वसन सम्बन्धी परेशानी होने से वे शीघ्र ही हांगस्मृत तक लगते हैं।

7. कम जीवन प्रत्याशा (Low Life Expectancy): मोटे व्यक्तियों को अनेक रोग हो जाते हैं। कुछ रोग काफी गम्भीर या जानलेवा होते हैं जैसे हदय रोग, मधुमेह आदि। इस कारण उनके जीवन जीने की क्षमता कम हो जाती है। यदि शरीर वजन में 30 प्रतिशत वृद्धि होती है तो मृत्यु दर की सम्भावना में 30 प्रतिशत तक की वृद्धि हो जाती है।

8. मनोवैज्ञानिक एवं संवेगात्मक समस्याएं (Psychological and Emotional Problems): मोटे व्यक्तियों की त्वचा के नीचे वसा का जमाव हो जाता है जिसके कारण उनका शरीर सूक्ष्म, शुल्कुल हो जाता है। जो देखने में भद्रा लगता है जिस कारण ऐसे व्यक्तियों को सामाजिक उपहास का पात्र बनना पड़ता है। इसी कारण कई प्रकार की मनोवैज्ञानिक एवं संवेगात्मक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
13.10 मोटापे में आहार नियोजन

1. कैलोरी: मोटे व्यक्तियों को कैलोरीयुक्त आहार की आवश्यकता होती है। परंतु भोजन की मात्रा उतनी ही होनी चाहिए जिससे व्यक्ति का पेट भर सके तथा उसे तीव्र एवं संतुलित आहार मिल सके। भोजन के साथ ही शारीरिक क्रियाशीलता भी बढ़ायी जानी चाहिए। मोटे लोगों का वजन एकदम से कम नहीं किया जाना चाहिए। महीने में 6 से 8 पॉंड तक वजन का कम होना ही उचित है, अन्यथा व्यक्ति को मिर्ची थकान, कमजोरी, आलस्य, सुस्ती एवं भूख का अनुभव होने लगता है। अतः धीरे-धीरे वजन कम किया जाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति की शारीरिक ऊर्जा मात्रा 2500 Kcal है तो उसे 1300 -1500 Kcal ऊर्जा अवश्य ही प्रतिदिन आहार से प्राप्त होनी चाहिए।

2. प्रोटीन: शरीर के तनुओं की टूट-फूट की ममता हेतु प्रोटीन अति आवश्यक है। अतः एक ग्राम प्रोटीन प्रति किलो शरीर भर के अनुसार होना चाहिए।

3. काबाहाइड्रेट: उच्च कैलोरीयुक्त तथा तले भोजन पदार्थों का सेवन नहीं किया जाना चाहिए। एक दिन में 100 ग्राम काबाहाइड्रेट पर्याप्त है। परंतु यह अवश्य ध्यान रखे कि काबाहाइड्रेट पदार्थ शरकरा से नहीं लिया जाना चाहिए, क्योंकि शरकरा काबाहाइड्रेट प्राप्ति का सांत्र रूप है। काबाहाइड्रेट के रूप में स्टार्च (Polysaccharides) तथा रेशा होना चाहिए।

4. वसा: वसा ऊर्जा प्राप्ति का संप्रति को (Concentrate Source) है। अतः इसका अन्यथिक मात्रा में सेवन नहीं किया जाना चाहिए। अधिकतम ग्राम वसा का प्रयोग प्रतिदिन किया जाना चाहिए। विशेषकर संतुलित वसा जैसे थी, डालडा, मक्खन इत्यादि का प्रयोग कम करना चाहिए।

5. खनिज लवण: कैल्शियम, लोह लवण, आयोडीन एवं अन्य खनिज लवण पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए। खनिज लवणों की पूर्ति हेतु सब्जियों एवं फलों का प्रयोग किया जाना चाहिए। मोटे व्यक्ति को खनिज लवण सामान्य व्यक्ति के अनुसार ही देना चाहिए।

6. विटामिन: आहार में विटामिन सी पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए क्योंकि वह वसा की मात्रा को कम करता है। अन्य विटामिन जैसे विटामिन ए, डी , ई, के तथा बी समूह पर्याप्त मात्रा में देने चाहिए। विटामिन की प्राप्ति हेतु हरी पत्तेदार सब्जियाँ, फलों आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए। कच्ची सब्जियों को सलाद के रूप में आहार में अवश्य ही सम्मिलित किया
जाना चाहिए: सब्जियों में रेशा (Roughage) होता है जो कब्ज़ दूर करने में सहायक होता है तथा फल एवं सब्जियों के अधिक सेवन से पेट भर जाता है जिससे तृप्ति एवं संतुष्टि मिलती है।

7. जल: जल की अधिक मात्रा के सेवन से मोटापा कम होता है क्योंकि जल की अधिक मात्रा लेने से भोजन की कम मात्रा प्रश्न की जाती है। अतः अप्रत्यक्ष रूप से यह मोटापा पदार्थ में सहायक होता है। परन्तु मीठे पेय पदार्थों जैसे शरबत, कोल्ड ड्रिंक, गने का रस इत्यादि का प्रयोग कम से कम किया जाना चाहिए क्योंकि इनके प्रयोग से मोटापा बढ़ता है।

मोटापे में वर्जित खाद्य पदार्थ
1. चीनी, गुड़, मिठाई, जैम, जैली, चॉकलेट
2. बेकरी खाद्य पदार्थ जैसे केक, पेस्ट्री, बिस्कुट आदि
3. तले पुरे खाद्य पदार्थ जैसे पूड़ी, पराठे, कचौड़ी, पकड़ी, तमाशे आदि
4. मांस, मदिरा, मादद पेय पदार्थ, कृतिरी शीतल पेय
5. बनसपति, पी, क्रीम इत्यादि।
6. मेवे, बादाम, खाद्य पदार्थ जैसे मांस, मिठाई, जैम, जैली, चॉकलेट
7. वनपत्तियाँ, जैसे वनस्पति, फल आदि।

मोटापे में सीमित मात्रा में लिए जाने वाले खाद्य पदार्थ
1. अनाज जैसे चावल, गेहूँ।
2. साबुत दालें।
3. बिना मलाई का दूध।
4. अंडा, मछली, जड़ वाली सब्जियाँ जैसे आलू, शकरकंद, जिमींडंद, गाजर।
5. फल जैसे केला, आम, सेब, अमरूद, नाशपाती।

13.11 मोटापे का उपचार
मोटापा का उपचार निमानुसार किया जाना चाहिए:
1. भोजन पर निर्देशन करके: मोटापे का उपचार कम कैलोरीयुक्त भोजन देकर किया जा सकता है। परन्तु कैलोरी की मात्रा बहुत कम नहीं की जानी चाहिए। आहार में अधिकतम 800-1000 कैलोरी कम करना चाहिए यदि इससे भी अधिक मात्रा में कैलोरी कम कर दी जाती है, तो शरीर
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

में वसा की मात्रा बढ़ जाती है। जिसके कारण कीटोसिस (Ketosis) हो जाता है। कार्बोहाइड्रेट की संतुलित मात्रा कीटोन बॉडीज में कमी लाती है। वसा एवं प्रोटीन से ऊर्जा प्राप्त करने से रक्त में यूरीया, यूरिक अम्ल तथा कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ जाती है। अतः कार्बोहाइड्रेट की मात्रा पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

2. दवाएं: अभी तक बाजार में कोई ऐसी औषधि उपलब्ध नहीं हो सकी है जो मोटापे को एकदम से कम कर दे तथा शरीर को चुस्त एवं पुतःलिंग बना सके। परंतु कुछ दवाएं ऐसी हैं जो कुछ हद तक मोटापे को दूर करती हैं लेकिन इनका उपयोग चिकित्सक की सलाह एवं देखरेख में किया जाना चाहिए। ये दवाएं निम्न हो सकती हैं:

• भूख कम करने की दवाएं: प्रीलूडिन (Preludin), टेनवेट (Tenvate), पोंड्रेक्स (Pondrex) इत्यादि दवाओं के साथ आहार पर नियंत्रण करना भी आवश्यक है।
• ठायरोयड ग्रंथि पर प्रभाव करने वाली दवाएं: कुछ दवाएं ऐसी होती हैं जो ठायरोयड ग्रंथि के सारांश पर नियंत्रण करती हैं तथा वजन घटाती है।
• मूत्रवधक तथा रेचक दवाएं (Diuretics and Laxatives): मूत्रवधक तथा रेचक दवाओं का उपयोग मोटापा घटाने में किया जाता है। इनके अत्यधिक उपयोग से मूत्र तथा मल अधिक मात्रा में बनता है। अत्यधिक मल-मूत्र विसर्जन से मोटापा घटता है। परंतु यह शरीर के लिए हानिकारक भी होता है। अतः इसका उपयोग चिकित्सक की देख देख में ही किया जाना चाहिए।

3. फामूला आहार: मोटे व्यक्तियों के वजन को कम करने के लिए तैयार किया गया आहार (Formula Diet) बाजार में मिलता है। यह आहार डिश्वा बंद आहार होता है जिसमें कैलोरी की मात्रा 1000 किलो कैलोरी तक होती है। इनमें ऐसे भोजन पदार्थ होते हैं जो कि आमाशय में पानी अवशोषित कर लेते हैं जिससे पेट भर जाता है तथा तृप्ति की भावना उत्पन्न होती है। परंतु व्यक्ति अधिक समय तक इस फामूला आहार को खाकर वजन नहीं रह सकता है। उसे विविध भोजन पदार्थ खाने की इच्छा होती है। अतः जैसे ही वह अन्य भोजन पदार्थ प्राप्त करने लगता है, उसका वजन फिर से बढ़ने लगता है।

4. व्यायाम: मोटापा का एक अति महत्वपूर्ण कारण शारीरिक क्रियाशीलता का अभाव होना है। वे लोग जो शारीरिक श्रम कम करते हैं, वे शुद्ध कार्य करते हैं या मानसिक कार्य करते
नैदातिक एवं उपचारात्मक पोषण

है, उनके लिए व्यायाम करना अति आवश्यक होता है। मोटापे में वजन कम करने हेतु व्यायाम भी आहार के समक्ष ही महत्त्वपूर्ण होता है। व्यायाम न सिर्फ वजन कम करने के लिए जरूरी है अपितु घरे हुए वजन को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है। व्यायाम में नियमितता अति आवश्यक है। सुनहर शाम ठहरना, तैरना, साइकिल चलाना, खेलना इत्यादि व्यायाम के अलावा मोटापे को कम करने में योगासन भी प्रभावी होते हैं।

व्यायाम निम्न प्रकार से लाभ पहुँचा सकते हैं:

- शारीरिक स्थिति में सुधार
- मानसिक स्थिति में सुधार
- वजन पर नियंत्रण
- शारीरिक कार्यशीलता को बढ़ाना
- शरीर की संरचना बदलने में लाभकारी (शरीर की बस्सा को कम करना)

5. उपचारात्मक उपवास (Therapeutic starvation): मोटापे से ग्रस्त रोगियों को चिकित्सालयों में कई सप्ताह तक केवल पानी, विटामिन तथा खनिज लवण युक्त पेय पदार्थ पिलाकर रखा जाता है। इससे मोटापा कम हो जाता है।

6. रेशेयुण्ट भोज्य पदार्थ का अधिक मात्रा में सेवन: रेशेयुक्त भोज्य पदार्थ के सेवन से पेट भर जाता है, तृप्ति मिलती है, परंतु उसका केलोरी मूल्य शून्य होने के कारण ऊर्जा नहीं मिलती है। अतः यह मोटापा कम करता है।

7. नमक का कम सेवन: यदि मोटापा से ग्रस्त व्यक्ति यकृत के रोग से भी पीड़ित है तो उसके आहार में नमक बर्जित होना चाहिए क्योंकि नमक कोशिकाओं के भीतर जल को संग्रहित करने लगता है जिससे मोटापा बढ़ जाता है।

8. शात्रीय चिकित्सा द्वारा मोटापा कम करना: लिपोस्क्रेशन एक शात्रीय प्रक्रिया है जो शरीर के विशिष्ट क्षेत्रों जैसे पेट, कूलहों, जांघों, नितंबों, बाहों या गर्दन से बस्सा को हटाने के लिए एक चूर्ण तकनीक (suction technique) का उपयोग करती है। लिपोस्क्रेशन प्रक्रिया इन क्षेत्रों को आकार भी देती है। लिपोस्क्रेशन को लिपोप्लास्टी और बॉडी कॉन्टम्निंग (lipoplasty and body contouring) नाम से भी जाना जाता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

मोटापा कम करने के लिए आहार में अनुमेय भोज्य पदार्थों की मात्रा (1000 कैलोरी के लिए)

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोज्य पदार्थ</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>अनाज</td>
<td>100 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>दालें</td>
<td>50 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>दूध वसा रहित</td>
<td>300 मिलीलीटर</td>
</tr>
<tr>
<td>हरी पत्तेदार सब्जियाँ</td>
<td>200 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>अन्य सब्जियाँ</td>
<td>200 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>जड़ वाली सब्जियाँ</td>
<td>50 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>फल</td>
<td>50 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>वसा व तेल</td>
<td>15 ग्राम</td>
</tr>
</tbody>
</table>

मोटापे से ग्रस्त मध्यम वर्गीय व्यक्ति के लिए एक दिन की आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>समय</th>
<th>आहार</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः काल 6 बजे</td>
<td>एक गिलास नैंबू पानी</td>
</tr>
<tr>
<td>नाश्ता 8 बजे</td>
<td>दो टोस्ट बिना मक्खन के तथा वसा रहित दूध का एक कप या एक उबला अण्डा + दूध एक कप वसा रहित।</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रातः / सुबह 11 बजे</td>
<td>मौसमी का रस या टमाटर का सूप</td>
</tr>
<tr>
<td>भोजन दोपहर 12 बजे</td>
<td>सलाद, दही वसा रहित, हरी पत्ते वाली सब्जी, दाल, दो चपाती घी रिहत।</td>
</tr>
<tr>
<td>शाम की चाय 4 बजे</td>
<td>एक कप चाय शककर रहित या कोई एक फल या अंकुरित मॉंठ।</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय  260
<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रात: 6 बजे</td>
<td>गुलाम नींदों पानी</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह 8 बजे नाश्ता</td>
<td>नमकीन दलिया, बस्सा रहित दूध, उबला आण्डा</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>भोजन 11 बजे</td>
<td>फल (सेब, अमरूद)</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>भोजन 1 बजे</td>
<td>मंडुबा रोटी, दाल (अरहर मल्का), हरी सब्जी, सलाद</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>3 बजे शाम</td>
<td>चाय (बिना चीनी की), अंकुरित चना</td>
<td>1 कप, 1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>7 बजे शाम में</td>
<td>टमाटर / सब्जियों का सूप, गेहूँ रोटी (गेहूँ), खीर का रायता</td>
<td>1 कप, 2, 1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि 10 बजे सोते समय</td>
<td>लौंगी की सब्जी, दाल दूध (बस्सा रहित)</td>
<td>1 कटोरी, 1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>
3.12 कम शारीरिक भार या दुबलापन में आहार (Nutrition During Underweight)

मोटापा जहाँ विकसित राष्ट्रों की कुपोषण समस्या है, वहीं अल्प भार तथा दुबलापन अविकसित तथा विकाशील देशों की राष्ट्रीय समस्या है। दुबलापन भी कुपोषण का एक लक्षण है जिसमें व्यक्ति का शारीरिक भार उस अवस्था के सामान्य भार से बहुत कम होता है। जब व्यक्ति आवश्यकता से कम भोजन पदार्थों का सेवन करता है तो उसके द्वारा निर्गत वस्तु प्रति अवस्था का पूर्ण भुगतान नहीं हो पाता है तथा इस ऊर्जा की पूर्ति शरीर में उपस्थित मांसपेशियों तथा वसीय ऊतकों के क्षय से होती है जिससे व्यक्ति दुबलापन हो जाता है तथा उसका शारीरिक वजन दिन प्रतिदिन कम होता जाता है। यदि इस प्रकार के कुपोषण को नहीं रोका गया तो व्यक्ति में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अधिकांश भारतीय अल्पभार के कारण कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। गर्भवती तथा धात्री महिलाएं, शिशुओं, बालकों में कुपोषण अधिक देखने को मिलता है। जिसका प्रमुख कारण उनका ज्ञात सामान्य वजन से बहुत कम होना है। अल्पभार (Underweight) को निम्नानुसार परिभाषित किया जा सकता है:

"जब व्यक्ति का वजन आयु के अनुसार सामान्य वजन से 20 प्रतिशत या उससे भी कम होता है तो यह स्थिति अल्पभार या दुबलापन कहलाती है।"

13.13 अल्पभार के लक्षण

अल्पभार के निम्न लक्षण हैं:
1. शारीरिक शक्ति कम हो जाना।
2. शरीर की ताजगी, स्पृहा एवं चंचलता में कमी आना।
3. काम में मन नहीं लगना जिस कारण व्यक्ति अकुशल कहलाने लगता है।
4. बच्चों की वृद्धि रुक जाती है व्यंक्ति आहार में कैलोरी और प्रोटीन की कमी होती है।
5. रक्त में सोडियम और पोटशियम की मात्रा कम हो जाती है।
6. रोग प्रतिरोधक क्षमता का कम हो जाना।
7. त्वचा पर पाव आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।
8. बाहुओं के आकार का कम हो जाना।
9. बाह-बाह मृत्यु विसर्जन के लिए जाना।
10. पाचन संस्थान की अत्यबढ़ के कारण वजन का घट जाना।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

11. मांसपेशियाँ का क्षय होना
12. बालों के रंग में परिवर्तन (सफेद या स्लेटी होना)

13.14 अल्पभार के कारण

1. अन्तःस्वाभी प्रणबों का प्रभाव (Effect of Endocrine Gland): शायरीयों ग्रन्थियों से निकलने वाले रस के अधिक साव के कारण व्यक्ति दुबला हो जाता है क्योंकि उस स्थिति में शारीरिक चयापचय की दर बहुत बढ़ जाती है तथा ऊर्जा का व्यय सामान्य से अधिक होता है।

2. अपरापुर्ण भोजन (Inadequate Diet): पर्याप्त मात्राओं में भोजन न मिल पाने के कारण ऊर्जा की प्राप्ति नहीं हो पाती है। अतः: शरीर विभिन्न अंशों को सम्पन्न करने के लिए मांसपेशियों में संयोजित बसा का उपयोग ऊर्जा प्रदान करने में करता है, जिससे उसके शरीर के बसीय तनु निरंतर कम होते जाते हैं और वजन कम हो जाता है, परिणामक: व्यक्ति दुबला हो जाता है।

3. तनाव (Tension): तनाव भी दुबलेपन का प्रमुख कारण है। तनाव के कारण व्यक्ति को भूख नहीं लगती है। अतः: वह भरपेट खाना नहीं खाता है। कई बार क्रोध, भय एवं पीड़ा के कारण भी व्यक्ति को भूख नहीं लगती है। जिससे वह भरपेट भोजन ग्रहण नहीं करता है। परिणामक: वह अल्पभार का शिकार हो जाता है।

4. भोजन सम्बन्धी आदतें (Eating Habits): भोजन सदैव नियमित समय पर ही करना चाहिए क्योंकि इससे भोजन का उचित रूप से पाचन होता रहता है। असमय भोजन करने से पाचन क्रिया खराब हो जाती है तथा कु ठोलेश्वर की स्थिति आ जाती है। असमय भोजन करने से शरीर में भोजन का पाचन, अवशोषण व चयापचय ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है अर्थात पर्याप्त भोजन ग्रहण करते हुए भी व्यक्ति दुबलेपन का शिकार हो जाता है।

5. कम कैलोरीयों भोजन का अंतग्रहण (Intake of low calories): प्रत्येक व्यक्ति अपनी आयु व शारीरिक श्रम अथवा व्यवसाय के अनुसार भोजन ग्रहण करता है। जिस प्रकार एक शारीरिक कार्य करने वाला व्यक्ति एक मानसिक कार्य करने वाले व्यक्ति की अपेक्षा ज्यादा मात्राओं में भोजन करता है। एक लम्बा व भोजन व एक छोटे व पसंद व्यक्ति की अपेक्षा अधिक भोजन करता है। यदि व्यक्ति को अपनी आवश्यकतानुसार भोजन नहीं मिलता अर्थात
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

कम कैलोरीयुक्त भोजन मिलता है तथा यह स्थिति कई दिनों तक चलती रहती है तो इससे उस व्यक्ति के अन्दर पोषक तत्वों की कमी हो जाती है तथा उसमें दुर्बलता आ जाती है।

6. निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति (Low Socio Economic Status): आजकल की महानगरीय समस्याओं में यह जितना आर्थिक स्थर निम्न है, उन्हें भरपूर भोजन नहीं मिल पाता है। जिसके कारण उनके शरीर में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है, परिणामस्वरूप उसे वृद्धि का शिकार हो जाते हैं।

7. अत्यधिक शारीरिक क्रियागतता (Excess Physical Activity): जब व्यक्ति अत्यधिक शारीरिक क्रिया करता है, खेत में हल चलाता है, बोझा ढोता है तथा उसके शरीर में ऊजान रोग बढ़ जाती है। यदि कठिन शरीर या व्यायाम करने पर भी उसे पर्याप्त मात्रा में उच्च ऊजानयुक्त भोजन नहीं मिल पाता है तो वह अस्त्यभार से ग्रस्त हो जाता है।

8. पाचन संस्थान में विकार (Disorders of Digestive System): पानी संस्थान में गड़बड़ी एवं दोष हो जाने के कारण भूख नहीं लगती है। परिपूर्णता: व्यक्ति भरपूर भोजन ग्रहण नहीं कर पाता है जिससे अस्त्यभार हो जाता है एवं व्यक्ति दुबला हो जाता है।

9. रोग (Disease): कई रोगों की अवस्था में दुबलापन हो जाता है जैसे बुखार, अतिसार, पेचिया, क्षय रोग, मलरीया इत्यादि। इन अवस्थाओं में शरीर में कुछ कैलोरी की मांग बढ़ जाती है तथा भूख कम हो जाती है। भरपूर भोजन नहीं ग्रहण करने से वजन घट जाता है तथा व्यक्ति दुबलेपन का शिकार हो जाता है।

10. अस्थायी वातावरण (Unhealthy Environment): अनुपस्थित वातावरण भी दुबलेपन में सहायक होता है। केवल संतुलित भोजन करने से ही व्यक्ति स्वस्थ देख पुष्ट नहीं बन सकता जरा व्यक्ति को स्वस्थ रहने के लिए उचित पोषण के साथ खुली स्वस्थ वायु, सूर्य का पर्याप्त प्राकाश तथा व्यायाम करना चाहिए।

13.15 अस्त्यभार में आहार नियोजन

वजन बढ़ने के लिए, आहार में परिवर्तन लाना चाहिए, अपर्याप्त कैलोरी के सेवन के कारणों की जोर में आवश्यक होता है तथा यथा सम्भव उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए।
1. ऊजा: प्रतिदिन की कैलोरी की मात्रा के साथ 500 अतिरिक्त कैलोरी लेने पर एक सताह के पश्चात एक पॉण्ड वजन बढ़ जाता है। साधारण क्रियाशील व्यक्तियों के लिए प्रतिदिन 2500-3000 कैलोरी के सेवन से वजन बढ़ सकता है। जब दिन की स्थिति में इससे उच्च कैलोरी का सेवन आवश्यक हो जाता है।

2. प्रोटीन: आहार में प्रोटीन 1 से 1.2 ग्राम प्रति किलो आदर्श शारीरिक भार के अनुसार होना चाहिए सामान्यतः 60 से 80 ग्राम प्रोटीन उचित होता है।

3. विटामिन तथा खनिज लवण: तूफानी कुशलित व्यक्तियों में इन दोनों तत्वों की कमी पायी जाती है। उच्च कैलोरी युक्त भोजन लेने से इन दोनों पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा में पूर्ति हो जाती है। इन दोनों पोषक तत्वों को गोलियों के रूप में भी दिया सकता है।

4. वसा: आहार में कुल ऊजा का 30 प्रतिशत वसा द्वारा उपलब्ध होना चाहिए। इस मात्रा में विशेष रूप से असंतुष्ट वसा के स्रोतों का प्रयोग करना चाहिए। इन में दो बार प्रमुख भोजन लेने के अतिरिक्त नाशता इन्हीं कई बार करना चाहिए। कम मात्रा में दिन में कई बार भोजन लेना उचित होता है।

5. टॉकिंक: आजकल बाजार में अल्पभार को दूर करने के लिए कई दवाइयाँ एवं टॉकिंक उपलब्ध हैं, जो भूख बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसका उपयोग एक निश्चित मात्रा में सीमित समय तक ही किया जाना चाहिए।

6. व्यायाम: अल्पभार में व्यायाम करना उतना ही लाभकारी है जितना मोटापे एवं टॉकिंक उपलब्ध है। उसका उपयोग एक निश्चित मात्रा में सीमित समय तक ही किया जाना चाहिए।

7. तरल पदाथण का सेवन: दुबले व्यक्ति के शरीर में वृद्धि हेतु दो आहारों के मध्य तरल पेय पदाथर्थ जिसमें भूख तत्व मिश्रित सान्द्र रूप में (Concentrated) हो, दिया जाना चाहिए। इन में व्यक्ति को दो बार भोजन न करके 5 से 6 बार हल्का भोजन दिया जाना चाहिए। इन में अतिरिक्त कैलोरी का अंतर्ग्रहण होना से वजन बढ़ने लगेगा।

8. संवेगात्मक कारणों का दूर करना: अल्पभार के कारणों को जानना अविभाज्य है। तुलसी इसका उपचार किया जाना चाहिए। यदि व्यक्ति संवेगात्मक कारणों (जैसे भय, क्रोध, तनाव...
इत्यादि से भोजन नहीं ग्रहण कर रहा है, तब सबसे पहले इन कारणों को दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए। केवल आहार में परिवर्तन कर देने मात्र से ही सफलता नहीं मिलती है।

अल्पभार के रोगी के लिए आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः 6 बजे</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>मीठे बिस्कुट</td>
<td>2 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह 9 बजे</td>
<td>भरवाँ पराठे</td>
<td>2 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>(नाशता)</td>
<td>(आलू) मक्खन, दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>फल (केला, पपीता या आम)</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर का भोजन</td>
<td>चावल</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दाल (राजमा)</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>आलू बङ्गाल की सब्जी</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>गोटी</td>
<td>2 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>रािजता/ दही</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>सलाद</td>
<td>½ प्लेट</td>
</tr>
<tr>
<td>शाम की चाय</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>5 बजे</td>
<td>पकौड़े</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>7 बजे</td>
<td>तमाटर/ सब्जियों का सूप</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि का भोजन</td>
<td>रोटी</td>
<td>2 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>9 बजे</td>
<td>अण्डा करी / सोयाबीन दाल</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>सब्जी (बीन्स आलू)</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
</tbody>
</table>

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 266
अभ्यास प्रश्न 1

1. मोटापे की स्थिति में पोषण को समझाए।
2. मोटापा कम करने के लिए कौन-कौन से आहार नियोजन बताएँ।
3. दुर्बलता या अल्यभार में आहार नियोजन बताएँ।
4. अल्यभार एवं मोटापा में व्यायाम की महत्ता समझाए।
5. रिक्त स्थान भरें।
   a. ………………… मोटापे का पता लगाने के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाला मानदंड है।
   b. वजन के प्रबंधन हेतु व्यक्ति को नियमपूर्वक …………………………… करना चाहिए।
   c. अल्यभार में व्यक्ति को सामान्य ऊर्जा की आवश्यकता से ………………… कैलोरी अधिक देनी चाहिए।
   d. महिलाओं में यदि कमर तथा नितंब का अनुपात ………………… से अधिक हो तब यह मोटापे का संकेत देता है।

13.16 सारांश
प्रस्तुत इकाई में आपने शारीरिक भार के प्रबंधन के विषय में अध्ययन किया। वैश्विक स्तर पर एक अरब से अधिक लोग मोटापे तथा वजन की अधिकता से प्रस्त हैं। मोटापे या अधिक वजन के कारण कई स्वास्थ्य संबंधी परेशानियाँ हो सकती हैं, जैसे चलने फिरने में दिक्कत होना, विभिन्न रोग जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, अधिक कोलेस्ट्रोल का रक्त में पाया जाना इत्यादि। वजन की अधिकता को दो प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है; वजन का अधिक होना तथा मोटापा। मोटापा दो प्रकार का होता है; विकास सम्बन्धी मोटापा तथा प्रतिक्रियाशील मोटापा। मोटापे के कई कारण हैं जैसे आयु, लिंग, आर्थिक स्थिति, वंशानुमार, भोजन सम्बन्धी आदतें, संवेगात्मक कारण, अंतःसाँख्रिय प्रभाव आदि। मोटापे की पहचान वजन को नापकर तथा त्वचा के कुछ विशिष्ट भागों
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

की मोटाई को नापकर की जाती है। शरीर ड्रेम्मान सूचकांक (Body Mass Index) मोटापे का पता लगाने के लिए एक सरल तथा सर्वाधिक इस्तेमाल किया जाने वाला मानदंड है। मोटापे के कारण कई जितलताएं उत्पन्न हो सकती हैं जिनका विवरण प्रस्तुत इकाई में दिया गया है। मोटापे की स्थिति में एक आदर्श वजन पाने के लिए व्यक्ति को आहार नियोजन करना अत्यंत आवश्यक है।

दुबलापन एवं अल्प भार उस समस्या का नाम है जब व्यक्ति का शारीरिक भार और भार के औसत स्तर से 10 से 20 प्रतिशत कम होता है। कम पोषण (Under nutrition) और कुपोषण (malnutrition) दोनों ही कारण से अल्पभार की समस्या हो सकती है। अल्पभार के कई कारण हो सकते हैं जैसे आहार का कम सेवन, तनाव, अंत:साही गृहियाँ का प्रभाव, गरीबी, अन्य विशेष शारीरिक शर्म आदि। अल्पभार की स्थिति में भी आहार नियोजन अनिवार्य है जिससे व्यक्ति एक आदर्श शारीरिक भार प्राप्त कर सकें। उपरोक्त दोनों स्थितियों में व्यायाम का अति महत्व है।

### 13.17 पारिभाषिक शब्दावली

- **मोटापा**: जब व्यक्ति का वजन अपनी आयु, लिंग तथा ऊँचाई के लिए सामान्य वजन से 20 से 80 प्रतिशत बढ़ जाता है, तो इसे मोटापा (Obesity) कहते हैं।
- **हायपरथैलेमस (Hypothalamus)**: यह मस्तिष्क का एक छोटा क्षेत्र है जो मस्तिष्क के आधार पर पित्युर्टिप्रकृति के पास स्थित होता है। यह शरीर में हामी का साधन करने तथा शरीर के तापमान को नियंत्रित करने जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।
- **वनियर कैलिपर**: लचा की मोटाई नापने हेतु प्रयोग किया जाने वाला उपकरण।
- **कीटोसिस (Ketosis)**: एक चयापचयी अवस्था जिसमें शरीर के ऊतकों में कीटोन निकायों का स्तर बढ़ जाता है।

### 13.18 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. इक्साइ का मूल भाग देखें।
2. इक्साइ का मूल भाग देखें।
3. इक्साइ का मूल भाग देखें।
4. इक्साइ का मूल भाग देखें।
5. रिक्त स्थान भरिए।
   a. शरीर ड्रेम्मान सूचकांक (Body Mass Index)
1. अत्यधिक शारीरिक भार (मोटापे) का कारण, हानियाँ तथा शारीरिक वजन को कम करने के उपाय लिखिए।
2. दुर्बलता के कारण तथा लक्षण बताते हुए पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता बताइए।
इकाई 14: ज्वर तथा कैंसर की स्थिति में आहार

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 ज्वर की परिभाषा
14.4 ज्वर की अवस्था में रोगी के शरीर में होने वाले चयापचयी परिवर्तन
14.5 ज्वर में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता
14.6 लघु अवधि ज्वर– टायफाइड
14.7 दीर्घ अवधि ज्वर– तपेदक / क्षय रोग
14.8 कैंसर का अर्थ
14.9 कैंसर की शुरुआत
14.10 कैंसर के प्रकार
14.11 कैंसर के चरण
14.12 कैंसर के लक्षण
14.13 कैंसर के कारण
14.14 कैंसर से बचाव
14.15 कैंसर में आहार
14.16 सारांश
14.17 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
14.18 निरंतरात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

मनुष्य के शरीर का सामान्य तापक्रम 98.4 डिग्री फारेल्हाइट होता है। जब तक मानव शरीर में ऊर्जा का उत्पादन तथा ऊर्जा की हानि में सत्तुलन बना रहता है अर्थात शरीर में जितनी ऊर्जा उत्पन्न होती है, उतनी ही खिच्छ हो जाती है तो शरीर के तापक्रम में कोई अन्तर नहीं आता है तथा यह सामान्य बना रहता है। लेकिन किसी कारणवश जब यह सत्तुलन बिगड़ जाता है और शरीर में ऊर्जा का उत्पादन तो होता है, लेकिन ऊर्जा इतनी खिच्छ नहीं होती है तब शरीर का ताप बढ़ना शुरू हो
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

जाता है, जैसे संक्रामक रोगों के हो जाने पर, चोट लगने पर या किसी भी प्रकार की कीटाणु युक्त बीमारी होने पर शरीर के स्वास्थ्य में गिरावट आ जाती है। शरीर में ऊर्जा का उत्पादन विशेष रूप से मांसपेशियों, वृक्षता तथा अन्तः प्रस्थियों में होता है। शरीर से ऊर्जा की हामि दो रूपों में होती है:

1. ऊर्जा के रूप में: शरीर की लची तथा मांस द्वारा

2. वातावरण ऊर्जा के रूप में: यह मनुष्य द्वारा बिंदुन्त कार्य करने में खर्च होती है।

शरीर में जितनी ऊर्जा बनती है उसकी 95 प्रतिशत ऊर्जा के रूप में खर्च होती है केवल 5 प्रतिशत ऊर्जा वातावरण ऊर्जा के रूप में काम आती है जो कि मनुष्य के लिए बहुत उपयोगी होती है। शरीर के तापक्रम को नियंत्रित करने के लिए मस्तिष्क में कुछ केन्द्र बिंदु होते हैं जो कि थर्मोस्टेट (Thermostate) कहलाते हैं। यह एक निश्चित सीमा तक शरीर के तापक्रम की नियंत्रित रखते हैं लेकिन बाद में इनका नियंत्रण खाम हो जाता है और शरीर का तापक्रम बढ़ने लगता है।

कैंसर की बीमारी आज केवल भारत में ही नहीं पूरे विश्व में तेज़ी से फैल रही है। वास्तव में मानव विकास की कुदरती प्रक्रिया द्वारा ही कैंसर रोग का जन्म होता है। अर्थात, जैसे-जैसे मानव का विकास हो रहा है वैसे-वैसे ये रोग बढ़ रहा है। 20 वर्ष की आयु तक व्यक्ति के विकास के साथ-साथ ये कोशिकाएं सेंकड़ों बार बेंट चुकी होती हैं। जब व्यक्ति का विकास होता है, तब बहुत ही नियंत्रित वातावरण में इन कोशिकाओं का विभाजन या बंटवारा होता है। परन्तु जब कोशिकाओं के विभाजन की प्रक्रिया अनियंत्रित हो जाती है तब कैंसर नामक रोग का जन्म होता है। कैंसर कई प्रकार का होता है जैसे मुख का कैंसर, फेफड़ों का कैंसर, रक्त का कैंसर, कोलन कैंसर, स्तन कैंसर, गर्भाशय का कैंसर इत्यादि। कैंसर एक ऐसी बीमारी है जिसका रोगी के सामान्य स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है। कैंसर के इलाज के चलते रोगी के आहार पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इलाज पूर्ण रूप से असरदार हो उसके लिए जरूरी है कि आहार में कुछ सावधानियाँ रखी जाएं।
14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात शिक्षार्थीं;

• ज्वर के प्रकार के विषय में समझ पाएंगे;
• लघु एवं दीर्घ अवधि ज्वर के अन्तर्गत रोगों में आहारीय उपचार की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
• कैंसर का अर्थ, उसके कारण, जटिलताएं, लक्षण इत्यादि के विषय में जानकारी ले पाएंगे; तथा
• कैंसर में उपचारात्मक आहार, विभिन्न प्रकार के कैंसर और उनके निवारण की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे।

इकाई के प्रथम भाग में हम ज्वर पर चर्चा करेंगे।

14.3 ज्वर की परिभाषा

ज्वर जिसे ज्वर भी कहते हैं, की स्थिति में शरीर का तापमान साधारण अवस्था से अधिक हो जाता है। सामान्यतः एक स्वस्थ व्यक्ति के शरीर का तापमान 98.4 डिग्री फारेनहैट होता है, परन्तु यदि शरीर का तापमान इस तापमान से अधिक हो जाता है, अर्थात तापमान में बढ़ोतरी हो जाती है तो यह स्थिति ज्वर की स्थिति कहलाती है। यह किसी भी संक्रामक रोग का महत्वपूर्ण लक्षण है। शरीर का तापमान बढ़ने पर शरीर में होने वाली समस्त उपचार के क्रियाओं में परिवर्तन आ जाते हैं जिसके फलस्वरूप आधारीय चयापचय की दर (Basal Metabolic Rate) में वृद्धि हो जाती है। शरीर का 1 डिग्री फारेनहैट तापमान बढ़ने पर आधारीय चयापचय की दर 7 प्रतिशत बढ़ जाती है।

आहार की दृष्टि से सभी प्रकार के ज्वरों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है:

• तीव्र ज्वर अथवा लघु अवधि ज्वर (Acute or Short Duration Temperature)
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- दीघकालीन जवर अथवा दीघ अवधि जवर (Chronic or Long Duration Fever)

जब व्यक्ति के शरीर का तापमान 103 डिग्री फारहेनहाईट से ऊपर हो जाता है उसे तीव्र जवर कहते हैं। यह जवर शरीर में थोड़े समय तक रहता है जैसे मलरिया, बाइरल जवर आदि। जब तेज जवर शरीर में ज्यादा समय तक रहता है तो अत्यंत हानिकारक होता है तथा इसमें मरीज की जान को खतरा काफी बढ़ जाता है, जैसे बैक्टीरियमिया, सेप्टीसीमिया।

कम तीव्र अथवा दीघकालीन जवर लम्बे समय (दो सप्ताह या 1 महीना) तक शरीर में बना रहता है।

इस प्रकार के जवर की तीव्रता अधिकतर 99 डिग्री फारहेनहाईट से 101 डिग्री फारहेनहाईट तक रहती है जैसे क्षयरोग में, टायफाइड में आदि।

जवर से पीड़ित व्यक्ति के लिए निम्नलिखित बातें को जानना अत्यन्त आवश्यक हैः

- जवर से पीड़ित रोगी के शरीर को प्रतिदिन पानी से पीना चाहिए तथा उसके रूप में बदलने चाहिए।
- रोगी को प्रतिदिन मल त्याग करवाना चाहिए। इससे शरीर के ऊष्मा बाहर आता है तथा आँत भी स्वस्थ बनी रहती है।
- रोगी के शरीर में पाचन, अवशोषण तथा चयापचय ठीक प्रकार नहीं हो पाता है इसलिए रोगी को सदैव हल्का भोजन देना चाहिए जैसे खिचड़ी, दलिया, मूँग की दाल का पानी, दूध आदि।
- जवर की अवस्था में रोगी के शरीर में कोशिकाओं की दूर फूट होती है, इसलिए रोगी को विश्राम करना चाहिए।
- यदि रोगी का जवर बहुत तेज हो जाए तो ठंडे पानी की पिट्ठियाँ उसके माथे पर रखें जब तक कि जवर हल्का न पड़ जाए।
- डॉक्टर की सलाह अवश्य लेनी चाहिए तथा चिकित्सकीय परामर्श के बिना किसी भी प्रकार की दवाँयाँ स्वयं से नहीं लेनी चाहिए।
14.4 ज्वार की अवस्था में रोगी के शरीर में होने वाले चयापचय तथा परिवर्तन

- आधारीय चयापचय की दर: शरीर के तापमान के साथ-साथ आधारीय चयापचय की दर भी बढ़ जाती है तथा यह वृद्धि 1 डिग्री फारेनहाइट तापमान बढ़ने पर 7 डिग्री होती है।

- कार्बोहाइड्रेट चयापचय: ज्वार की अवस्था में ऊर्जा की पूर्ति करने के लिए शरीर में संचित ग्लाइकोजन काम में आता है जिससे ग्लाइकोजिनोलाइसिस (Glycogenolysis) की दर बढ़ जाती है।

- प्रोटीन चयापचय: शरीर का तापमान बढ़ने से कोशिकाओं तथा ऊतकों की टूट फूट शुरु हो जाती है तथा रक्त में उपस्थित खेत्र एवं लाल कणिकाओं का भी हास निवारक होता है अर्थात् प्रोटीन का चयापचय बढ़ जाता है जिससे शरीर से विसर्जित होने वाले पदार्थों में नाइट्रोजन की अधिकता होती है।

- खनिज लवण: ज्वार में पसीना अधिक आने से जल, सोडियम, पोटेशियम व क्लोराइड की जमीन में दरहट हो जाती है, जिसकी पूर्ति अति आवश्यक है।

- ज्वार में रोगी की क्रियाशीलता व गतिशीलता क्षतिग्रस्त हो जाती है। जो अवश्यक तथा निर्दिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करती है वहीं याद किया जाता है।

14.5 ज्वार में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता

- ऊर्जा: ज्वार में ऊर्जा की अधिक आवश्यकता पड़ती है क्योंकि इस अवस्था में आधारीय चयापचय की दर बढ़ जाती है जिसके लिए 1 डिग्री फारेनहाइट ताप के साथ ऊर्जा अधिक लगेगी। ऊर्जा उत्पादन अधिक होता है अर्थात् ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ती है। ज्वार का स्थिति में रोगी की चयापचय की खबर होती है जिसके लिए पाचन अवश्यकता में बढ़ती है। ज्वार के स्थिति में केलोगी की पूर्ति करना कठिन होता है क्योंकि भोज्य पदार्थों का अवशोषण ठीक से नहीं हो पाता है तथा पाचन झिया ठीक नहीं रहती जिससे रोगी को वमन की शिकायत रहती है और रोगी भोजन ग्रहण करने में घबराता है। एक व्यक्ति को ज्वार की स्थिति में ऊर्जा की प्रतिदिन
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

आवश्यकता से 50 प्रतिशत अधिक ऊर्जा देनी चाहिए जैसे यदि किसी व्यक्ति को 2400 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है तो उसे ज्वर की अवस्था में 2400+1200 = 3600 कैलोरी की आवश्यकता पड़ेगी।

• काबांहाइड्रेट: काबांहाइड्रेट ग्लाइकोजन के रूप में व्यक्ति के शरीर में मांसपेशियों तथा वक्रत में संचित होता है। ज्वर की अवस्था में ऊर्जा की आवश्यकता को पूरी करने के लिए यह संचित किया हुआ ग्लाइकोजन काम में आता है तथा ग्लाइकोजिनोलाइसिस प्रक्रिया के द्वारा ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। अतः ज्वर की अवस्था में काबांहाइड्रेट अधिक मात्रा में देना चाहिए जिससे संचित ग्लाइकोजन की कमी पूरी हो सके तथा ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति भी की जा सके। यदि सम्भव हो तो यह काबांहाइड्रेट मोनासेक्राइड के रूप में देना चाहिए जिससे इसके पाचन की कोई आवश्यकता नहीं होती है तथा यह मोनासेक्राइड सीधे रक्त में अवशोषित हो जाते हैं। जैसे म्यूकोज, फ्रॉक्टोज के अतिरिक्त काबांहाइड्रेट की पूर्ति के लिए स्टार्च का पानी जैसे जी (Barley) का पानी भी दे सकते हैं।

• प्रोटीन: ज्वर के समय ऊतकों तथा कोशिकाओं की क्षति होती है। इसके पुन:निर्माण के लिए अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है तथा अतिरिक्त प्रोटीन ऊर्जा प्रदान करने का कार्य भी करती है। अतः व्यक्ति को प्रतिदिन सामान्य से 50 प्रतिशत अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है क्योंकि रोगी की पाचन और अवशोषण क्रियाएं काफी क्षीण हो जाती हैं। इसलिए रोगी को ऐसे प्रोटीन युक्त पदार्थ देना चाहिए जो सरलता से पूरे संसस्तक अवशोषित हो सकें तथा उनमें विद्यमान प्रोटीन उच्च कोटि (High biological Value) की होनी चाहिए यदि आहार में प्रोटीन की कमी होती है तो:

- रोगी में ऊतकों का प्रोटीन काम में लिया जाता है जिससे रोगी दुबला पतला हो जाता है।
- एफटीबॉडीज प्रोटीन होते हैं जो रोगों के कीटाणुओं को मारने में सहायक होती है। आहार में प्रोटीन की कमी होने तो एफटीबॉडीज का निर्माण भी कम होता है जिससे रोगी का संक्रामक रोगों से शीघ्र विचाल नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में टूटे पूटे ऊतकों तथा कोशिकाओं का निर्माण भी शीघ्रता से नहीं हो पाता जिससे रोगी काफी समय तक बीमार
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

• खाद्य: ज्वर के समय वसायु आहार अधिक मात्रा में नहीं देना चाहिए क्योंकि इस समय पाचन संस्थान की कार्यशीलता कम हो जाती है तथा तले या गरिष्ठ पदार्थ देने से यह और भी अधिक प्रभावित हो सकती है। इसलिए, इमल्सीौल वस्त्र का प्रयोग करना चाहिए जिससे उसके पाचन में कठिनाई न हो।

• खनिज लवण: ज्वर में शरीर का तापमान बढ़ जाता है जब से पशीना निकलने के कारण सोडियम क्लोराइड (नमक) तथा पोटेशियम लवण भी शरीर से बाहर निकलते हैं जिससे इलेक्ट्रोलाइट्स का सन्तुलन बिगड़ जाता है तथा खनिज लवणों की कमी हो जाती है। यदि इन खनिज लवणों की वृद्धि न की गयी तो मरीज चमन की शिकायत करने लगता है तथा उसे घबराहट के साथ-साथ हायपेरियो में दर भी होता है। अतः रोगी को आहार में नमक, खनिज लवण अधिक देने चाहिए तूफ़, सूप, डाइट आदि के द्वारा खनिज लवणों की वृद्धि की जा सकती है।

• वीटामिन्स: ज्वर में वीटामिन 'ए', 'सी' तथा 'बी कॉम्प्लेक्स' की आवश्यकता बढ़ जाती है:

  वीटामिन 'ए': यह विरोधी संक्रामी कारक (Anti-infective factor) होने के कारण संक्रामक रोग होने से बचता है।

  वीटामिन 'सी': यह लौह लवण के अवशोषण को बढ़ाता है।

  वीटामिन 'बी कॉम्प्लेक्स': यह वीटामिन शारीरिक कमजोरी को दूर करने में सहायक है। ज्वर के समय एण्टीबायोटिक दवाइयें लेने से अंदाज़ में पाये जाने वाले बैक्टीरिया द्वारा बी कॉम्प्लेक्स का निर्माण तथा अवशोषण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है जिससे वीटामिन की कमी हो जाती है।

• जल: ज्वर में पशीना आने के कारण शरीर से पानी की क्वति अन्यायिक बढ़ जाती है। अतः इस कमी को फूरा करने के लिए आवश्यक है कि रोगी को उबला हुआ पानी ठंडा करके थोड़ी-
थोड़ी देर बाद देना चाहिए। पानी की इस कमी को फलों के रस, दूध तथा सूप के द्वारा भी पूरा किया जा सकता है। जब पानी की अत्यधिक कमी हो जाती है तथा रोगी मुंह से पानी नहीं ले सकता हो तो उस समय पानी की कमी को पूरा करने के लिए ग्लूकोज तथा जल नस्लों द्वारा दिया जाता है।

14.6 लघु अवधिज्वर – टायफाइड (Acute Fever-Typhoid)

यह सालमोनेला टाइफी (Salmonella typhi) बैक्टीरिया द्वारा होने वाला संक्रमक रोग है। यह पीने, खाने या अन्य पदाथरों के द्वारा होने वाला वातावरण से होने वाला ज्वर है। यह सभी आयु की वर्गों में होता है परन्तु बच्चों में अधिक देखा जाता है। आजकल एंटीबायोटिक के प्रयोग और स्वच्छता पर ध्यान देने के कारण इस ज्वर की अवधि कम हो गयी है।

टायफाइड में होने वाले शारीरिक परिवर्तन: टायफाइड में आंतों में छिट हो जाते हैं और उनसे रक्त निकलना लगता है। इस कारण भोजन का पाचन और अवशोषण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। टायफाइड में ऊतकों का बहुत अधिक क्षय होता है। इस कारण रोगी का 250-500 ग्राम तक वजन प्रतिदिन घटता है। अतः इस रोग में अधिक प्रोटीन युक्त आहार उपयुक्त होता है। आंतों में सूजन के कारण रेसियुक्त पदार्थ आहार में सम्भवतः नहीं करने चाहिए। अधिक प्रोटीन युक्त और तरल व कोपल पदार्थ जिनसे ऊर्जा भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकती हो, टाइफाइड के रोगी के लिए उत्तम रहते हैं।

आहारीय उपचार: तेज ज्वर के दौरान उल्टी, जी मचलाना तथा भूख न लगना जैसे लक्षण आमतौर पर देखे जाते हैं। अतः इसमें आहारीय उपचार पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

* ऊर्जा: टायफाइड में गरीब का तापमान बढ़ता है जिसका कारण आधारीय व्यापार दिन (बी0एम0आर) 50 प्रतिशत तक बढ़ जाता है। जैसे-जैसे ऊर्जा की खपत बढ़ती है रोगी को बेचैनी का अनुभव होता है। ऊर्जा की आवश्यकता 10-20 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। ज्वर के
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शुरुआत में रोगी को 600 -1200 कैलोरी प्रतिदिन का आहार देना चाहिए। फिर जैसे-जैसे उसकी पाचन साफ तथा हालत में सुधार हो, उसे अधिक पूर्व बारा आहार देना चाहिए।

• प्रोटीन: प्रोटीन की आवश्यकता ज्वर की तीव्रता और अवच के आधार पर निर्धारित करती है। ज्वर में कोशिकाओं का क्षय अत्यधिक होता है। इसलिए प्रोटीन का सेवन 1.5 से 2 गुना तक बढ़ा देना चाहिए। अर्थात 1.5 से 2 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन प्रतिक्रिया सारींगक भार के आधार पर देना चाहिए। आहार में पूर्ण मात्रा में उल्लभ पर प्रभावित कर लेना चाहिए। आसानी से पचने वाले तथा उच्च-जैविक मूल्य वाले प्रोटीन के स्रोत जैसे अण्डा, दूध आदि को आहार में पूर्ण पाचन मात्रा में शामिल करना चाहिए।

• काबोहाइड्रेट: ग्लाइकोजन संग्रह को पूर्व स्थापित करने के लिए एवं प्रोटीन को बचाने में मददगार होते हैं। इसलिए काबोहाइड्रेट का सेवन 1.5 से 2 गुना तक बढ़ा देना चाहिए। अर्थात 1.5 से 2 ग्राम ग्लाइकोजन प्रतिदिन प्रतिक्रिया सारींगक भार के आधार पर देना चाहिए। आहार में पूर्ण मात्रा में उल्लभ पर प्रभावित कर लेना चाहिए। आसानी से पचने वाले काबोहाइड्रेट के स्रोत जैसे सरल टार्ज, ग्लूकोज, शहद, चीनी आदि आहार में शामिल करना चाहिए।

• वासा: वासा का उपयोग ऊल्लभ मूल्य बढ़ाने के लिए किया जाता है। अतिसार के कारण आसानी से पचने वाले वासा के स्रोत जैसे क्रीम, मक्खन, दूध आदि में शामिल करना चाहिए। तली-भुनी चीजों से परहेज करना चाहिए।

• रेशा: टायफाइड में अतिसार के साथ-साथ छोटी आंत में सूजन के कारण पाचन संस्थान के लिए प्रदाहजनक (irritating) किसी भी भोज्य सामग्री से परहेज करना चाहिए। अत: रेशे का प्रयोग टायफाइड में वर्जित होता है।

• विटामिन: संक्रमण तथा ज्वर की अवस्था में शारीर की विटामिन ए तथा विटामिन C की आवश्यकता बढ़ जाती है। इसके अलावा ऊल्लभ की आवश्यकता बढ़ने पर रोगी के लिए विटामिन बी समूह भी अविचारी होता है। एन्टीबायोटिक व अन्य दवायें के प्रयोग द्वारा आंतों में उपस्थित लाभकारी बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। इस कारण भी विटामिन बी समूह पूर्ण पाचन मात्रा में लेना चाहिए।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

• खनिज लवण: अत्यधिक पसीने और मूत्र के कारण खनिज लवणों जैसे सोडियम, पोटेशियम और क्लोराइड आदि का काफी नुकसान होता है। अत: नमकीन सूप, फलों का रस, दूध आदि के मात्राम से खनिज लवण आहार में पर्याप्त मात्रा में देने चाहिए। टायफाइड में आंतों से रक्तसाव भी होता है। अत: लौह लवण के उचित स्रोतों को भी आहार में शामिल करना चाहिए।

• ढाव पदार्थ: मूत्र और पसीने के रूप में निकलने वाले ढाव की पूर्ति करने के लिए रोगी को उचित मात्रा में ढाव पदार्थ देना आवश्यक सामान्यतः: 2.5 से 5 लीटर पेय विभिन्न रूपों जैसे जूस, सूप, दूध, सादा पानी आदि आहार में लेने चाहिए।

पर्याप्त मात्रा में देने योग्य भोज्य पदार्थ

• शोधित (refined) अनाज जैसे मैदा
• दूध और दूध से बने पदार्थ
• अच्छी तरह से उबली हुई सब्जियाँ
• धुली दालें व कम रेशुकृत भोज्य पदार्थ
• अण्डा, मछली
• शर्कराईं
• पर्याप्त ढाव जैसे जूस, सूप आदि।

वर्जित पदार्थ

• रेशे युक्त भोज्य पदार्थ जैसे साबूत अनाज व दालें
• कच्ची सब्जियाँ व फल (पपीता व केले के अलावा)
• तले हुए अथवा मिर्च मसाले युक्त पदार्थ
• तेज गन्ध वाले पदार्थ जैसे पापड़, अचार, प्याज, लहसुन
• मिठाईयाँ, केक, पेस्ट्री आदि।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

तेज ज्वर की अवस्था में यदि रोगी मुख से आहार लेने में असमर्थ हो तो उसे अन्तः शिराओं (Intravenous Fluid) के माध्यम से आहार देना चाहिए जिससे शरीर में खनिज लच्छन तथा जल का सन्तुलन बना रहे, साथ ही ऊर्जा भी प्राप्त हो सके।

तीत्र ज्वर की तिथि में ल्यूक्स के लिए आहार में उपस्थित भोज्य पदार्थों की मात्रा (ल्यूक्स/प्रतिदिन)

<table>
<thead>
<tr>
<th>भोज्य पदार्थ</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दूध</td>
<td>1 लीटर</td>
</tr>
<tr>
<td>जी का पानी</td>
<td>1 लीटर</td>
</tr>
<tr>
<td>टमाटर या हरी सब्जी का सूप</td>
<td>250 मिलीलिटर</td>
</tr>
<tr>
<td>ग्लूकोज</td>
<td>200 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>चीनी</td>
<td>100 ग्राम</td>
</tr>
<tr>
<td>फलों का रस</td>
<td>400 मिलीलिटर</td>
</tr>
</tbody>
</table>

तीत्र ज्वर की तिथि में रोगी हेतु आहार तालिका (ल्यूक्स/प्रतिदिन)

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रात: 6 बजे</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रात: 8 बजे</td>
<td>जी का पानी (ग्लूकोज के साथ)</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>9 बजे</td>
<td>टमाटर या हरी सब्जी का सूप</td>
<td>1कप</td>
</tr>
<tr>
<td>11 बजे</td>
<td>मीठा दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>1 बजे दोपहर में</td>
<td>नमकीन दलिया</td>
<td>1कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>मीठी चूज</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>यात्रा को 4 बजे</th>
<th>चाय</th>
<th>1 कप</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>रात्रि 8 बजे</td>
<td>नमकीन खिचड़ी</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि 9 बजे</td>
<td>मीठा दूध</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
</tbody>
</table>

नोट: तीत्र ज्वर में नर्म आहार जैसे खिचड़ी, उबला आलू, दूध, पनीर, फलों का रस आदि का सेवन पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए।

14.7 दीर्घ अवधि ज्वर- तपेदिक / क्षय रोग (Chronic Fever- Tuberculosis)

तपेदिक या क्षय रोग एक संक्रमण है जो कि माइक्रोबैक्टीरियम टूबरक्लोसिस (Mycobacterium Tuberculosis) नामक बैक्टीरिया द्वारा होता है। तपेदिक आज भी विकासशील देशों में मृत्यु दर को बढ़ाने वाले मुख्य कारणों में से एक है। इस रोग में बैक्टीरिया मुख्यतः फेफड़ों को प्रभावित करता है। इस रोग में हल्का ज्वर काफी लम्बे समय तक शरीर में बना रहता है। क्षय रोग में चयापचय की गति तीत्र नहीं होती है, परन्तु दीर्घकालीन रोग हो जाने के कारण शरीर के अवयवों का क्षय अवस्था होता है। इसलिए रोगी को अधिक ऊजाय तथा प्रोटीन युक्त आहार मिलना चाहिए।

तपेदिक के कारण

इस रोग के कारण निम्नलिखित हैं:

1) कुपोषण: कुपोषण की अवस्था में शरीर दुर्बल तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो जाती है। जिस कारण क्षय रोग का संक्रमण आसानी से प्रभावित कर सकता है।

2) गरीबी: गरीबी से प्रसिद्ध वर्ग अक्सर ही कुपोषित देखा जाता है जिस कारण विभिन्न रोगों से यह पीड़ित हो सकता है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

3) अस्थायी: निम्न स्तर का रहन सहन यानी शारीरिक एवं घरेलू साफ़ सफाई पर ध्यान न देने से भी इस संक्रमण को बढ़ावा मिलता है। गाँवों में प्राय: खुले स्थानों पर मल मूत्र त्याग करने की आदतें, कूड़े कचरे का अनुचित निष्ठागत न होने से खुली नालियाँ इत्यादि कारक आसपास के वातावरण को दूषित करते हैं। इस प्रकार का वातावरण तपेदिक रोग को बढ़ावा देता है।

4) अज्ञात: शारीरिक एवं घरेलू साफ़ सफाई पर ध्यान न देने से तो तपेदिक रोग फैलता ही है पर इससे बचाव की जानकारी के प्रति जागरूक न होना व अज्ञातता भी इसे बढ़ावा देते हैं। ऐसे तपेदिक के रोगी से उचित दूरी न बनाए रखना, रोगी की उचित साफ़ सफाई एवं उसके बर्तन आदि प्रयोग न करने आदि बातों के प्रति अज्ञातता भी एक स्वस्थ व्यक्ति को तपेदिक का रोगी बना सकता है।

तपेदिक के नैदािनक लक्षण

- खाँसी व कफ आना।
- नाड़ी की गति तीत्र होना।
- जल्दी धक्काव व आलस्य अनुभव करना।
- कभी-कभी छाती में पोड़ा व मुंह से रक्त का निकलना।
- बहुत तेजी से शारीरिक ब्यापार घटना।
- लगातार हल्का चंप करना।

तपेदिक की जटिलताएँ

तपेदिक का अगर समय से इलाज न कराया जाए वा इस पर ध्यान न दिया जाये तो यह रोगी को कुपोषण की चरम सीमा तक पहुँचा सकता है तथा फिर भी ध्यान न देने पर रोगी की मृत्यु भी हो सकती है। इसके अलावा घर के अन्य स्वस्थ व्यक्ति भी इसका शिकार हो सकते हैं।

तपेदिक के रोगी के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

तपेदिक के रोगी को उचित दवाइयों, साफ-स्वच्छ वातावरण, आराम के साथ-साथ पौष्टिक आहार की भी अत्यधिक आवश्यकता होती है।

- ऊर्जा/कैलोरी: तपेदिक का रोगी अत्यधिक ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ जाती है। इसमें चयापचय की दर अधिक नहीं होती है लेकिन हल्का ज्वर रहने के कारण ऊर्जा की हानि सामान्य से अधिक होती है। इसलिए तपेदिक के रोगी को सामान्य से 10 प्रतिशत अधिक कैलोरी देनी चाहिए। अतः: रोगी को 300-500 कैलोरी प्रतिदिन बढ़ाकर देनी चाहिए।

- प्रोटीन: दीघाविध ज्वर के कारण रोगी के सरल व आसानी से पचने वाले काबाहाइड्रेट की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। रोगी को सरल व आसानी से पचने वाले काबाहाइड्रेट के स्रोत आहार में प्रयुक्त भोजन में देने चाहिए।

- वसा: दीघाविध ज्वर में रोगी भूख न लगना व वमन होना आदि से अपनी आहार तथा समस्याएं हो सकती हैं। अतः: हल्का व सुपारी भोजन ही उपयुक्त होता है।

- विटामिन: रोगी के आहार में सभी विटामिन प्रयुक्त मात्रा में शामिल करने चाहिए। प्रायः: रोगियों में विटामिन ए की कमी हो जाती है। इसलिए प्रोटीन के स्रोत जैसे अण्डा, दूध आदि रोगी को देने चाहिए। तपेदिक में विटामिन सी की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। ज्वर में मूत्र के द्वारा विटामिन
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

सी का काफी मात्रा में निष्कासन हो जाता है। अतः विटामिन सी रोगी को प्रचुर मात्रा में देना चाहिए। तपेदिक में फेफड़ों के साथ-साथ बैक्टीरिया हड़डियों को भी प्रभावित करता है। हड़डियों की मजबूती के लिए कैल्शियम की आवश्यकता होती है। विटामिन डी कैल्शियम के अवशोषण में सहायता प्रदान करता है। अतः विटामिन डी को आहार में शामिल करना चाहिए। इसके अलावा तपेदिक के ली जाने वाली एन्टीबायोटिक दवाइयों से विटामिन बी समूह के कुछ विटामिनों पर दुष्प्रभाव पड़ता है, मुख्यतः विटामिन बी 6 में। इस कारण विटामिन बी समूह आहार में पर्याप्त होने चाहिए।

• खनीज लवण: इस रोग की स्थिति में स्थायीता उन्नत में पाव हो जाता है जिस कारण शरीर में कैल्शियम का मात्रा बढ़ जाती है। अतः रोगी को प्रतिदिन 1-1.5 लीटर दूध आवश्यक है। इसके अलावा यदि रोगी को रक्तस्राव की समस्या है तो लीह लवण की भी विशेष आवश्यकता होती है।

तपेदिक के रोगी हेतु आहार में सम्मिलित खाद्य पदार्थ

• दूध व दूध से बने पदार्थ
• अंकु रित अनाज, सोयाबीन, दालें, मूंगफली
• अण्डा, मांस, मछली
• फल, हरी व पीली सब्जियाँ

तपेदिक के रोगी हेतु आहार में वर्जित खाद्य पदार्थ

• तला-भुग भोज्य पदार्थ
• मिर्च मसाले युक्त आहार
• कड़े / जटिल रेसोयुक्त खाद्य पदार्थ
## तपेदिक अथवा क्षय रोग से पीड़ित व्यक्ति के लिए आहार तालिका

<table>
<thead>
<tr>
<th>आहार का समय</th>
<th>भोजन सूची</th>
<th>मात्रा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रातः काल (6.30 बजे)</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह का नाशा (9-10 बजे)</td>
<td>नमकीन दलिया, या डबलरोटी-मस्कन के साथ</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>अण्डा (उबला हुआ)</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दूध</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>केला / फल</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>सुबह 11.30 बजे</td>
<td>फलों का रस</td>
<td>1 गिलास</td>
</tr>
<tr>
<td>दोपहर 1:00 बजे</td>
<td>गोली</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दाल (अरहर-मल्टा)</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>सब्जी (आलू-टमाटर)</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>चावल</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>सलाद / रायता</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
<tr>
<td>शाम 4:00 बजे</td>
<td>चाय</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>बिस्किट / सूजी का रस</td>
<td>2-4</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि भोजन से पहले 7:00 बजे</td>
<td>सब्जियों का सूप</td>
<td>1 कप</td>
</tr>
<tr>
<td>रात्रि 9:00 बजे भोजन</td>
<td>रोटी</td>
<td>2-3</td>
</tr>
</tbody>
</table>
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

<table>
<thead>
<tr>
<th>लौंग-आलू सब्जी</th>
<th>1 कटोरी</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>दही या रायता</td>
<td>1 कटोरी</td>
</tr>
</tbody>
</table>

सोते समय 10:00 बजे

दूध | 1 गिलास

नोट: यदि रोगी को तीव्र ज्वर हो तो नरम आहार जैसे खिचड़ी, उबले आलू, दूध, पनीर, फलों का रस इत्यादि का सेवन करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रक्त स्थान भरिए।
   a. सामान्यतः एक स्वस्थ व्यक्ति के शरीर का तापमान ........................................... होता है।
   b. शरीर के 1⁰ F तापक्रम में वृः द च आधार व्यापक दर (बी0एम0आर0) में ................................................ की वृः द च हो जाती है जिससे ऊर्जा की मांग बढ़ जाती है।
   c. टायफायड में आंतों में छिद्र हो जाते हैं और उससे रक्त निकलने लगता है, इसे ................................. कहते हैं।
   d. क्षय रोग एक संक्रमण है जो ............................................. नामक बैक्टीरिया द्वारा होता है।
   e. क्षय रोगी को अधिक ........................................... वाले खाद्य पदार्थ प्राप्त करने चाहिए।

इकाई के दूसरे भाग में हम कैंसर पर चर्चा करेंगे।

14.8 कैंसर का अर्थ

हमारा शरीर कई प्रकार की कोशिकाओं से बना होता है। जैसे-जैसे शरीर को इनकी आवश्यकता होती है जैसे-जैसे ये कोशिकाएं नियन्त्रित रूप से विभाजित और बढ़ती रहती हैं। परंतु कई बार ऐसा होता है कि शरीर को इन कोशिकाओं की आवश्यकता नहीं होती है और इनकी बढ़ना जाती रहता है। कोशिकाओं का यह असामान्य विकास कैंसर कहलाता है (जो आमतौर पर एक असामान्य कोशिका से उत्पन्न होता है) जिसमें कोशिकाएं सामान्य नियंत्रण खो देती हैं। इस प्रकार कोशिकाओं
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

का एक समूह लगातार अनियत्रित वृद्धि करता है, आसपास के ऊतकों पर आक्रमण करता है जो शरीर के दूसरे हिस्सों में पहुंचता है और लसिका प्रणाली या रक्त के माध्यम से शरीर के अन्य भागों में फैल जाता है। कैंसर कोशिका शरीर के किसी ऊतक में विकसित हो सकती है। जैसे-जैसे कैंसर कोशिकाएं बढ़ती हैं और कई गुण होती हैं तो वे कैंसर कोशिकाओं के एक समूह का रूप लेती हैं जो ट्यूमर कहलाता है। यह ट्यूमर आसपास के ऊतकों पर हमला करता है और उन्हें अस्थायी नष्ट करता है। ट्यूमर कैंसर सम्बन्धी या कैंसर रहित हो सकते हैं। कैंसर सम्बन्धी कोशिका शरीर के एक हिस्से से शुरु होकर पूरे शरीर (Metastasis) में फैल सकती हैं।

14.9 कैंसर की शुरुआत

कोशिका के आनुवांशिक पदार्थ में परिवर्तन होने की शुरुआत कैंसर होता है। कोशिका के आनुवांशिक पदार्थ में होने वाले परिवर्तन स्वयं हो सकते हैं या कुछ तत्वों के द्वारा उत्पन्न हो सकते हैं। ये तत्त्व हैं रसायन, तंबाकू, विभाजन, विकिरण और सूर्य का प्रकाश परंतु यह जस्ती नहीं है कि सभी कोशिकाएं इस तत्वों से समान रूप से प्रभावित होती हैं। कोशिकाओं में एक आनुवांशिक दोष इन तत्वों के प्रति अतिसंवेदनशील बना होता है। यहाँ तक कि लंबे समय से हो रही शारीरिक जलन भी इन तत्वों को एक कोशिका के प्रति अतिसंवेदनशील बना सकती है। कैंसर के विकास में बढ़ावा देने के लिए कुछ तत्व कारण बनते हैं। ये तत्त्व पर्यावरण में मौजूद कुछ पदार्थ या दवाओं भी हो सकती हैं जैसे हामी, तंबाकू, विभाजन और सूर्य का प्रकाश। कैंसर के विकास में बढ़ावा देने के लिए कुछ तत्व कारण बनते हैं। ये तत्त्व पर्यावरण में मौजूद कुछ पदार्थ या दवाओं भी हो सकती हैं जैसे हामी, तंबाकू, विभाजन और सूर्य का प्रकाश।

कैंसर के विकास में बढ़ावा देने के लिए कुछ तत्व कारण बनते हैं। ये तत्त्व पर्यावरण में मौजूद कुछ पदार्थ या दवाओं भी हो सकती हैं जैसे हामी, तंबाकू, विभाजन और सूर्य का प्रकाश। कैंसर के विकास में बढ़ावा देने के लिए कुछ तत्व कारण बनते हैं। ये तत्त्व पर्यावरण में मौजूद कुछ पदार्थ या दवाओं भी हो सकती हैं जैसे हामी, तंबाकू, विभाजन और सूर्य का प्रकाश।

उदाहरण के लिए आयिनत विकिरण (Ionising radiation) जो अधिकतर एक्स-रे (X-ray) में प्रयोग होती है। विभिन्न प्रकार के कैंसर, विशेषकर सारकोमा, ल्यूकेमिया, थायरोयड कैंसर और स्तन कैंसर का कारण बन सकती है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

287
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

कैंसर कैसे फैलता है: कैंसर आसपास के ऊतकों में बढ़ सकता है या विभिन्न अंगों में फैल सकता है, चाहे वे दूर हों या पास। कैंसर लसीका प्रणाली (Lymphatic system) के माध्यम से भी फैल सकता है। इस प्रकार का फैलाव कार्यात्मक मा प्रणाली भी होता है। उदाहरण के लिए स्तन कैंसर आमतौर पर लसीका पर्व (Lymph nodes) में फैलता है और धीरे-धीरे यह शरीर के दूसरे हिस्सों में फैल जाता है। कैंसर रक्त प्रवाह के माध्यम से भी फैल सकता है।

14.10 कैंसर के प्रकार

कैंसर कई प्रकार के होते हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित प्रकार के हैं:

- **मुँह का कैंसर (Oral Cancer):** यह मुँह के किसी भी हिस्से में दिखाई देने के सकता है। मुंह के कैंसर के जोखिम कारकों में तंबाकू का उपयोग, शराब का भारी सेवन और मानव पेपिलोमावायरस (एचपीवी) संक्रमण के आने के कारण शामिल हैं। इसके लक्षण कई हो सकते हैं जैसे गले में एक दर्दनाक चाव जो ठीक नहीं होता है, मुँह के अंदर एक गांठ या सफेद या लाल रंग का धब्बा हो सकता है। इसके उपचार में सर्जरी और विकरण चिकित्सा शामिल हैं। कुछ मामलों में कीमोथेरपी की आवश्यकता हो सकती है।

- **स्तन का कैंसर (Breast Cancer):** स्तन कैंसर महिलाओं में होता है। स्तन कैंसर के लक्षणों में स्तन में एक गांठ, निप्पल से खून का रिसाव और निप्पल या स्तन के आकार या बनावट में परिवर्तन शामिल हैं। इसका उपचार कैंसर के चरण पर निर्भर करता है जिसमें कीमोथेरपी, विकरण, हार्मोन थेरपी और सर्जरी शामिल हो सकते हैं।

- **गर्भाशाय ग्रीवा का कैंसर (Cervical Cancer):** सर्वाइकल कैंसर गर्भाशाय ग्रीवा से उत्पन्न होने वाला कैंसर है। यह कोशिकाओं की असामान्य वृद्धि के कारण होता है जो शरीर के अन्य भागों में फैलने की क्षमता रखते हैं। यह गर्भाशाय के सबसे नीचे भाग का एक घातक टूमर है जिसे ऐप स्मीयर स्क्रीनिंग और एक एचपीवी वैक्सीन द्वारा रोका जा सकता है। इसके लक्षणों में माहवरी काल के बीच में और संभोग के बाद रक्तसाव होना शामिल है। बदबूदर सफेद रिसाव
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

और पीट दर्द या पेट के निचले हिस्से में दर्द भी हो सकता है। कुछ मामलों में कोई भी लक्षण नहीं हो सकता है। इसके उपचार में सर्जरी, विकिरण और कीमोथेरपी शामिल हैं।

- पौष्प ग्रंथि का कैंसर (Prostate Cancer): प्रोस्टेट कैंसर पौष्प ग्रंथि में होने वाला कैंसर है। यह ग्रंथि पुरुषों में एक छोटे अर्करोट के आकार की ग्रंथि होती है जो वीर्य का उत्पादन करती है जो शुक्राणु का पोषण और परिवहन करता है। यह कैंसर पुरुषों में होने वाले सबसे आम प्रकार के कैंसर में से एक है। इसके लक्षणों में सर्वाधिक आम लक्षण है, पेशाब करने में कठिनाई होना, परस्तु कभी-कभी कोई लक्षण नहीं होते हैं। कुछ प्रकार के प्रोस्टेट कैंसर धीरे-धीरे बढ़ते हैं। इस प्रकार के मामलों में कैंसर की वृद्धि की निगरानी की जाती है। कुछ अन्य प्रकार तेजी से बढ़ते हैं और इन्हें विकिरण, सर्जरी, हामौन थेरपी, कीमोथेरपी या अन्य उपचार की आवश्यकता होती है।

- लिम्फोमा (Lymphoma): लिम्फोमा वह कैंसर है जो प्रतिरक्षा प्रणाली के संक्रमण से लड़ने वाली कोशिकाओं में शुरु होता है, जिसे लिम्फोसाइट्स कहा जाता है। ये कोशिकाएँ लिम्फ नोड्स, प्लेटीला, थाइमस, अस्थ मज्जा और शरीर के अन्य भागों में होती हैं। जब लिम्फोमा होता है, तो लिम्फोसाइट्स बदल जाते हैं और नियंत्रण से बाहर हो जाते हैं। इसके लक्षणों में प्रमुख हैं: अभिवर्धित लिम्फ नोड्स, थकान और वजन का घटना। इसके उपचार में कीमोथेरपी, औषधियों का प्रयोग, विकिरण चिकित्सा और स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण शामिल हैं।

- लक्ड कैंसर (Leukemia): ल्यूकेमिया रक्त या अस्थ मज्जा का एक कैंसर है। अस्थ मज्जा रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करता है। रक्त कोशिका उत्पादन में समस्या के कारण ल्यूकेमिया विकसित हो सकता है। यह आमतौर पर ल्यूकेमिया या सफेद रक्त कोशिकाओं को प्रभावित करता है। इसके लक्षण में थकान, वजन कम होना, बार-बार संक्रमण और आसान रक्तसाभ या चोट लगना शामिल हैं। इसके उपचार में कीमोथेरपी, विकिरण चिकित्सा और स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण शामिल हैं।
• फेफड़ों का कैंसर (Lung Cancer): यह कैंसर फेफड़ों में शुरू होता है। फेफड़ों का कैंसर एक ऐसी स्थिति है जो कोशिकाओं को फेफड़ों में अनियमित रूप से विभाजित करने का कारण बनती है। यह द्रूपमूर के विकास का कारण बनता है जो किसी व्यक्ति की सांस लेने की क्षमता को कम करता है। फेफड़ों के कैंसर के कारणों में धूपपान, धुएं और कुछ विषाल पदार्थों से सम्पर्क और पारिवारिक इतिहास मिलते हैं। इसके लक्षणों में खांसी (अक्सर दक्षिण तथा) सीने में दर्द, घरघराहट और वजन का कम होना होता है। यह ट्यूमर के कारण, इससे धूंधलापन, संतुलन की गंही, एक चिकित्सकों से बाहर हो जाती है। इसके उपचार में सजबरी, कीमोथेरपी, विक्रिय चिकित्सा, लक्षण दवा चिकित्सा और इम्युनोथेरपी इसमें शामिल हैं।

• हड्डियों का कैंसर (Bone Cancer): हड्डियों अथवा अंग के कैंसर तब होता है जब हड्डियों में असामान्य कोशिकाएं निवंदन से बाहर हो जाती हैं। यह हड्डी के सामान्य ऊतकों को नष्ट कर देता है। अस्थि कैंसर दुर्लभ होता है। अधिकांश अस्थि द्रूपमूर सीमा (benign) होते हैं, जिसका अर्थ है कि वे कैंसर नहीं हैं और ये शरीर के अन्य क्षेत्रों में नहीं फैलते हैं। एक अस्थि द्रूपमूर एक दर्द रहित इतने मान सकता है। अस्थि कैंसर के कुछ रोगियों को हल्का दर्द होता है। इसके उपचार में सर्जरी और चिकित्सा शामिल हैं। कुछ गैर-कैंसर वाले द्रूपमूर उपचार के बिना ठीक हो जाते हैं।

• मस्तिष्क का कैंसर (Brain Cancer): इस प्रकार का कैंसर मस्तिष्क में शुरू हो सकता है, या शरीर में किसी अन्य भाग का कैंसर मस्तिष्क में फैल सकता है। इसके लक्षणों में तीन एवं गम्भीर सिरदर्द, दृष्टि में धुंधलापन, संतुलन की गंही, भ्रम और दीर्घ शामिल हैं। इसके उपचार में सर्जरी, चिकित्सा और कीमोथेरपी शामिल हैं।

• गुदं का कैंसर (Kidney Cancer): इस प्रकार के कैंसर में एक या दोनों गुदें में स्वस्थ कोशिकाओं की अनियमित वृद्धि के कारण एक गांठ/ट्यूमर का निर्माण होता है। वृद्धि कोशिका कार्सिनोमा (Renal cell carcinoma) ज्यादातर में गुदें के कैंसर का सबसे आम प्रकार है। धूपपान, मोटापा, दर्द की डबल और दीर्घ कालीन सेवन, पारिवारिक इतिहास, उच्च रक्तचाप, लिंफोमा इत्यादि के प्रमुख कारण हैं। गुदू में रक्त, पेट में गांठ, भूख में कमी, बिना किसी
कारण के बजन कम होना, अत्यधिक थकान, एनीमिया, टखनों या पैरों में सूजन गुर्दें के कैंसर के प्रमुख लक्षण हैं। गुर्दें के कैंसर का उपचार अक्सर सर्जरी, लक्षित थेरेपी, इम्यूनोथेरेपी या इन उपचारों के संयोजन से किया जाता है। विकिरण चिकित्सा और कैंसर थेरेपी अन्य-कभी उपयोग की जाती है।

14.11 कैंसर के चरण
कैंसर के ऊतकों को रक्त के गठन वाले ऊतकों (ल्यूकैमिया और लिम्फोमास) और कोशिकाओं का ठोस इत्यादि (Solid Tumor) में विभाजित किया जा सकता है, जिन्हें अक्सर कैंसर कहा जाता है। कैंसर कासिनियोमा या सारकोमा हो सकता है। ल्यूकैमिया और लिम्फोमा व्लड कैंसर होते हैं। ल्यूकैमिया खुन से बनने वाली कोशिकाओं से उत्पन्न होता है जिसमें अम्ल मज्जा (Bone marrow) और रक्तप्रवाह में अधिक मात्रा वाली अपरिपक्व रक्त कोशिकाएं सामान्य रक्त कोशिकाओं के स्थान पर विस्थापित हो जाती हैं। लिम्फोमा में कैंसर की कोशिका लिम्फ नोड्स का विस्तार करती है। लिम्फोमा अक्सर लिम्फ नोड्स से प्रारम्भ होता है लेकिन यह बगल, जननांग, पेट, छाती या आंत आदि शारीरिक अंगों में भी पाया जा सकता है।

कासिनियोमा कैंसर का सबसे आम प्रकार है जिसमें कैंसर कोशिकाएं शरीर के आंतरिक और बाहरी भाग जैसे फेफड़े, स्तन और पेट को प्रभावित करती हैं। यह त्वचा के उपकला ऊतक (epithelial tissues) से प्रारम्भ होता है। कासिनियोमा के उदाहरण त्वचा, फेफड़े, बृहदांक, पेट, स्तन, प्रोस्टेट और थायरोइड ग्रंथि के कैंसर हैं। आमतौर पर कासिनियोमा युवाओं की तुलना में अधिक आयु वाले व्यक्तियों में पाया जाता है।

सारकोमा एक दूसरे से जुड़े ऊतकों में हो जाने वाले ट्यूमर को कहते हैं। इन ऊतकों में वसा रक्त वाहिकाएं, तंत्रिकाएं, हाइड्रॉन, मांसपेशियाँ, उपस्थित (Cartilage) इत्यादि शामिल हैं। सारकोमा के उदाहरण हैं, लियोमो सारकोमा (Leiomyo Sarcoma) और ओस्टीयो सारकोमा (Osteo
14.12 कैंसर के लक्षण

जब कैंसर की कोशिकाएं बहुत छोटे रूप में होती हैं तो कैंसर के लक्षण दिखाई नहीं देते हैं। परन्तु जैसे-जैसे कैंसर बढ़ता है, इसकी उपस्थिति आस्पद के उत्तरों को प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त, कुछ कैंसर की वजह से शरीर से कुछ पदार्थों का साव होने लगता है या कुछ कैंसर प्रतिक्षा प्रतिक्रियाओं को प्रभावित करते हैं जिससे शरीर के बाहर भाग जो कैंसर की उपस्थिति बताने हिस्सों से दूर हैं उनमें भी कैंसर के लक्षण पैदा हो जाते हैं। कैंसर के कुछ प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार हैं:

1. दर्द: कुछ कैंसर पूर्व में दर्द रहता होता है, लेकिन कुछ कैंसर का प्रारंभिक लक्षण दर्द ही होता है।
2. रक्त खाव: कैंसर में रक्तसाइंस हो सकता है क्योंकि इसकी रक्त वाहिकाएं नाजुक होती हैं। जैसे-जैसे कैंसर बढ़ता है और आस्पद के उत्तरों पर हमला करता है तो यह एक नजदीकी रक्त वाहिका में बढ़ सकता है, जिससे रक्तसाइंस हो सकता है। प्रारंभिक चरण के बृहदान्त्र कैंसर में अस्तर रक्तसाइंस होता है। जिस स्थान या शरीर के भाग में कैंसर है वही स्थान रक्तसाइंस को निर्धारित करती है। पाचन तंत्र के साथ झुके कैंसर में मल में रक्तसाइंस हो सकता है। मूत्र में के साथ झुके कैंसर में मूत्र में रक्तसाइंस हो सकता है। कैंसर जो कैंसर से पीड़ित योग्य चार थान के बृहदान्त्र कैंसर में अस्तर रक्तसाइंस होता है।
3. रक्त के शक्तियों का बजना: कुछ कैंसर विशिष्ट पदार्थों का उत्पादन करते हैं जो शरीर में रक्त के जमने का कारण बनते हैं, मुख्यतः पेटों की नसों में। पैर की नसों में रक्त के शक्त में होते हैं जो पूरे शरीर में फैल जाते हैं। अन्य योग्य, फेफड़े और अन्य सॉलिड ट्रूमर वाले योग्यों में और मस्तिष्क ट्रूमर में रक्त का थक्का जमना आम होता है।
4. बजन का घटना: कैंसर से पीड़ित योग्यों को बजन घटने और थकान का अनुभव होने लगता है। कुछ योग्यों में भूख की कमी या खाना निग्नलने में कठिनाई हो सकती है। यदि
पोषण

एनिमया (रक्ततल्प) विकसित हो जाता है, तो पीड़ित व्यक्ति थोड़ी सी गतिविधि से ही थकान या सांस की कमी महसूस करने लगता है।

5. लिम्फ नोड्स में सूजन: जैसे ही केंसर शरीर में फैलने लगता है, यह सबसे पहले पास की लिम्फ नोड्स में फैलता है जिससे सूजन हो जाती है। यह सूजन सख्त या रबड़ जैसी लचीली महसूस हो सकती है।

6. न्यूरोलोजिक और मांसपेशिय लक्षण: केंसर तत्वता या रोगी की हड्डी को संकुचित कर सकता है। यह न्यूरोलोजिक और मांसपेशिय लक्षणों में से कोई भी हो सकता है जैसे दर्द, कमजोरी या अनुभूति में परिवर्तन (झनझनाहट, उत्तेजना) इत्यादि। जब मस्तिष्क में केंसर बढ़ता है तो इसमें श्रम होना, चक्रवात आना, सिरदर्द होना, दृष्टि में परिवर्तन और दौरे पड़ना इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं।

7. श्वसन लक्षण: केंसर फेफड़ों में वायुमान जैसी संरचनाओं को संकुचित या अवश्य नहीं कर सकता है जिससे श्वास की कमी, खाँसी या निमोनिया हो सकता है।

14.13 केंसर के कारण

केंसर के कुछ कारणों के बारे में आप संचेतिसन में जान ही चुके हैं। केंसर रोगों का एक व्यापक समूह है और इसके कई कारण होते हैं। कई आनुवांशिक और पर्यावरणीय कारक केंसर के विकास के जोखिम को बढ़ाते हैं। प्रयोक्त केंसर भिन्न प्रकार का होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization) के अनुसार केंसर के सामान्य कारक निम्नलिखित हैं:

- आनुवांशिक (Genetic Factors)
- आयु (Age)
- पर्यावरण (Environment)
- खराब आहार (False Diet)
- दवाएं और चिकित्सा उपचार (Medicines and Medical Treatment)
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

- संक्रमण (Infections)
- सूजन / जलन (Inflammation and Odema)
- रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होना (Failure of Immune System)

### 14.14 कैंसर से बचाव

निम्नलिखित उपायों से कैंसर से बचाव किया जा सकता है:

- धूपान बंद करना: इससे फेफड़ों का कैंसर ही नहीं परन्तु अन्य प्रकार के कैंसर से भी बचा जा सकता है।
- सूजन की किरणों से बचाव: सूजन में हानिकारक पराबंधनी किरणें होती हैं जो त्वचा के कैंसर के खतरे को बढ़ा सकती हैं।
- स्वस्थ आहार का सेवन: फलों और सब्जियों से समृद्ध आहार का चयन करें। साबुत अनाज और चम्की रहित प्रोटीन का चयन करें।
- व्यायाम: नियमित व्यायाम करने से कैंसर होने की सम्भावना को कम किया जा सकता है।
- शराब का कम या निषेध सेवन: शराब का सेवन कैंसर के जोखिम को बढ़ाता है।
- स्वस्थ वजन: स्वस्थ वजन बनाए रखना चाहिए। अधिक वजन या मोटापे से कैंसर का खतरा बढ़ सकता है।

### 14.15 कैंसर में आहार

कैंसर एक ऐसा रोग है जिसमें रोगी के सामान्य स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है। इलाज पूर्ण रूप से असरदार हो इसके लिए आवश्यक है कि आहार में कुछ सावधानियाँ अवश्य रखी जाएं। कैंसर के रोगियों का आहार उनके स्वास्थ्य और रोग की आवश्यकता के अनुसार होना चाहिए क्योंकि इस रोग में आहार की मात्रा और आवश्यक पोषक पदार्थों जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा एवं खनिज लवण इत्यादि में कमी आ जाती है। कैंसर के इलाज के दौरान सही भोजन खाने से निम्नलिखित में मदद मिल सकती है:
पीड़ित आहार का अर्थ है कि रोगी वह सभी खाद्य पदार्थ खाएं जिनमें कैंसर के विरुद्ध लड़ने और सेहत बनाए रखने के लिए पीड़ित तत्त्व मौजूद हों। इन पदार्थों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, जल, विटामिन और खनिज तवण शामिल हैं।

प्रोटीन: कैंसर ग्रस्त लोगों को सामान्य व्यक्तियों से अधिक एवं उच्च कोटि का प्रोटीन आहार में शामिल करना चाहिए। इसमें वसा रहित मांस, मछली, टकरी, दूध के उत्पाद, गिरी, सूखी फलियाँ, मटर, दाल और सोयाबीन के पदार्थ शामिल होने चाहिए।

कार्बोहाइड्रेट और वसा: इनसे शरीर को आवश्यक कैलोरी की अधिकतम मात्रा मिलती है। प्रत्येक व्यक्ति एवं रोगी की कैलोरी की आवश्यकता अलग-अलग होती है। इनके स्रोतों में फल, सब्जियाँ, अनाज, दालें, पी, मस्कन इत्यादि शामिल है।

विटामिन और खनिज तवण: ये पीड़ित तत्त्व कैंसर के रोगी के उपचार के लिए आवश्यक हैं।

फल, दूध, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, अन्य सब्जियाँ इसके मुख्य स्रोत हैं। चिकित्सक परामर्श के अनुसार ही रोगी को इनके सेवन में अधिकता करनी चाहिए।

जल: जल एवं अन्य तरल पदार्थ रोगी के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। जिलेटिन, शरबत, झूस, सूप इत्यादि इसके प्रमुख स्रोत हैं जिन्हें कैंसर के रोगी ने अपने आहार में सम्मिलित करना चाहिए।

कैंसर के रोगी का आहार उसकी शारीरिक अवस्था एवं रोग के अनुसार होना चाहिए। चिकित्सक परामर्श के अनुसार ही पीड़ित तत्त्वों में अधिकता या कमी करनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 2

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 295
### प्रस्तुत इकाई में आपने ज्वर एवं कैंसर रोगों के बारे में अध्ययन किया एवं इन रोगों में आहार नियोजन की जानकारी ली। ज्वर एक आम समस्या है। हमारे शरीर पर बदलते मौसम के साथ विभिन्न संक्रमक कीटाणु प्रतिदिन हमलाते हैं। परन्तु स्वस्थ रहने पर रोग प्रतिरोधक शक्ति इन हमलों से हमारे शरीर की रक्षा करती है और हम स्वस्थ बने रहते हैं। कुपोषण, आस्थाग्रस्तता तथा गर्मी संक्रमण का प्रभाव दिखाया देता है। संक्रमण होते ही शरीर में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं। साथ ही ज्वर शरीर को दिन प्रतिदिन और भी कमजोर बना देता है। अतः उचित उपचार, दैनिक आहार तथा आहारीय उपचार भी रोगी को न केवल रोग से लड़ने में अपतित राहत देता है।

14.16 सारांश

कोशिकाओं का असामान्य विकास कैंसर कहलाता है (जो आमतौर पर एक असामान्य कोशिका से उत्पन्न होता है) जिसमें कोशिकाएँ सामान्य नियंत्रण खो देती हैं। जैसे-जैसे कैंसर कोशिकाएं बढ़ती हैं और कई गुणा होती हैं तो वे कैंसर कोशिकाओं के एक समूह का रूप ले लेती हैं जो दूरूर कहलाता है। दूरूर कैंसर समवेती या कैंसर रहित हो सकते हैं। कैंसर समवेती कोशिका को एक हिस्से से शुरू होकर पूरे शरीर (Metastasis) में फैल सकती है। कैंसर कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे मुंह का कैंसर, गर्भाशय का कैंसर, हड्डियों का कैंसर, मस्तिष्क कैंसर, फे फड़ी का कैंसर आदि। कैंसर के कई लक्षण हो सकते हैं जैसे दर्द का अनुभव, रक्तसार, वजन का कम होना, भूख न लगना, सौंदर्य हेर न होना और परेशानी होना आदि। कैंसर के कारकों में आनंदित कारक, दीर्घकालीन उपचार, दवायों का
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

प्रयोग, विषाक्त पदार्थों से दीर्घकालिन सम्पर्क, धूप/पानी आदि सम्मिलित हैं। केसर के रोगी को चिकित्सक के परामर्श अनुसार पौष्टिक आहार लेना चाहिए।

14.17 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. 98°F/37°C
e. Peyer’s Patches
d. माइक्रोबैक्टीरियम ट्र्यूबूरक्टोसिस
c. ऊर्जा

अभ्यास प्रश्न 2

1. सही मिलान कीजिए।

<table>
<thead>
<tr>
<th>अ</th>
<th>ब</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>a. स्तन कैंसर</td>
<td>i. लसीका पर्व</td>
</tr>
<tr>
<td>b. तमाबाँतू</td>
<td>ii. मूंह का कैंसर</td>
</tr>
<tr>
<td>c. पैप स्तीवर स्फीनिंग</td>
<td>iii. गभारीय प्रीवा का कैंसर</td>
</tr>
<tr>
<td>d. अस्थिक कैंसर</td>
<td>iv. सौम्य (benign) ट्र्यूमर</td>
</tr>
<tr>
<td>e. कैंसर कारक</td>
<td>v. परामेंगनी किरण</td>
</tr>
</tbody>
</table>

14.18 निबंधात्मक प्रश्न

1. टायफाइड के आहारीय उपचार की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

2. तपेदिक के कारण व लक्षण विस्तार पूर्वक बताइए।

3. ज्वर की अवस्था में दिए जाने वाले तथा वर्जित भोज्य पदार्थों की सूची बनाइए। ज्वर के रोगी के लिए आदर्श आहार तालिका बनाइए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 297
4. जबर में पीढ़क तत्वों की आवश्यकता क्यों होती है?

5. कैंसर के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें। कैंसर के लक्षण एवं जटिलताओं के विषय में बताएं।

6. कैंसर के रोगियों का आहार किस प्रकार का होना चाहिए? एक कैंसर के रोगी के लिए आहार तालिका बनाते समय आप किन बातों का ध्यान रखेंगे?
इकाई 15: अन्य अवस्थाओं में आहार

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 शाल्य चिकित्साएं, जलना तथा क्षति अवस्थाएं
   15.3.1 शाल्य चिकित्सा
   15.3.2 क्षति अवस्थाओं में आहार नियोजन
   15.3.3 जलने में आहार चिकित्सा
15.4 खाद्य एल्जैई
15.5 सारांश
15.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
15.7 निबंधात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना
अभी तक आपने जीवन की विभिन्न अवस्थाओं एवं विभिन्न रोग स्थितियों में आहार एवं पोषण के विषय में अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में हम उन विशेष अवस्थाओं में पोषण एवं आहार का अध्ययन करेंगे जिन्हें व्यक्ति सामान्य रूप से अनुभव नहीं करता। शाल्य चिकित्सा किसी रोग की स्थिति या किसी अकस्मात् स्थिति में की जाती है। यह स्थिति में रोगी के आहार के साथ उसे खिलाने की विधियों का चयन भी विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यह उपरोक्त के अधिक गर्मी के संपर्क में आने से लचीला जल सकता है। जलने की स्थिति में आहार में एंटीऑक्सीडेंट तथा प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि करनी चाहिए। इस इकाई में खाद्य एल्जैई के बारे में भी जानें और इसके उपचार पर चर्चा करेंगे।

15.2 उद्देश्य
प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;
- शाल्य चिकित्सा पूर्व एवं पश्चात पोषण देखभाल के बारे में जानेंगे;
- क्षति अवस्थाओं में आहार नियोजन की जानकारी प्राप्त करेंगे;
- जलने के वर्गीकरण तथा पोषण प्रबंध की चर्चा करेंगे; तथा
15.3 शल्य चिकित्साएं, जलना तथा क्षति अवस्थाएं

15.3.1 शल्य चिकित्सा (Surgical conditions)
हालांकि शल्य चिकित्सा की जरूरतों का प्राथमिक बीमारी तथा ऑपरेशन की प्रकृति से सीधा संबंध है परंतु कुपोषण इन जरूरतों की गंभीरता को बढ़ा सकता है। शल्य चिकित्सा से पूर्व पोषण, विशेषकर मध्यम तथा गंभीर रूप से कुपोषित रोगियों के लिए लाभकारी है।

शल्य चिकित्सा पूर्व पोषण संबंधी देखभाल
किसी भी रोगी में शल्य चिकित्सा (operation) के पश्चात स्वास्थ्य स्तर में सुधार तथा पुनः सामान्य जीवन जीने की संभावना उसकी शल्य चिकित्सा के पूर्व तथा पश्चात की पोषण संबंधी देखभाल पर निर्भर करती है। जब शल्य चिकित्सा आक्रामक परिस्थितियों में की जाती है तब शल्य चिकित्सा पूर्व पोषक त्वचाओं के पर्याप्त भंडारण का समय नहीं मिलता परंतु यदि यह योजनानुसार जी रही हो उस स्थिति में रोगी का उपयुक्त स्वास्थ्य सुनिश्चित करने हेतु पर्याप्त उपाय लिए जा सकते हैं। शल्य चिकित्सा पूर्व आहार इस प्रकार होना चाहिए जो इस दौरान तथा इसके तुरंत बाद कुछ समय तक शरीर में पोषक त्वचाओं का पर्याप्त भंडारण कर सके क्योंकि रोगी शल्य चिकित्सा के पश्चात कुछ समय तक मूंह के माध्यम से भोजन लेने में असमर्थ रहता है। यह पोषक त्वचाओं का भंडारण मुख्य रूप से उज्ज्वल, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज लवणों का होना चाहिए। शल्य चिकित्सा के लिए तैयार रोगी का शारीरिक भार अधिक या कम नहीं होना चाहिए, यकृत में ग्लाइकोजन का पर्याप्त भंडारण होना चाहिए, शरीर में सकारात्मक नाइट्रोजन संतुलन होना चाहिए तथा किसी भी विटामिन या खनिज लवण की कमी नहीं होनी चाहिए। अगर रक्तचालक है तो उस सुधार लेना चाहिए तथा मधुमेह हो तो नियंत्रित करना आवश्यक है।

आमतौर पर शल्य चिकित्सा से आठ घंटों पूर्व से ही रोगी को मूंह द्वारा कुछ न खाने की सलाह दी जाती है। आठ घंटे के अंत तक पेट पूरी तरह काट दी जाती है तथा यह सुनिश्चित करता है कि जब रोगी को ऐनैस्थिया (बेहोश करने की दवा) दी जाए तब भोजन वमन के रूप में बाहर न आए। शल्य चिकित्सा के समय पेट में मौजूद किसी भी प्रकार का खाद्य पदार्थ इसके बाद गैस्ट्रिक प्रतिवेदन अथवा विस्तार अथवा शल्य प्रक्रिया में हस्तक्षेप की संभावनाएं बढ़ा सकता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

शाल्य चिकित्सा पद्धार् पोषण संबंधी देखभाल

इस अवधि के दौरान उपचार में मदद करने तथा शाल्य चिकित्सा के प्रभाव से रोगी के जल्दी तथा पूरी तरह ठीक होने के लिए पोषण अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस अवधि में रोगी के पोषण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है क्योंकि शाल्य चिकित्सा के दौरान शरीर से हानि काफी बढ़ जाती है। साथ में शाल्य चिकित्सा के बाद भोजन के सेवन में कमी हो जाती है या कभी-कभी एकदम बंद हो जाती है। सभी पोषक तत्वों के जरूरतों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। उत्कर्ष को ज्यादा मात्रा में कार्बोहाइड्रेट्स की जरूरत होती है ताकि प्रोटीन का उपयोग उत्कर्ष के निर्माण हेतु हो सके तथा ग्लाइकोजन का मंडार खत्म होने पर व्यक्ति को नुकसान न हो पाए।

आहार में प्रोटीन की मांग ज्यादा होती है ताकि वह उत्कर्ष का निर्माण कर पाए, भूर सके, सूखन निरंत्रित हो सके विशेषकर शाल्य चिकित्सा के जगह पर, हड्डियों का पुन: निर्माण या जल्दी ठीक कर सके, संक्रमण से बच सके (प्रतिरोधक पिणु (antibodies), रक्त कोशिकाओं, हॉर्मोन तथा ए-जाइम के निर्माण द्वारा) तथा वसा का परिवर्तन सुसाइड हो सके।

शरीर में तरल पदाथों के आवश्यकताएं भी ज्यादा हो सकती हैं। शाल्य चिकित्सा के पद्धति पानी का नुकसान कई कारणों से अधिक हो सकता है जैसे रक्त का नुकसान, वमन, घावों, बुखार आदि।

विटामिन विशेषकर विटामिन अ तथा सी की जरूरत भी बढ़ जाती हैं ताकि उत्कर्ष के पुन: निर्माण से युक्त मिल सके। ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ने पर बी-कॉम्प्लेक्स विटामिन जैसे थायमिन, राइोफेलबिन और नाइसिन की जरूरत भी बढ़ जाती हैं क्योंकि यह विटामिन सह-एंजाइम कारकों की तरह भी कार्य करते हैं। विटामिन ‘के’ रक्त के थक्कों के निर्माण में मदद करता है इसलिए इस विटामिन की भी आवश्यकता बढ़ जाती है। खनिज लवण विशेषकर कैल्शियम, फॉस्फोरस, सोडियम तथा क्लोरिड की जरूरत पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है क्योंकि शरीर से भारी मात्रा में उत्कर्ष तथा पानी का नुकसान होता है।

शाल्य चिकित्सा में आहार नियोजन

कुछ शाल्य चिकित्सा के मामलों में वृद्धि जल्दी संबंधी मांग का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, उस स्थिति में अंत: शिरा (Intravenous) तरीके से खिलाने का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में हाइड्रोलाइड्रेट प्रोटीन या एमिनो ऐसिड, डेंट्रोस (dextrose) तथा वसा इमल्डाइन (fat
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

emulsion) त्रन्य रूप में परिधीय (peripheral) नसों द्वारा खिलाया जाता है। पर्याप्त पोषण प्रदान करने तथा जठरांत्र संबंधी मांग को प्रोटसाहित करने हेतु रोगी को जितनी जल्दी संभव हो सके सामान्य रूप से खाना खिलाने की कोशिश करनी चाहिए। अंतः शिरा आहार पूर्णतया सामान्य भोजन की जगह नहीं ले सकता है। इसलिए रोगी को अतिशीघ्र सामान्य आहार देने का प्रयास करना चाहिए। जब शरीर से भारी मात्रा में ऊतकों का नुकसान हो तथा जटरांत्र मांग से भोजन खिलाने में रोगी की बढ़ी हुई पोषण संबंधी आवश्यकताएं पूरी न हो पा रही हों, ऐसी स्थिति में पूर्ण पैरेंटरल पोषण (Total Parenteral Nutrition) का प्रयोग किया जाता है। इस स्थिति में पोषण तत्वों का मिश्रण अंतः शिरा मांग से शरीर की पहुंचाया जाता है। इस प्रकार की आहार व्यक्ति में भोजन तब तक खिलाया जाता है जब तक रोगी स्वयं से खाना खाने में सक्षम न हो तथा शरीर की बढ़ी हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु पर्याप्त पोषण न ले सके। जब रोगी स्वयं से खाना शुरू कर दे, उसके आहार को धीरे-धीरे तरल आहार से कोमल तथा अंत: सामान्य भोजन की ओर अग्रसर करना चाहिए।

नली द्वारा आहार देना (Tube Feeding)

इस प्रकार की आहार प्रणाली उन रोगियों में प्रयोग की जाती है जो सामान्य रूप से भोजन को चबा या निगल नहीं सकते। इस प्रकार की स्थिति कई मामलों में आ सकती है। जैसे -
• सर या गर्दन की शाल्य चिकित्सा
• ग्रासनली (Oesophagus) में स्काबाट
• जठरांत्र शाल्य चिकित्सा
• गंभीर रूप से जलना
• ऐनोरेक्सिया नर्वोसा (Anorexia Nervosa): यह एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति भोजन लेने के लिए तैयार नहीं होता जिस कारण वजन तेजी से गिर जाता है।

आमतौर पर खाने की नली को नाक द्वारा भीतर पहुंचाया जाता है। ग्रासनली में स्काबाट की स्थिति में नली को उदर की सतह द्वारा भीतर पहुंचाया जाता है, इसे गैस्ट्रोस्टोमी (gastrostomy) कहते हैं। करीब दो लीटर भोजन मिश्रण अथवा तैयार सामग्री त्रन्य के रूप में दी जाती है जिसे रोगी की आवश्यकता के अनुसार तैयार तथा प्रयोग किया जाता है। इस मिश्रण को तीन-चार घंटों के अंतराल
पर, छ: से आठ खुराक में विभाजित कर दिया जाता है, जिसमें प्रत्येक खुराक 250-350 मिली लीटर से अधिक नहीं होती। बाजार में मिलने वाले मिश्रण रोगी को देने में सरल होते हैं। इन मिश्रणों को देने से पहले पानी या दूध में मिलाया जाता है तथा नली द्वारा रोगी के शरीर में पहुँचाया जाता है।

सामान्यतया यह मिश्रण सामान्य संगठक दूध, अंडा, सब्जी, फल, फलों का रस, वसा रहित दूध का पाउडर तथा विटामिन सी होते हैं।

15.3.2 क्षति अवस्थाओं में आहार नियोजन
क्षति अवस्थाओं में शरीर की प्रतिक्रिया को आयात के रूप में वर्णित किया जा सकता है। शरीर की क्षति के कई कारक हैं जैसे घाव होना, फ्रैक्चर होना अथवा जलना आदि।

क्षति अवस्थाओं की शारीरिक प्रतिक्रियाएँ स्थानीयकृत नहीं होतीं अपितु यह प्रतिक्रियाएँ दो चरणों में हो सकती हैं-

• तीत्र चरण अंधव भार चरण
• प्रवाह चरण अंधव अनुकूल चरण

शरीर की जितनी जल्दी हो सके, होमियोस्टासिस प्राप्त करना अंधव सामान्य होना जरूरी होता है। यह प्रक्रिया जितनी तेजी से होगी शारीरिक स्थिति में अधिक भी जल्दी होगा।

तीत्र चरण में शरीर की न्यूरो-एंडोक्रीन (neuroendocrine) प्रणाली प्रभावित होती है। इस चरण का अंतराल 24 से 72 घंटों का होता है। इस चरण की कई विशेषताएँ हैं जैसे शरीर में ऑक्सीजन की क्षति कम हो जाना, यकृत के ऊजाने भंडार के प्रयोग होने की वजह से रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाना, ऊतकों में ऑक्सीजन की कमी की वजह से रक्त में पेप्टिक एसिड का बढ़ना, शरीर में कीटोन तत्वों का बनना आदि।

प्रवाह चरण का अंतराल क्षति के पश्चात एक से तीन दिन का होता है। इस चरण का अंतराल चोट की गंभीरता तथा पहले चरण में लिए गए प्रभावी उपायों पर निर्भर करता है। इस चरण की कई विशेषताएँ हैं जैसे अधिक चापाच्युत प्रक्रियाएँ, ऑक्सीजन के उपयोग में वृद्धि, यकृत ग्लूकोज उपयोग में वृद्धि, वसा के खट्टे से मुक्त वसीय अभ्यास का उपयोग, प्रोटीन का टूटना तथा मूत्र नाइट्रोजन के उपयोग में वृद्धि। प्रवाह चरण में शरीर के भार में नुकसान होता है। हदेद की गति जो तीत्र चरण में सामान्यतया भी नीचे होती है, प्रवाह चरण में बढ़ जाती है। रोगी में क्रांतित नाइट्रोजन संतुलन दिखाई देता है जिसे पोषण तथा आहार के मध्य में अनुकूल करना अति आवश्यक है।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

पोषक समर्थक योजना के लिए निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखना चाहिए:

- कुपोषण की सीमा तथा प्रकार
- चयापचय की अधिकता
- प्रोटीन तथा कैलोरी आवश्यकताएँ
- जठरांत्रीय कार्य
- भूख
- भोजन का मार्ग

विभिन्न क्षति अवस्थाएं तथा आहार नियोजन

क्षति अवस्थाएँ विभिन्न प्रकार की होती हैं, तथा विभिन्न क्षति अवस्थाओं में आहार नियोजन क्षति के प्रकार, रोगी की स्थिति तथा पोषण की आवश्यकता पर निर्भर करता है।

- घाव अथवा त्वचा का कटना।
- जलना अथवा त्वचा का अन्त्यिक गम्बूँ, रासायनिक पदाथ में अनेक के संपर्क में आना।
- हड्डियों में क्रैन्कर होना।
- शल्य क्रियाकलाप भनेके अधिक अन्त्यिक तैयार जैसी बचना किमत भरत है।
- गंभीर शारीरिक क्षति जिस कारण रोगी की जान को खतरा हो सकता है।

मध्यम प्रकार की क्षति अवस्थाओं जैसे त्वचा में गहरा कटना या घाव होना को पूरी तरह ठीक होने कुछ हफ्ते लगते हैं। गंभीर कटना और घाव का हड्डियों तक चला जाना, ऐसी स्थितियों में तत्काल आपातकालीन विकासक्रम से आवश्यकता होती है। आहार क्षति अवस्थाओं में सुधार हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्षतिग्रस्त अवस्थाओं में उपयुक्त पोषण न लेना तथा प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ लेने से शरीर आवश्यक पोषण से वंचित हो जाता है जिस कारण क्षतिग्रस्त उत्तरको का निर्माण नहीं हो पाता।

क्षतिग्रस्त अवस्थाओं में आहार
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

सभी प्रकार की गंभीर क्षति अवस्थाओं में रोगी मुंह के माध्यम से भोजन लेने में असमर्थ होता है जिस कारण रोगी को नली द्वारा भोजन देने की व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार की भोजन व्यवस्था में कृत्रिम रूप से बना हुआ भोजन तरल पदार्थ के रूप में नली द्वारा शरीर में पहुँचाया जाता है। यह आहार पोषक तत्वों का मिश्रण होता है जो शरीर की आधारभूत पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। अन्य अवस्थाओं में जब रोगी आहार लेने में समर्थ हो, उस स्थिति में क्षति अवस्था के अनुरूप ही आहार दिया जाता है। मोच, दबाव, छोटे कम गहरे घाव, सूजन, हड्डियों में फ्रैकचर कुछ सीमा तक सही भोजन प्राप्त करने से ठीक किए जा सकते हैं।

क्षतिग्रस्त अवस्थाओं में शरीर पर तनाव कम करने के लिए ऐसे खाद्य पदार्थों का चयन करना चाहिए जो सुगाच्य हो। कई खाद्य पदार्थ जैसे खड़े फल जो विटामिन सी में भरपूर होते हैं तथा विटामिन ई में समृद्ध खाद्य पदार्थों में चोट को जल्दी ठीक करने के गुण होते हैं। भरपूर मात्रा में पानी का सेवन न सिर्फ शरीर को निर्जलीकरण से बचाता है अतिक्षु सुधार की प्रक्रिया को तेज करता है। दूध का अच्छी मात्रा में सेवन भी क्षतिग्रस्त अवस्थाओं में लाभकारी है। यह सभी पोषक तत्वों का अच्छा स्वाद है तथा इसमें विटामिन डी अधिक मात्रा में पाया जाता है जो हड्डियों के घनत्व को बढ़ाकर मजबूत हड्डियों के निर्माण में मदद करता है।

15.3.3 जलने में आहार चिकित्सा
शरीर के अधिक गर्मी के संपर्क में आने से त्वचा जल सकती है। अत्यधिक गर्मी, आग, गर्म तरल पदार्थ, बिजली, संक्रामक रसायन अथवा विकिरण (radiation) द्वारा हो सकती है जो शरीर को जला सकती है।

जलने का वर्गीकरण
जलने की तत्क्षेत्र के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. पहली विभाग- इसमें शरीर का 15-20 प्रतिशत सतह क्षेत्र प्रभावित होता है। इसमें त्वचा की बाहरी पत्ति प्रभावित होती है जो दर्द तथा लालिमा का कारण बनती है।
2. दूसरी विभाग- इसमें शरीर का 20-40 प्रतिशत सतह क्षेत्र प्रभावित होता है। इसमें जलने का विस्तार त्वचा की दूरी पत्ति तक हो जाता है जिस कारण लालिमा, दर्द तथा फफोले हो सकते हैं।
नैदािनक एवं उपचारान्वयन प्रश्न

3. तृतीय डिग्री- जलने की यह स्थिति गंभीर होती है जो शरीर की 40-50 प्रतिशत सतह क्षेत्र को प्रभावित करती है। यह त्वचा की अंदरूनी तथा बाहरी दोनों सतहों को प्रभावित करती है तथा अंतर्मिहित हड़प्पाएँ तथा मांसपेशियों का भी नुकसान पहुँचा सकती है। इस स्थिति में जली हुई जगह पीली प्रतीत होती है। आमतौर पर, जलने वाले क्षेत्र में दर्द नहीं होता क्योंकि जलने से तंत्रिका अंत नष्ट हो जाते हैं।

जलने को त्वचा की मोटाई के अनुसार भी वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. आशिक- इस स्थिति में जलने पर भी त्वचा की उपकला पतल मौजूद रहती है जो जलद ही नवीनीकृत हो जाती है।

2. पूण- इस स्थिति में त्वचा की उपकला पतल पूरी तरह नष्ट हो जाती है जिस कारण सज्जनी की आवश्यकता पड़ती है।

जलने में आहार प्रबंध का प्रयोग

- शरीर की ब्लूजन तथा संचार प्रणाली को प्रबल करना जब तक त्वचा का आवोजण पूर्वकत न हो, मौलिक चयापचय दर सामान्य हो, तरलता तथा इलैक्ट्रोलाइट संतुलन तथा खून की मात्रा सामान्य हो और अंततः, पोषण स्थिति सामान्य हो।
- संक्रमण से बचाना।

अगर व्यक्ति व्यापक रूप से जलता हो तथा पहले से कुपोषित है ऐसी स्थिति में ऊर्जा की आवश्यकताएँ 30-300 प्रतिशत तक अधिक हो सकती है जिनके जवाबदेह जब रोगी की शाल्य चिकित्सा हुई हो।

पोषण संबंधी आवश्यकताएँ निम्न प्रकार हैं-

1. कैलोरी- 25× शरीर भार (किलोग्राम में) + 40× शरीर की सतह क्षेत्र का प्रतिशत
2. प्रोटीन- 2-4 ग्राम प्रति किलोग्राम शारीरिक भार प्रति दिन।
3. आहार में पूर्ण पोषण सम्मिलित करना चाहिए, विशेष रूप से विटामिन सी तथा जस्ता (Zinc)
4. सीम के पोटेशियम स्तर की नियमित जाँच करनी चाहिए अन्यथा रक्त में पोटेशियम के स्तर में गिरावट हो जाती है जिससे हाइपोकेलेमिया (Hypokalemia) कहते हैं। आहार में कैलिशियम का सेवन अधिक होना चाहिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 306
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

जलने पर आहार संबंधी उपयोगी सुझाव

• एंटीऑक्सिडेंट खाद्य पदार्थ जैसे ताजे फल तथा सब्जियाँ खानी चाहिए।
• परिष्कृत (refined) खाद्य पदार्थ जैसे ब्रेड, बिस्किट, पास्ता आदि का सेवन कम करना चाहिए।
• खाना पकाने में वनस्पति तेल का प्रयोग करना चाहिए।
• केक, बिस्किट जैसे प्रसंस्कृत वसीय खाद्य पदार्थों का सेवन कम या नहीं करना चाहिए।
• कैफीन, तम्बाकू और मादक पेयों से बचना चाहिए।
• प्रतिदिन 6-8 गिलास चना हुआ साफ पानी पीना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 1

1. एक शब्द में परिभाषित कीजिए।
   a. इस प्रक्रिया में हाइड्रोलाइस्ड प्रोटीन या एमिनो एसिड, डेक्स्ट्रोज (dextrose) तथा वसा इमल्सन (fat emulsion) इत्यादि रूप में परिरोध (peripheral) नसीमें द्वारा खिलाया जाता है।

b. यह एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति भोजन लेने के लिए तैयार नहीं होता जिसकारण वजन तेजी से गिर जाता है।

c. क्षतिअवस्था के इस चरण में शरीर में ऑक्सीजन की खपत कम हो जाती है, यूक्र्त के ऊंची भंडार के प्रयोग होने की वजह से रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है तथा ऊतकों में ऑक्सीजन की कमी की वजह से रक्त में लैक्टिक एसिड बढ़ जाता है।

d. जलने के इस वर्गीकरण में शरीर का 20-40 प्रतिशत सतह क्षेत्र प्रभावित होता है। इसमें जलने का विस्तार त्वचा की दूसरी पत्ती तक हो जाता है जिस कारण लालिमा, दर्द तथा फफोले हो सकते हैं।
15.4 खाद्य एलर्जी (food Allergy)

खाद्य एलर्जी का अर्थ है किसी विशिष्ट खाद्य पदार्थ के सेवन के कारण शरीर की रोग प्रतिरोधक प्रणाली का अस्वाभाविक रूप से प्रतिक्रिया देना। सरल शब्दों में शरीर द्वारा किसी खाद्य के लिए असामान्य प्रतिक्रिया देने के कारण उत्पन्न असामान्य लक्षणों को “खाद्य एलर्जी या फूड एलर्जी” के रूप में जाना जाता है। हालांकि, खाद्य से एलर्जी सदैव गम्भीर नहीं होती है परंतु कुछ मामलों में यह गम्भीर रूप धारण कर सकती है।

खाद्य एलर्जी के प्रकार

खाद्य एलर्जी के मुख्य रूप से तीन प्रकार हैं जो एलर्जी के लक्षणों तथा उसके उद्देश्य पर निर्भर करते हैं।

• आईजीई मीडिएटेड फूड एलर्जी

यह खाद्य एलर्जी का सहारापूर्वक सामान्य प्रकार है। इस प्रकार की एलर्जी में शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली “इम्युनोलोजिक एल” (IgE) नामक एंटीबॉडीओं का निर्माण करते हुए लगाता है। इसके लक्षण खाद्य पदार्थ के अंतर्गत के कुछ सेंडिंग या मिटिंग के भीतर उत्पन्न होने लगते हैं। इस प्रकार की एलर्जी में तीनातीराहिता (anaphylaxis) होना का खतरा रहता है जिसमें शरीर अत्यधिक संवेदनशील हो जाता है।

• नॉन-आईजीई मीडिएटेड फूड एलर्जी

इस प्रकार की एलर्जी प्रतिरक्षा प्रणाली में उपस्थित अन्य कोशिकाओं के कारण होती है। इस एलर्जी में लक्षण विकसित होने में काफी समय लगता है इसलिए इसका उपचार कठिन होता है।

• मिश्रित खाद्य एलर्जी

इस प्रकार की एलर्जी में उपरोक्त दोनों प्रकार की एलर्जी के लक्षण विकसित होते हैं।

खाद्य एलर्जी के लक्षण

खाद्य एलर्जी मुख्य रूप से लवचा, पाचन प्रणाली, श्वसन तंत्र एवं हृदय को प्रभावित करती है। खाद्य एलर्जी के मुख्य लक्षण निम्न हैं:

• शरीर में छोटे-छोटे दाने और लाल चक्रें होना।

• होटलों एवं जीयन में सूजन, बोतल एवं सांस लेने में परेशानी होना।
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

- नम्ब धीमी होना।
- चेहरा सूजना।
- वर्मन एवं अतिसार, पेट में घूम होना।
- रक्तचाप कम होना, सीने में दर्द होना।
- आँखों का लाल होना तथा उनके आसपास सूजन तथा आँखों से पानी आना।
- शरीर में खुजली होना विशेषकर गले, मुंह और कान में।
- चक्कर आना, उलझन होना, खराब की स्थिति उपनन होना।
- नाक बहना, गले में घरघराहट एवं खाँसी होना।

तीजाधिकृता (anaphylaxis) खाद्य एलजर्जी का बहुत गम्भीर रूप होता है जिसमें एलजर्जी के कारण व्यक्ति सांस नहीं लेता, पानी तथा उसे आघात की स्थिति में चला जाता है। इस स्थिति में व्यक्ति के शरीर के विभिन्न अंगों एक साथ प्रभावित होते हैं।

खाद्य एलजर्जी के कारण एवं जोखिम कारक

कभी-कभी हमारी प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, जब हमारे शरीर में विशिष्ट प्रोटीन को हानिकारक होता है और उसे उसे हेतु प्रतिक्रिया लगती है। यह खाद्य जब दोबारा प्रतिक्रियाएं होती है, जो शरीर में प्रतिक्रिया करता है जिसके कारण शरीर में सत्रण उपनन लगते हैं। इन पदार्थों के लक्षण उपनन करते हैं। इन पदार्थों द्वारा रक्त वाहिनियाँ चौड़ी होने लगती हैं जिससे त्वचा में सूजन आ जाती है।

जोखिम कारक

- आनुवांशिक: खाद्य एलजर्जी की समस्या आनुवांशिक हो सकती है।
- अन्य एलजर्जी: यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य एलजर्जी, जैसे अस्थमा या एटॉपिक त्वचाशोध (atopic dermatitis) से प्रभावित है तो उसके खाद्य एलजर्जी होने की सम्भावना अधिक होती है।
- आहार: आहार में फलें एवं सब्जियाँ का कम सेवन खाद्य एलजर्जी के लिए जोखिम कारक हो सकता है क्योंकि फल एवं सब्जियाँ एटॉपिक इक्सिस्ट्रेस्स से भरपूर होती हैं जो खाद्य एलजर्जी के खतरे
नैदािनक एवं उपचारात्मक पोषण

को कम करने में मदद करते हैं। इसके अलावा आहार में विटामिन डी की कमी होने पर भी खाद्य एलर्जी का खतरा बढ़ जाता है।

खाद्य एलर्जी का परीक्षण

खाद्य एलर्जी होने की स्थिति में डॉक्टर से परामर्श आवश्यक रूप से किया जाना चाहिए। डॉक्टर लक्षणों, आहारी सेवा और कुछ परीक्षणों के माध्यम से एलर्जी की स्थिति की जाँच कर सकते हैं और तदनुसार उपचार प्रस्तावित कर सकते हैं।

खाद्य एलर्जी के परीक्षण हेतु कुछ टेस्ट:

स्कन प्रिक टेस्ट: इस टेस्ट में संडिग्ह खाद्य पदार्थ को त्वचा के नीचे सुई के माध्यम से प्रविष्ट किया जाता है। यदि त्वचा में एलर्जी के लक्षण उत्पन्न होते हैं तो अमूंक खाद्य पदार्थ से एलर्जी की पुष्टि हो जाती है।

रक्त का परीक्षण: इस परीक्षण में रक्त में एलर्जी के एंटीबॉडी की जाँच की जाती है जिसके विरुद्ध प्रतिक्षा प्रणाली प्रतिक्रिया करती है।

खाद्य उपनूर्जन: इस परीक्षण विषय में संडिग्ह भोज्य पदार्थ को व्यक्ति के आहार से कुछ समय के लिए हटा दिया जाता है। फिर कुछ समय बाद वही खाद्य दोबारा खाया जाता है जिससे एलर्जी के लक्षणों का पता लगाया जा सकता है।

खाद्य एलर्जी का उपचार

खाद्य एलर्जी से बचने का प्रथम उपचार ऐसे खाद्य पदार्थ से बचना है जिससे एलर्जी उत्पन्न हो रही हो। हालांकि दवाओं के माध्यम से भी एलर्जी का उपचार किया जा सकता है।

एंटीहाइमन दवाएं: ये दवाएं जैल, तरल या गोलियाँ के रूप में मिलती हैं और ये एलर्जी के कम से मध्यम लक्षणों के लिए प्रभावी होती हैं।

एपिनेफ्रिन: ये दवाएं विशेषकर तीव्रग्राहिता (anaphylaxis) की स्थिति में काम आती हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. रक्त स्थान भरिए।
   a. खाद्य एलर्जी का सर्वाधिक सामान्य प्रकार ………………………………… है।
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

b. .......................... खाद्य एल्तर्ज खाद्य एल्तर्ज का बहुत गम्भीर रूप होता है जिसमें एल्तर्ज के कारण व्यक्ति सौंिस नहीं ले पाता तथा शरीर आयाम की स्थिति में चला जाता है।

c. .......................... में संदिग्ध खाद्य पदार्थ को त्वचा के नीचे सुई के माध्यम से प्रविष्ट किया जाता है।

d. एल्तर्ज के कम से मध्यम लक्षणों के लिए ............................. दवाओं का प्रयोग किया जाता है।

15.5 सारांश
प्रस्तुत इकाई में हमने शर्ल्चिक्षात्मक व्यक्ति अवस्थाओं, जलने तथा खाद्य एल्तर्ज की स्थिति में पोषण प्रवन्ध पर चर्चा की। शर्ल्चिक्षात्मक व्यक्ति अवस्था में पूर्व और पश्चात दोनों ही अवस्था में आहार नियोजन महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति अवस्थाओं में मौखिक एवं नली द्वारा आहार दिया जा सकता है जो व्यक्ति की क्षति अवस्था पर निर्भर करता है। जलने की स्थिति में आहार नियोजन जलने की डिग्री पर निर्भर करता है। जलने पर आहार में ऊषीकों के पुनर्निर्माण हेतु प्रोटीन की ऊज्ज्वल मात्रा देनी चाहिए। खाद्य एल्तर्ज के विभिन्न लक्षण हैं जो शरीर के विभिन्न अंगों की प्रतिक्रिया के अनुसार होते हैं। खाद्य एल्तर्ज की स्थिति में उपचार हेतु डॉक्टर से परामर्श अत्यंत आवश्यक है।

15.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. एक शब्द में परिभाषित कीजिए।
   a. अंतः तरीके से खिलाना (Intravenous Feeding)
   b. ऐनोरेक्सिया नरवोसा (Anorexia Nervosa)
   c. तीत्र चरण अथवा भाटा चरण
   d. द्वितीय डिग्री

अभ्यास प्रश्न 2

1. रित स्थान भरिए।
   a. आईजीई मीडिएटेड फूड एल्तर्ज

उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय
नैदानिक एवं उपचारात्मक पोषण

b. तीनग्राहिता (anaphylaxis)
c. स्किन प्रिक टेस्ट
d. एंटीहिस्टामिन दवाएं

15.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शल्य चिकित्सा पूर्व एवं पश्चात् पोषण संबंधी देखभाल की चर्चा कीजिए।
2. विभिन्न क्षेत्र अवस्थाओं में आहार नियोजन को समझाइए।
3. जलने का वर्गीकरण बताइए। जलने पर पोषण संबंधी आवश्यकताओं की व्याख्या कीजिए।
4. खबर्डों क्या हैं? इसके प्रकारों तथा परीक्षण विधियों पर प्रकाश डालिए।